# fo|k Hkkjrh inhfidk

vkf'ou ls ekxl'kh"k] foØeh lor 2078] ;xkCn 5123

vDVcj ls fnlEcj 2021 o"k 42 vd 1 eY;% ₹35@&

हमारा कार्य सर्वस्पर्शी और सर्वसमावेशी हो | अग्नि तत्त्व : ऊर्जा का आधार | महर्षि अरविन्द का दर्शन | भारतीय शिक्षा का प्रतिमान

**Samskriti Foundation | Hybrid Learning | Why Skills**

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की साधारण सभा बैठक - जोधपुर में मंचस्थ वरिष्ठ पदाधिकारी वृन्द

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की साधारण सभा बैठक - जोधपुर में भाग लेते हुए अधिकारी वृन्द

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की साधारण सभा बैठक जोधपुर का सुन्दर दृश्य

# विद्या भारती प्रदीपिका

¼fo|k Hkkjrh vf[ky Hkkjrh; f'k{kk lLFkku dh =ekfld if=dk½

अक्टूबर से दिसंबर 2021 आश्विन से मार्गशीर्ष, विक्रम संवत् -2078, युगाब्द - 5123 मूल्य 35/-रु.

**मार्गदर्शक**
डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा
श्री डी. रामकृष्ण राव
श्री दिलीप बेतकेकर
डॉ. रमा मिश्रा
डॉ. रवीन्द्र कान्हेरे

**सम्पादक**
डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी

**सम्पादक मण्डल**
श्री राजेन्द्र सिंह बघेल
डॉ. अरुण मिश्र
श्री वासुदेव प्रजापति
डॉ. पवन शर्मा

**संपादन सहायक**
कौशलेश कुमार उपाध्याय

**आवरण सज्जा**
मारिय्याप्पा मार्टिन

**प्रकाशन कार्यालय**
प्रज्ञा सदन, गो. ला. त्रे. सरस्वती बाल मंदिर परिसर, महात्मा गांधी मार्ग, नेहरू नगर, नई दिल्ली -110065

फोन नं. 011-29840126,29840013
ईमेल-vbpradeepika@gmail.com

**सदस्यता शुल्क**
वार्षिक शुल्क- 120/-रु.
दस वर्षीय शुल्क- 800/-रु. शुल्क राशि 'विद्या भारती प्रदीपिका' के बचत खाता क्र. 1130307980 सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया, IFSC-CBIN0283940 ब्रांच नेहरू नगर, नई दिल्ली में जमा कर, पत्र द्वारा कार्यालय को सूचित करें।

**मुद्रण-** जेनिसिस प्रिंटर, सी 74, ओखला डस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110020

## vuØef.kdk


| | | |
|---|---|---|
| सम्पादकीय | डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी | 4 |
| दिशाबोध | डॉ. कृष्णगोपाल जी | 5 |
| भारतीय शिक्षा के प्रतिमान | पंडित मदनमोहन मालवीय | 11 |
| अग्नि तत्त्व : सृष्टि की ऊर्जा का आधार | डॉ. उमेशचन्द वर्मा | 16 |
| रामानुजाचार्य और उनका विशिष्टाद्वैत वेदान्त | डॉ. गिरिधर गोपाल शर्मा | 19 |
| श्रीमद्भगवद्गीता : भक्तिसूत्र | डॉ. धीरेन्द्र झा | 22 |
| गीता रहस्य : एक अद्भुत कृति | डॉ. आशीष मुकुंद पौराणिक | 25 |
| श्री अरविन्द : देशभक्ति एवं दर्शन | डॉ. अर्चना शर्मा | 28 |
| सामाजिक दायित्वबोध | राजकुमार भाटिया | 32 |
| पेरना : एक घुमन्तू समाज | श्री शैलेन्द्र विक्रम | 33 |
| छात्र में ज्ञान पाने की लौ जगाएँ | श्री कमलकुमार | 35 |
| सुदृढ़ कुटुम्ब व्यवस्था, सामाजिक समरसता व पर्यावरण | श्री जे. एम. काशीपति | 38 |
| सिंधी साहित्य में रामायण | प्रो० रविप्रकाश टेकचन्दानी | 39 |
| पर्यावरण शिक्षा : राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 | श्री संजय स्वामी | 42 |
| अंतिम कक्षा (कहानी) | आल्फोंस दोदे | 44 |
| विज्ञानमय भारत-अतीत, वर्तमान और भविष्य | श्री रवि कुमार | 46 |
| एक संवाद खिलते फूलों से | श्री कृष्णकुमार अस्थाना | 48 |
| Samskruti Foundation | Dr. Umamaheshwar Rao | 50 |
| Hybrid learning –Schools Reopening During post Pandemic period | Shri D.Ramkrishna Rao | 53 |
| Why Skills | Dr. Madhuved | 55 |
| There stands a Towering Tower ! | Shri Ratanchand Saradana | 57 |
| How to defeat dragon | Shri Rajendra kumar Shastri | 58 |
| Our Ancient Medical System | | 60 |


प्रदीपिका में प्रकाशित विचार रचनाकारों के हैं, पत्रिका की सहमति आवश्यक नहीं है।

आवरण पृष्ठ - आंध्र प्रदेश स्थित सिंहाचलम् (निकट विशाखापट्टनम्) का वाराह नृसिंह स्वामी मंदिर - सौजन्य -

https://commons.wikimedia.org/wiki/file/simhachalam-temple-2big.jpg.

# सम्पादकीय

परम्पराएँ महत्त्वपूर्ण होती हैं। किसी भी समाज, राष्ट्र के श्रेष्ठ विचारों, व्यवहारों को वे पीढ़ी दर पीढ़ी सौंपती चलती हैं, उन्हें सुरक्षित करती हैं। हर पीढ़ी अपने देशकाल के अनुरूप वरेण्य को उसमें जोड़ती और त्याज्य को छोड़ती है। जोड़ने और छोड़ने की यह प्रक्रिया जब रुकती है तो परंपरा-प्रवाह मंद पड़ता है, रूढ़ियों का प्राधान्य होता जाता है। रूढ़ियाँ अंधविश्वासों को पैदा करती हैं, रूढ़ियाँ विचार विरोधी होती हैं।

ऐसा जब-जब हुआ, कोई न कोई क्रान्तिदर्शी उठ खड़ा हुआ और आमूल-चूल परिवर्तन भी हुआ। विचार के क्षेत्र, व्यवहार के क्षेत्र में, समाज में यह हर संक्रान्ति काल में दृष्टिगोचर हुआ। मूल विचारों को लेकिन सभी अपनाए रहे। तत्त्वज्ञान वही रहा, जो परिवर्तनीय संसार में अपरिवर्तनीय बना रहा। वह ही शाश्वत, सनातन कहलाया, उसे ही मानवीय मूल्य कहा गया। पूरी परंपरा ने, सभी महापुरुष इसे अपना जीवन व्यवहार बनाए रखते हुए अपना-अपना संघर्ष करते हुए इस परंपरा-प्रवाह को बंधनमुक्त करते रहे, यह फिर-फिर अविरल होता रहा।

इस विचार किंवा संस्कृति की अभिव्यक्ति दर्शन, साहित्य, कला, विज्ञान आदि के माध्यम से सुष्ठु रूप में होती है। यह गुरु-परंपरा से विद्या साधना के द्वारा आगे बढ़ती है। गुरुकुल अथवा विद्यालयों में यह साधना लंबे काल तक चलती रही। इसका अपना एक स्वरूप था, एक पद्धति थी। इस स्वरूप को विकृत करने और पद्धति को भ्रष्ट करने का सर्वाधिक सफल प्रयास अब से लगभग पौने दो सौ, दो सौ वर्ष पूर्व अंग्रेजों ने किया। इसका श्रेय लार्ड मैकाले को मिला। इसने भारत को भारत और भारतीय को भारतीय नहीं रहने दिया। भारत 'इंडिया' हो गया, भारतीय 'इंडियन' हुए।

स्वतंत्रतापूर्व एवं पश्चात् भी अनेक महानुभावों और उनके द्वारा बनाए गए संगठन, संस्थाओं ने भारतीय शिक्षा परंपरा के अनुरूप चिंतन और परंपरा को अनिरुद्ध बनाए रखने के पर्याप्त सफल प्रयास किए। लेकिन सबकी अपनी मर्यादाएँ भी थीं। शासन का मूल स्वर अंग्रेजी शिक्षा पद्धति के समर्थन का ही रहा। उसे ज्यों का त्यों बनाए रखने अथवा अधिक ठीक होगा कि अपने स्वार्थ के लिए और अधिक विकृत करने का कुटिल प्रयत्न किया गया। सरकार द्वारा शिक्षा के लिए बनाई गई विभिन्न समितियों एवं आयोगों की 'रिपोर्ट्स' को धूल खाने के लिए छोड़ दिया गया, जिनमें शिक्षा को भारतोन्मुखी बनाने की संस्तुति थी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लोक के विस्तृत परामर्श पर आधृत तो है ही, इसका फलक भी बहुत व्यापक है। इसमें भारतीय चिंतन के अनुरूप शिक्षा-व्यवस्था, शिक्षा जीवन और जीविका दोनों के लिए हो, इसका पर्याप्त समावेश है। अंतर्विरोधों को दूर कर इसे व्यवहार-जगत् में कैसे लागू किया जाए, यह विचारपूर्वक परिश्रम करते हुए, कम से कम त्रुटियों के साथ लागू किया जाय, यह शिक्षा जगत् के अनुभवी मान्य विचारकों और शिक्षा क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्तियों और संस्थाओं का है। मूल सूत्र हाथ से न छोड़ते हुए आज की युगीन परिस्थितियों और भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था और इसका क्रियान्वयन भारत और विश्व में भारत की आगामी भूमिका को देखते हुए विश्व के भावी स्वरूप का निर्धारण करेगा। इसमें कोई संदेह नहीं, विद्या भारती अपने हिस्से का कार्य मनोयोग पूर्वक कर रही है।

भारत को यदि भारत रहना है तो भारतीय ज्ञान परंपरा को, इसमें अपना आज का बहुत कुछ और भारतीयेतर जो कुछ अच्छा है, जोड़ते हुए अपनाना होगा। यह अमृत जो हमें मिलेगा, उसे सम्पूर्ण जगत् को विनम्रतापूर्वक बाँटते हुए प्रसन्न भाव से ईश्वर प्रदत्त इस दायित्व को पूरा करने की दिशा में आगे बढ़ना होगा। अपनी आंतरिक और बाह्य चुनौतियों का अभय होकर उत्तर देने वाला अपनी अष्टभुजाओं में विविध आयुधों को धारण कर शक्तिसम्पन्न होकर संसार में स्वाभिमानपूर्वक मस्तक ऊँचा कर खड़ी हो भारत माता। पृथ्वी का मानदंड इव भारत, अमृतत्व को प्राप्त करेगा ही, इसमें किंचिदपि संदेह नहीं।

विद्या भारती दक्षिण क्षेत्र के अध्यक्ष मा. टी. चक्रवर्ती जी के निधन का शोकाकुल करने वाला समाचार अत्यंत दुःखद है। जोधपुर में सम्पन्न साधारण सभा में उनसे भेंट और बातचीत हुई थी। वे प्रसन्न थे। उनके यशःशेष हो जाने पर उनका स्मरण सदा बना रहेगा। उन्हें प्रणाम।

भारत माता के यशस्वी सपूत सीडीएस जनरल विपिन रावत, उनकी धर्मपत्नी एवं ग्यारह सेनाधिकारियों का आकस्मिक वायु दुर्घटना में निधन अत्यंत पीड़ादायी है। देश को उन पर हमेशा गर्व रहेगा। उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि।

उक्त दुर्घटना में गम्भीर रूप से आहत हुए ग्रुप कैप्टन वरुण सिंह शीघ्र ही पूर्णतः स्वास्थ्य लाभ करें, ऐसी परमपिता से प्रार्थना ..

***डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी***

# lekt e viuk dk; loLi'kh vkj lolekos'kh gk

## दिशाबोध

*डॉ. कृष्णगोपाल जी*
सह सरकार्यवाह,
राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

गत लगभग 20 माह में पूरे विश्व के साथ अपने देश में कोरोना महामारी के समय बड़ी जनहानि हुई है। विद्या भारती के हमारे सैकड़ों अभिभावक, अनेक आचार्य, प्रधानाचार्य, समितियों के सदस्य अब हमारे बीच नहीं रहे इसलिए उन सभी के प्रति हम विनम्रतापूर्वक श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं, उनके प्रति सम्वेदना रखते हैं। उनके परिवारों का ध्यान, जैसा भी हो सकता है, रखने का प्रयास करना है। एक ओर महामारी चली, दूसरी ओर विद्या भारती संगठन के देश के हजारों कार्यकर्ता अपने पास जो भी संसाधन रहे, उन संसाधनों से लोगों की सहायता करते रहे। जहाँ भी, जितना भी लोगों का सामर्थ्य था वे अपने सामर्थ्य के साथ बाहर आ गए। भोजन हो, औषधि हो, पीने का पानी हो, पहनने की चप्पल हो, किसी भी प्रकार से सहायता करने का प्रयत्न देश के करोड़ों लोगों ने किया। यह हमारे देश की अन्तर भावना को व्यक्त करता है। सारे विश्व में देखने में ऐसा दूसरा उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलता। यह हमारी एक मौलिक विशेषता हैं।

अध्यात्म की भावनाएँ दिखती नहीं पर भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होती हैं। जैसे बिजली का प्रत्यक्ष स्वरूप दिखता नहीं है लेकिन जब बल्ब में, पंखे में बिजली आती है तो बल्ब प्रकाशित होता है, पंखा चलने लगता है। ठीक उसी प्रकार अध्यात्म हृदय की बात है वह दिखता नहीं है। लेकिन जब ऐसी परिस्थिति आती है, कोई घटना घटती है, जब कोई प्रसंग होता है तो मनुष्य के आचरण व व्यवहार में वह व्यक्त होता है। सारे विश्व ने देखा कि भारत के करोड़ों लोग किस प्रकार से संकट में फँसे हुए लोगों की सहायता करने के लिए आगे आए। वे गरीब थे, वे विपन्न थे तो भी आगे आए। इसलिए कोरोना काल कठिन था, इसने कष्ट भी दिया, लाखों लोगों को हमसे छीन भी लिया परन्तु भारत की आध्यात्मिक भावनाओं के प्रकटीकरण का एक अवसर भी बना। सारे विश्व ने बड़े धैर्य से, शान्ति से, आश्चर्यजनक रूप से भारत के लोगों के आध्यात्मिक व्यवहार को देखा। एक अंतर स्पष्ट हुआ जो बड़े-बड़े सम्पन्न लोग थे दुनिया में, सामने नहीं आए पर भारत के विपन्न से विपन्न और गरीब से गरीब लोगों ने सहायता के लिए अपने संसाधनों के साथ अपने को प्रस्तुत किया। क्योंकि उनके मन में सेवा का भाव था। यही अध्यात्म है। दिल्ली के गाड़िया लोहार जिन्हें खाद्य वस्तु का प्रतिदिन जुटाव करना पड़ता है वे भी सहायता करने के लिए तत्पर दिखे। कुछ कार्यकर्ता खाद्य वस्तुओं की किट को लेकर उनके पास गए तो उन्होंने कहा कि भाईसाहब, आप लोग कल भी आइएगा। कार्यकर्ता दूसरे दिन कुछ और किट (जिसमें आटा, चावल, दाल, मसाले, सरसों का तेल, बच्चों के लिए सूखा दूध आदि) लेकर गए तो गाड़िया समाज के लोगों ने पूछा कि सेवा भारती के लोग कहाँ हैं? उन्होंने कहा कि भाई साहेब हमने अपनी बस्ती के लोगों से एकत्रित कर 51,000 रुपये आप को देने के बुलाया है, कुछ लेने के लिए नहीं। उनके साहस और श्रद्ध ा को देखिए उनके पास उस समय काम भी नहीं था, गरीब इतने हैं कि वे सड़क के किनारे टेंट लगाते हैं और उसी में रहते हैं पर मन में कहीं न कहीं सेवा का भाव है। यही तो है आध्यात्मिक भाव।

हम जानते हैं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कर्मठ कार्यकर्ताओं की इच्छा शक्ति के बल पर शिक्षा जगत् में एक स्वाभाविक प्रयोग हुआ और धीरे-धीरे इसने विद्या भारती के नाम से विस्तार पाया।

संघ तो अपनी शाखाओं के माध्यम से कार्यकर्ता निर्माण का कार्य करता है। अतः कार्यकर्ता समाज के कार्य को करने के लिए अपने स्वयं से प्रस्तुत हो जाता है, बदले में कुछ नहीं माँगता है, जीवन में प्रामाणिकता रखता है, समाज के साथ प्रेम व्यवहार रखता है, मातृभूमि के प्रति भक्ति का भाव रखता है। 10, 20,

50 लोगों के साथ मिलकर काम कर सकते हैं, ऐसे गुणवान् लोगों के निर्माण करने का कार्य संघ करता है। ये कार्य निरन्तर जारी है। संघ के स्वयंसेवक समाज के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में जाकर वहाँ की ध्वस्त हो गई व्यवस्थाओं के पुनर्निर्माण के लिए कार्य करते हैं।

शिक्षा जगत् भी ऐसा ही एक क्षेत्र है। यह एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। बालक के जीवन का निर्माण कैसे हो रहा है। उसको आगे पचास-साठ-सत्तर वर्ष का जीवन जीना है। उस छोटे से बालक को शिक्षा के साथ-साथ कैसे देशभक्ति का पाठ पढ़ाया जाए, कैसे इस बालक के मन की गहराई को पढ़ा जाए, कैसे इस बालक के संस्कारों को सुन्दर बनाया जाए। इस भाव को मन में रखकर संघ के कुछ शिक्षाप्रेमी कार्यकर्ताओं ने एक अनोखा प्रयोग किया। शिक्षा द्वारा व्यक्ति लौकिक जगत् में उन्नति करे यह ठीक है लेकिन इस हृदय की गहराई पर प्रभाव ऐसा हो कि उसके मन में उदारता का भाव जगे। वह परस्पर प्रेम करना जाने, दूसरों के लिए सहयोगी भाव में खड़ा होना जाने। ये दोनों बातें साथ-साथ चलती हैं। भौतिक उन्नति भी हो पर आध्यात्मिक भाव जागरण योग्य रीति से हो ताकि हृदय की गहराई भी बढ़े। इन दोनों का समन्वय हो जाए, ऐसी शिक्षा होनी चाहिए।

विद्या भारती ने अपना ध्येय वाक्य माना 'सा विद्या या विमुक्तये' ऐसी विद्या जो हमें मुक्त कर दे। मुक्त किसे करेगा, मुक्त करेगा अंदर का भाव। इस लौकिक जगत् में जो ज्ञान प्राप्त करता है, उन्नति करता है लेकिन धीरे-धीरे माया और मोह से अलग होता रहता है। यही दो आयाम हैं, एक भौतिक जगत् में उन्नति करना और दूसरा आध्यात्मिक जगत् में विमुक्ति की ओर बढ़ना। ज्यों-ज्यों धन आया और ज्यों-ज्यों शिक्षा आई, ज्यों-ज्यों योग्यता बढ़ी, त्यों-त्यों क्षमता बढ़ी, मुक्ति भी साथ-साथ चलती गई। मोह गया, माया गई, तृष्णा भी गई, ऐषणा भी गई तो मुक्ति आई। यदि मन में मुक्ति का भाव नहीं आया तो 'सा विद्या या विमुक्तये' यह विद्या का उद्देश्य ही नहीं रहा। इसलिए मौलिक रूप में जो अपना वाक्य है, उसे सदैव ध्यान में रखना है। व्याख्या के साथ विद्या, ज्ञान वह है, जो हमें मुक्ति की ओर ले जाए, बंधन की ओर नहीं। यह जो हम रुद्राभिषेक करते हैं 'ऊर्वारुकमिव बंधनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।' यानि हे शिव मुझको मुक्त कर दो। जैसे वो कद्दू का फल होता है, पेड़ से लगा रहता है। जो जकड़ कर पौधे को रखा है परन्तु पकने पर एक समय ऐसा आता है कि वह टूट कर अपने आप अलग होकर धरती पर गिर जाता है। उस कद्दू की फल तरह ही जो पौधे से लगा रहता पर बंधन से मुक्त हो जाता है। हे प्रभो ! मुझे भी उसी प्रकार मुक्त कर दो। जिस प्रकार रुद्राभिषेक के मंत्र में मृत्यु से मोक्ष की ओर, मुक्त होने की प्रार्थना है उसी प्रकार हमने विद्या भारती के लक्ष्य में बोला है 'सा विद्या या विमुक्तये।' मुझको अमरत्व प्राप्त हो जाए ऐसी शिक्षा केवल कोरे ग्रंथों में नहीं है, ग्रंथालयों में नहीं है पर ग्रंथालयों के साथ दूसरे आयामों की उन्नति सामान्तर होती चली गई तो मनुष्य का सम्यक् विकास होगा। उसकी भावनाओं का जितना विकास होगा, उसके मन का विकास होगा, हृदय की गहराइयों का विकास होगा, वह विनम्र होगा, शीलसम्पन्न होगा, जितना ज्ञानवान् होगा उतना ही विरक्त होगा। वह मुक्त हो जाए ऐसी शिक्षा का सुदीर्घ इतिहास, ऐसी शिक्षा की व्यवस्था हमारे भारत में थी। यह हमको ध्यान में रहना चाहिए।

हमने कभी भी लौकिक शिक्षा को ध्येय नहीं माना। यद्यपि लौकिक शिक्षा में भी विश्व में श्रेष्ठतम उन्नति करने वाले हम लोग रहे। जब विश्व कपड़ा भी बनाना और पहनना नहीं जानता था तब भारत से कपड़े का निर्यात होता था। हम जानते हैं कि दुनिया में जब 'मेटलर्जी' की जानकारी नहीं थी तब हम सैकड़ों टन का स्तम्भ एक साथ 'कास्टिंग' किया करते थे, हमारे यहाँ 'एलोय' बनता था। हम व्याकरण के नए-नए सूत्र दुनिया को देते थे। हमारे यहाँ अनेक बड़े-बड़े विश्वविद्यालय चलते थे, छोटे-छोटे गुरुकुल और पाठशालाएँ भी चलती थीं। शिक्षा के विषयों की विविधता थी। कोई कृषि, कोई धातु के बारे में पढ़ता था तो कोई वेद के बारे में और कोई व्याकरण के बारे में ज्ञान प्राप्त करता था। कोई वस्त्रों के निर्माण तो कोई नौका बनाने और कोई उसके संचालन के बारे में। हजारों प्रकार के छोटे-छोटे केन्द्र और बड़े से बड़े महाविद्यालय, विश्वविद्यालय इस देश में थे। इसको दुनिया जानती है।

इन गुरुकुल, पाठशाला, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय में एक मौलिक बात थी, नैतिकता। बात यह थी कि शिक्षा एक ओर स्वतंत्र थी, किसी राजतंत्र के, मठ-मन्दिर के नियंत्रण में नहीं थी। जिस प्रकार पश्चिम में शिक्षा चर्च के नियंत्रण में थी, वैसी स्थिति यहाँ नहीं थी। हमारे यहाँ की शिक्षा स्वतंत्र और विद्वानों के हाथ में थी और सर्वथा निःशुल्क थी। हजार वर्ष तक शिक्षा के नाम पर कभी विद्यार्थी ने एक पैसा तक नहीं दिया। अंग्रेजों ने आकर शुल्क लगाया। व्यवस्थाएँ ध्वस्त हो गईं। बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों के खंडहर ही बचे रहे। बड़े-बड़े पुस्तकालयों, ग्रंथालयों को आग के हवाले कर दिया गया। आचार्य, महाचार्य, कुलपति सब पद समाप्त हो गए। दो-तीन हजार वर्षों की साधना व संघर्ष बेकार हो गया।

एक हजार वर्ष की पराधीनता का काल संकटकाल था। नई व्यवस्था के निर्माण की चुनौती हमारे सामने है। विद्या भारती का संकल्प यही है कि अपने महान् प्राचीन गौरवमय आदर्शों को मन में स्थापित करते हुए आज के युग के अनुकूल जो पद्धति है, उस प्रकार की शिक्षा देते हुए लाखों-करोड़ों युवकों को हम खड़ा कर देंगे, आचार्यों को खड़ा कर देंगे और धीरे-धीरे इस वर्तमान परिदृश्य को हम बदल देंगे। इस निमित्त जो वर्तमान में 12-13 हजार विद्यालय, 34-35 लाख विद्यार्थी, लाख-सवा लाख आचार्य, अनेक प्रधानाचार्य हमारे पास हैं तो पिछले साठ-सत्तर वर्ष के अन्दर एक बड़ा स्ट्रक्चर, एक बड़ा आयाम जो

हमने खड़ा किया है यह गर्व करने वाला है। इतना बड़ा गैर सरकारी विस्तृत क्षेत्र में, अपने देश में चलने वाले इस संगठन के अलावा दुनिया के किसी दूसरे देश में देखने में नहीं आता है। इतनी बड़ी संख्या में विद्यार्थी, इतनी बड़ी संख्या में आचार्य, उनके प्रशिक्षण का तंत्र खड़ा करना अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि तो है ही। आज हम एक स्तर पर तो आ ही गए हैं।

लेकिन कोरोना काल एकदम ऐसा आया कि हमारी गतिविधियाँ सारी ठप्प हो गईं। घर से निकलना मुश्किल हो गया, महीनों घर के अंदर बंद हो गए। यात्रा करना बंद हो गया।

लम्बे समय के बाद हम इतनी बड़ी संख्या में एकत्रित हुए हैं इन सारी असुविधाओं के बावजूद हम फिर से काम में जुटेंगे तो पहली बात यह है कि हम अपने काम की पूर्व की स्थिति में आ जाएँ, यह भी बात सच है कि ऐसे कठिनाई के काल में विद्या भारती अपने पुराने विद्यार्थी, अभिभावक, कार्यसमिति के सदस्य, इन सबने इस संकट काल में बड़ा कार्य किया। कठिनाई का काल था, पहाड़ों पर विद्यालय वहाँ के आचार्य व कर्मचारी, उनको हम वेतन कैसे दें, विद्यार्थी भी नहीं कक्षा में और विद्यार्थियों के अभिभावकों के काम भी प्रभावित थे, वे कमाई से दूर थे, उनकी नौकरियाँ नहीं थीं एक बहुत बड़ा संकट था, जैसे-तैसे करके हमारे पूर्व छात्र, समिति के लोग, अभिभावकगण, सभी ने सहयोग किया और हम धीरे-धीरे उस रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं और पहली चुनौती हमारे लिए यही होगी कि ये सारी सामूहिक शक्ति एक साथ खड़ी होकर, ताकत के साथ लगकर हम अपने कोराना काल के पूर्व की स्थिति में जल्दी आ जाएँ तो फिर हम आगे बढ़ने का विचार करेंगे।

आज आप लोगों ने एक चर्चा में विचार किया है कि आगामी तीन-चार वर्षों में हमारी स्थिति कैसी होगी, देश में लगभग 6600 से अधिक ब्लॉक्स यानि खंड या प्रखंड हैं। अपना कार्य सर्वव्यापी हो जाए यानि प्रत्येक ब्लॉक में हो जाए, वहाँ अपना एक अच्छा विद्यालय प्रारम्भ हो जाए। हमको यह बताने में अच्छा लगता है कि आसाम के अधिकांश जिलों में हमारे विद्यालय मजबूत स्थिति हैं। इसके लिए हमारे कार्यकर्ताओं ने परिश्रम किया है। अरुणाचल में भी प्रत्येक जिले में जाने की कोशिश कर रहे हैं। मेघालय जैसे कठिन क्षेत्र में भी धीरे-धीरे ही क्यों न हो, बढ़ रहे हैं। नेपाल की सीमा से लगे सीमान्त ब्लॉक जो बिहार, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल की सीमा को स्पर्श कर रहे हैं, वहाँ भी विद्यालय चलने लगे हैं। ये बड़ा काम है हमारे विद्यालय बढ़ रहे हैं। देश की कोई दूसरी शिक्षण संस्था यह कल्पना भी नहीं कर सकती कि हम 6500 ब्लॉक्स में हैं। कल्पना कीजिए हमारे हजारों-हजार विद्यार्थी एक साथ इस प्रार्थना को बोलते हैं, 'या कुन्देन्दुतुषारहार धवला'। हम कल्पना करें उस सामूहिक आध्यात्मिक भाव को। हम जगावें इस राष्ट्र के सामूहिक आध्यात्मिक भाव को व्यक्त करने वाले मंत्र को, जिससे आध्यात्मिक एकता के स्वर का जागरण हो। इस देश की अन्तरभूत आत्मा की आवाज को, देश के साढ़े छः हजार ब्लॉक में एक साथ एक नहीं, दो नहीं, बल्कि हमारे हजारों-हजार विद्यार्थियों के द्वारा एक साथ सुनेंगे तो यह कार्य सर्वव्यापी कार्य की ओर धीरे-धीरे बढ़ चलेगा। आप लोगों ने इस कार्य को सर्वव्यापी बनाने के लिए योजना बनाई है। यह ठीक है कि अभी कोरोना काल है, लेकिन धीरे-धीरे चार-छः महीने के अंदर हम सामान्य स्थिति में जब आ जाएँगें और अच्छी प्रकार से हमारी योजना व्यवस्थित बन जाएगी तो देश के प्रत्येक ब्लॉक में हम लोग पहुँच जाएँगें। जहाँ अधिक हैं और अधिक आगे बढ़ेंगे।

दूसरा पहलू है सर्वव्यापी होने के साथ-साथ समाज के प्रत्येक वर्ग तक हम पहुँचे हैं क्या ?, समाज का एक बड़ा वर्ग ऐसा है जो सैकड़ों वर्षों से उपेक्षित रहा है। सैकड़ों वर्षों से उस वर्ग ने दुःख सहा है, कष्ट सहा है। हम इसके कारणों में नहीं जाएँगें, छोड़ दीजिए इसे, उन लोगों के द्वारा धनाभाव के कारण फीस नहीं देने पर भी, इस मानसिकता के साथ कि हमारे समाज का वंचित वर्ग है, हमें उनके बच्चों को शान्ति से, प्रेम से लाकर विद्यालयों में रखना है। उनकी शिक्षा की समुचित व्यवस्था का करने का कर्तव्य हमारा है।

दिल्ली में हमारे मालवीय मिशन के कार्यकर्ता जो काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र हैं, वहाँ पढ़े हैं, आज दिल्ली में कोई अच्छे पदों पर नौकरी में है, कोई व्यवसायी है, कोई व्यापारी है उन लोगों ने मिलकर तय किया कि दिल्ली में जो गाड़िया लोहार जिन इलाके में रहते हैं उन इलाकों में हम लोग शिक्षा की व्यवस्था करेंगे। उनके लिए हम शिक्षा के केन्द्र खोलेंगे। उन बस्तियों में इस प्रकार के केन्द्र चल रहे हैं। धीरे-धीरे उनके बच्चे पढ़ने लगे हैं। वर्तमान में देश के अनेक स्थानों पर जहाँ गाड़िया लोहार हैं वहाँ के बच्चे भी इन प्रकार के स्कूलों में आने लगे हैं। उनके लिए कोई फीस की व्यवस्था कर रहा है, कोई कापी-किताब की, तो कोई बस्ता और वेश की, कोई उनके लिए आटो लगा कर उनको विद्यालय पहुँचाने की व्यवस्था कर रहा है। उस समाज के लोग अभी इस लायक नहीं है कि वे अपने बच्चों को स्वतः अपने बल पर विद्यालय भेजें। तो उन लोगों ने तय किया कि हम सामूहिक शक्ति लगाकर उन तक जाएँगें और उनके बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करेंगे।

हमारा कर्तव्य है कि समाज के वंचित एवं सभी वर्गो का भी प्रतिनिधित्व हमारी समितियों में हो, कोई वर्ग हमसे दूर न हो। हमारे रचना के अंग बनें, हमारी चर्चा का अंग बनें, हमारे विचार करने के इस तरीके में शामिल हों। समाज का प्रत्येक वर्ग धीरे-धीरे हमारी समितियों में आने भी लगा हैं। मातृशक्ति का भी प्रतिनिधित्व हमारी समितियों हो, हमारी संरचना के अंग बने। हमारा कार्य सर्वस्पर्शी बने। यह जो योजना बनाने वाली टीम, प्लानिंग करने वाली जो टोली है उसमें समाज के प्रत्येक वर्ग का प्रतिनिधित्व होता रहे तो यह एक बड़ा कार्य हमलोग कर सकेंगे। एक ओर हमारी कार्य सर्वस्पर्शी तो दूसरी ओर

सर्वव्यापी भी हो। दोनों पहलुओं पर हमारा प्रयास रहेगा तो समाज के हर वर्ग को समग्रता के साथ लेकर चलना सम्भव हो पाएगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर आपने बहुत गम्भीरता से विचार किया है। साढ़े-पाँच छः वर्षों की बहुत मेहनत के बाद यह नीति आई। पहली बार सारे देश में इसके लिए बड़े स्तर पर कसरत हुई, लाखों के संख्या में सुझाव आए, जितना हो सकता था, उतना सँजोया, समावेश किया, इसमें लगाया है। समाज के हर वर्ग को सम्बोधित करने की कोशिश की। शिक्षा के स्वरूप में हम कैसे आमूल-चूल बदलाव कर सकते हैं, यह प्रयत्न हो रहा है। प्राथमिक शिक्षा है, माध्यमिक शिक्षा है, हायर एजूकेशन है तथा विश्वविद्यालय की शिक्षा है। विशेष प्रकार की शिक्षा के जो केन्द्र हैं उन सबके अंदर कोई न कोई अच्छा परिवर्तन हो जाए। देश के बारे में पचास साल आगे तक का विचार करते हुए परिवर्तन हो, ऐसा इसका ढाँचा बन रहा है, सिस्टम डवलपमेंट का प्रयास हो रहा है। कैसे सत्र चलेंगे, कैसे परीक्षाएँ होंगी, कैसे पाठ्यक्रम बनेगा, कैसे अध्यापकों का प्रशिक्षण होगा आदि बहुत बड़ा काम है। हम विद्या भारती के कार्यकर्ता और उस शिक्षा समूह से जुड़े संगठन भी परिश्रम कर रहे हैं। विद्यार्थी परिषद् है, शैक्षिक महासंघ है, भारतीय शिक्षण मंडल है, ये सभी संगठन हैं। इसमें अपने-अपने प्रकार से सहयोग कर रहे हैं। दुनिया बड़े आश्चर्य और आनन्द से इस कार्य को देख रही है। इसका कोई विरोध नहीं कर रहा है, अब कम्यूनल, कम्यूनल करके भी कोई नहीं कह रहा है। देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर एक बात, देश की मूलभूत मौलिक संरचना को ध्यान में रखकर दूसरी बात, देश के महान् भवितव्य को ध्यान में रखकर तीसरी बात। इन तीनों बातों को सम्हालकर चलने वाला यह अनोखा 'सिस्टम' विकसित हो रहा है। प्राथमिक, माध्यमिक, हायर व युनिवर्सिटी तक एजूकेशन का पूरा 'सिस्टम' इससे प्रभावित होने वाला है।

पंजाब के अपने देशराज जी ने चर्चा के सत्र में बताया कि विद्यालय का निरीक्षण करने वाले अधिकारी आए तो उन्होंने निरीक्षण के बाद कहा कि इस विद्यालय में आत्मा दिखती है। अपने विद्यालय का स्ट्रक्चर है, ढाँचा है, बच्चे पढ़ते हैं, बच्चे पास भी होते हैं, बच्चों को नौकरी भी मिलती है पर शिक्षा की आत्मा कहाँ है ?, इस विद्या की आत्मा हैं तो, कहाँ है ? अधिकारी ने क्या, क्या देखा होगा, क्या-क्या निरीक्षण किया होगा, तो उसने बताया या नहीं पर देशराज जी की बात से समझ सकते हैं कि यह बात उस अधिकारी ने पाठ्यक्रम के अलावा कुछ और देखकर ही कही होगी। उसने वहाँ के आचार्यों का आचरण-व्यवहार देखा होगा, इन बच्चों को संस्कार देने की पद्धति को देखा होगा। संस्कारित बच्चे देखे होंगे तब उनके मुँह से निकला होगा कि यहाँ शिक्षा की आत्मा है।

एक बार एक बड़े शिक्षाविद् ने कहा कि हमने शिक्षा का एक बड़ा भारी ढाँचा तो खड़ा कर दिया, बड़े-बड़े भवन बना दिए, बड़े-बड़े संस्थान खड़े कर दिए। बड़े-बड़े पाठ्यक्रम बने, व्यवस्थित सेमिनार्स हुए, पुस्तकों का प्रकाशन हुआ लेकिन उसमें शिक्षा नहीं थी। बड़े शिक्षाविद् ने कहा कि सोने का पिंजड़ा तो है पर तोता उड़ गया। भवन तो था लेकिन शिक्षा नहीं थी। शिक्षा गायब थी, ज्ञान की महान् परम्परा गायब थी। पाठ्यक्रम पूरा था तो भी ये उदाहरण दिया कि पिंज़ड़ा तो है पर तोता गायब है।

भारत की कल्पना आक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज से हम नहीं कर सकते। हमको इस पाठ्यक्रम के साथ कुछ और देना होता है तब भारत की अन्तरात्मा प्रसन्न होती है, संतुष्ट होती है। भारत का एक मन है यदि वह प्रसन्न नहीं होता है तो इस शिक्षा से जो शिक्षा पाश्चात्य जगत् से आ रही है, उसका कोई अर्थ नहीं, हम फिजिक्स पढ़ायेंगे तो अमेरिका के व हमारे भारत के फिजिक्स में कोई अंतर नहीं है। इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग, सिविल इंजीनियरिंग, मेडिकल आदि कहीं भी पढ़ेंगे तो दुनिया में सारी जगह एक ही है। सर्जरी की, मेडिसिन की दुनिया भी एक है, कोई अंतर नहीं है। इस लौकिक शिक्षा में दुनिया में कहीं भी कोई अंतर नहीं है। परन्तु ये जो नई एनईपी है वहाँ से दुनिया में एक नयी शिक्षा व्यवस्था आएगी। इसमें भारतीयता का मूल तत्त्व मौलिक रूप में बना रहे, इसका प्रयास इसमें है। यह बना रहेगा क्या? यह बड़ा प्रश्न है। सवाल हमारे सामने है, इसके लिए मनुष्य के मन को पढ़ेंगे। मनुष्य को इस शिक्षापद्धति के योग्य बनाना, यह कार्य करना है। यह मौलिक आधारभूत बात है और फिर वही बात आती है कि जो एकात्मबोध कराए, जो मुक्त कराए, जो जीवन के परमार्थ भाव को समझा दे, हृदय की उदारता को बढ़ाए, शील से सम्पन्न बच्चों को तैयार करे वही वास्तविक शिक्षा है। भारत का मन उसके बिना प्रसन्न और संतुष्ट नहीं हो सकता है।

भारत का जो मन है उसे संतुष्ट करने के लिए शिक्षा के दोनों स्वरूप एक ही साथ चाहिए। जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू हैं यदि एक ओर पहलू घिस गया तो सिक्का खोटा है, बेकार है, वह नहीं चलेगा। दुनिया में वही शिक्षा भारत को प्रतिष्ठा दिलाएगी यानि भारत का मन तभी संतुष्ट होगा जब शिक्षा के साथ-साथ बच्च्वा नैतिक उन्नति करेगा। यह देखना है कि वह नैतिक उन्नति करता है कि नहीं। यदि नैतिक उन्नति नहीं हुई तो केवल भौतिक उन्नति से हमारी शिक्षा का कोई लाभ नहीं है, बेकार है, निरर्थक है। इसलिए इस नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में यह ध्यान में रखना है कि अपने विद्यालयों के साथ-साथ दूसरे विद्यालयों में भी नैतिक शिक्षा, आध्यात्मिक भाव हो। स्वामी विवेकानंद जी कहते थे 'नॉलेज कम्पाइल्ड विद् ह्यूमन कन्सर्न' अतः जो ज्ञान है वह हमने विद्यालय में, विश्वविद्यालय में जो प्राप्त किया है इसमें मानवीय भाव कहाँ है ?, सम्वेदनाएँ कहाँ हैं?, नॉलेज तो है, ह्यूमन कन्सर्न है कि नहीं। हमारे विद्यालय में पढ़ा विद्यार्थी जब व्यक्ति बने तो उसमें मानवीय संवेदनाओं का विकास होना चाहिए। ये

हमारे लिए चुनौती है कि हमारे विद्यालय में पढ़ा हुआ विद्यार्थी एक बड़ी नौकरी में जाकर भ्रष्टाचार तो नहीं करता है। हमारे शिक्षण संस्थान में पढ़े हुए विद्यार्थी का घर तो नहीं टूट रहा है? वह अपने माता-पिता की चिन्ता करता है? हमारी शिक्षा तब शिक्षा है जब हमारे यहाँ का पढ़ा हुआ बच्चा अपने माता-पिता, भाई-बहन, भतीजे, कुटुम्ब सबकी चिन्ता करता है, तो वही शिक्षा है। इसका ज्ञान होता है तो उसके मन से ड्यूलिज्म गया, अद्वैत आ गया। सर्वत्र ईश्वरीय भाव को वह देखता है, यह हमारे विद्यालय का विद्यार्थी है। इसका पाठ्यक्रम कहाँ बनता है ?, इसका पाठ्यक्रम नहीं पढ़ा सकते। इसका पाठ्यक्रम सभी विद्यालयों में स्वयं ही विकसित करना होता है। हमारे अपने आचार्यों, प्रधानाचार्यों के द्वारा विद्यार्थी के मन में धीरे-धीरे इस भाव को बैठाते हैं। भावों के आधार पर इन बच्चों के मन को गढ़ लेते हैं, अंदर स्थापित कर देते हैं, यह 'साइको सोशल इम्युनेशन' है। साइक्लोजकली और सोशली इन बच्चों का इम्युनेशन होता है। ये पैकेज आधारित नहीं है। कितने का पैकेज है, सवा करोड़ का, दो सौ करोड़ का यानि सारी शिक्षा को पैसे पर तोलना व मूल्यांकन करना यह खराब बात है। पूजनीय श्रीगुरुजी कभी-कभी कहा करते थे कि 'अर्थोपार्जन मात्र का उद्देश्य लेकर जो शिक्षा दी जाती है, वह शिक्षा का निकृष्ट उपयोग है। श्रीगुरुजी के कहे वाक्य में जो बात ध्यान में आती है 'शिक्षा वही है जो धीरे-धीरे बहुत प्रेम से समाज को फिर से मूल मार्ग पर लाती है। यह एक बड़ी चुनौती हमारे सामने है। हमारे बालक के मन से जातिगत द्वेष, अंहकार निकला कि नहीं निकला। यदि निकला तो हमारी शिक्षा सफल है। जाति का अंहकार, प्रांत का अंहकार, भाषा का अहंकार, वंश का अहंकार, पैसे का अहंकार, शिक्षा का अंहकार, चाहे कैसा भी अहंकार हो, वह अच्छी बात नहीं है। बालक किस दिशा में विकसित हो रहा है, अहंकार से मुक्त हो जाए और सर्वत्र एकात्मबोध से प्रेरित हो, यह ही शिक्षा है। अतः इन विद्यालयों में इस लौकिक शिक्षा के साथ-साथ नैतिक व आध्यात्मिक शिक्षा का समावेश कर पाने में हम समर्थ हो गए तो सच में हम 'नॉलेज कपल्ड विद ह्यूमन कन्सर्न'; उसके ज्ञान को हम मनुष्य के भावनाओं के साथ जोड़ने में सफल हो जाएँगें। सबके साथ एकात्मभाव से आगे बढ़ना है, यह सच में उस बालक का आध्यात्मिक विकास है। उस बालक के मन का उन्नयन है। उसकी उदात्त भावनाओं उन्नयन है।

बंधुओं, एक बड़ी चुनौती हमारे सामने है। हर बालक चाहता है कि वह सफल हो जाए। आईआईटी, ट्रिपल आईआईटी, मेडिकल कॉलेज, सिविल सर्विसेज आदि में हमारा चयन हो जाए। बीस तरह की अपने लिए नौकरियाँ ढूँढ़ कर, उसमें जाना चाहता है। वह वहाँ पर पहुँच भी रहा है। उस प्रकार की नौकरी प्राप्त भी कर रहा है जिसकी उसको चाह है। पर क्या उसे प्राप्त करके भी उसका जीवन सार्थक और सफल जीवन हो पाता है। अतः हमें बालक को शिक्षा देते-देते यह बताना है कि तुम जो चाहते हो वह मिल जाता है, तुम सफल हो जाते हो लेकिन इतना ही पर्याप्त नहीं है। यह अधूरा जीवन है तुमने जो चाहा वह प्राप्त हुआ यह तुम्हारे अंदर का गुण है, उससे तुम्हारे अंदर क्षमता आई, योग्यता आई पर क्या तुम्हारे अंदर उन गुरुओं के प्रति कृतज्ञता का भाव है जगा है क्या? वह जो मैदान के अंदर पौधों को पानी दे रहा माली, उससे तुम प्रेम से बोलते हो। ऐसा व्यवहार तुम सारी दुनिया में दूसरों के साथ करते हो। धीरे-धीरे समाज के अनेक लोग बोलते हैं कि यह व्यक्ति श्रेष्ठ है। यह व्यक्ति सच में महान् है। यह व्यक्ति मानवीय मूल्यों के साथ है जो हजारों लोग बोलते हैं तो वह जीवन सार्थक हो जाता है। इस प्रकार की शिक्षा हम अपने विद्यालयों में दे रहे हैं। हम उसे सफल बनाने की कोशिश कर रहे हैं। हम सफल होने के लिए सार्थक परिश्रम कर रहे हैं। वह जो चाहता है प्राप्त कर लेता है, इतना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि व्यक्ति अपने पास इकक्ट्ठे हुए सामानों में से दूसरों को भी वितरण करता है तो संचय की प्रवृत्ति से उसके अंदर निवृत्ति का भाव जाग्रत होता है। यहीं शिक्षा का उद्देश्य पूरा होने लगता है और यह ही वास्तव में संस्कार है। अतः कन्सन्ट्रेशन नहीं बल्कि एक्सपेंशन होना चाहिए। अपने से विस्तार करे, जो है वह दुनिया को भी दे, तभी उसका जीवन सार्थक होता है। यही पश्चिम और भारत में एक मौलिक तुलना है। इसके बिना हमलोग भारत को समझ नहीं सकते हैं।

एक अच्छी बात यह है कि हमारे यहाँ कभी संघर्ष नहीं रहा है। भारत में बड़े-बड़े गणितज्ञ, ज्योतिषाचार्य थे, बड़े-बड़े आयुर्वेदाचार्य थे, आध्यात्मिक विभूतियाँ थीं, व्याकरणाचार्य थे, साहित्याचार्य थे, इन सब का किसी से, कोई किसी भी प्रकार का संघर्ष नहीं हुआ। आप इस मार्ग पर नहीं चलिए, ऐसा बोलने वाला कोई नहीं था। आ नो भद्राः कृतवो यतु वो विश्वतः। जवाहर लाल नेहरू जी ने अपनी पुस्तक 'भारत की एक खोज में' इस बात को विस्तृत व्याख्या के साथ लिखे हैं कि ''भारत की महान् ज्ञान परम्परा है, इस ज्ञान परम्परा में कभी कोई किसी प्रकार अवरोध नहीं आया। हमारे किसी व्यक्ति ने किसी ज्ञानी को आगे से रोकने के लिए प्रयत्न कभी भी नहीं किया। जो चर्च के साथ विज्ञान का संघर्ष पश्चिम में था, वह भारत में कभी भी देखने को नहीं मिलता है। यही भारत की विशेषता है। लेकिन यह बात सच है कि हजार वर्ष की पराधीनता ने हमारी सारी व्यवस्थाओं को ध्वस्त कर दिया। विद्या भारती का जो बड़ा उद्देश्य है। वह वही है कि जो भी शिक्षा है, वह मानवीय हित में विकसित होती चली जाए। जो भी आविष्कार है वह मानव के मांगल्य के लिए होना चाहिए। इसी में बालक का मन विशाल होता चला जाएगा। दुनिया इसी की अपेक्षा हमसे करती है। दुनिया के जो बड़े-बड़े विद्वान् थे, आंइंस्टीन, शोपेनहावर, ब्रटेलरसेल, आर्लेविइन ऐसे साढ़े चार सौ विद्वानों की सूची हमारे कुछ मित्रों ने बनाई और वे ख्यातिप्राप्त थे। उन्होंने यही कहा था कि भारत में उदारता है। भारत की प्रशंसा में उन्होंने ग्रंथ लिखे और उन्होंने यह भी कहा कि

भारत का एक बड़ा दायित्व भी है कि वह दुनिया को बचा ले। दुनिया को बचाने का उत्तरादायित्व भारत के पास ही है। आईंस्टीन भी यही कहता है कि आज जो विज्ञान है वह यूरेनियम, प्लूटोनियम का शोध न कर सकता है पर क्या वह मानव हृदय का शोधन कर सकता है यानि नहीं कर सकता। इसलिए आईस्टीन फिर भारत की ओर देखता है। आईंस्टीन भारत के गांधी जी के साथ, रवीन्द्रनाथ टैगोर के साथ वार्ता करते हैं। दुनिया किस दिशा में जाएगी ? फिर दुनिया भारत की ओर देखने लगती है।

हमारे वर्तमान के जो विद्यार्थी हैं उनके हाथों में भविष्य में दुनिया आने वाली है। वे बच्चे भारत के ही हैं। इसलिए एक और आवश्यकता ध्यान में आती है कि जैसे-जैसे विद्या भारती का आकार बढ़ेगा और हजारों विद्यालय आगे आएँगें, अपने उन सम्पन्न लोगों के मन को पढ़ने का प्रयास करना है, उनके मन को खोलने का प्रयास करना है। ज्यादा आवश्यक है जो पैसे वाले हैं उन्हें अपने साथ लाने की। स्वामी विवेकानन्द कहते थे 'ब्रिंग मोरलाइफ टू रिच पीपुल'। जो सम्पन्न हैं वे अधिक अँधरे में हैं। उनको परामर्श की ज्यादा आवश्यकता है उनकी आँखों को खोलने की ज्यादा आवश्यकता है। उनका समाज के प्रति दायित्व और कर्तव्य क्या है, यह बताना है।

विद्या भारती से ये तीनों अपेक्षाएँ, जो सम्पन्न हैं जिनको परमात्मा ने सामर्थ्य दिया है और शिक्षा भी दी है और किसी न किसी कारण से योग्य हो गए, उनके ध्यान में रहना चाहिए कि भारत में अभी लाखों लाख-करोडों करोड़ लोग ऐसे हैं जिनको आवश्यकता है विद्यालय की, जिनको आवश्यकता है पुस्तकों की, जिनको आवश्यकता है फीस की, जिनको आवश्यकता है भवन की। विद्या भारती के इस काम में दूसरे लोगों को लगाने की आवश्यकता है। जो बड़े-बड़े प्राध्यापक हैं क्या उनकी जिम्मेदारी नहीं है कि उन बच्चों को जाकर के पढ़ाएँ, जिनको उनकी सर्वाधिक आवश्यकता है। वह मैथेमैटिक्स के प्रोफेसर हैं, वह कमेस्ट्री के प्रोफेसर हो सकते हैं, वह अंग्रेजी के प्रोफेसर हो सकते हैं। हम उनसे जाकर निवेदन करें कि हमारे विद्यालय में आइए और बारहवीं के बच्चे हैं, उनको गणित पढ़ाइए। इन बच्चों को कमेस्ट्री पढ़ाइए, इन बच्चों को अँग्रेजी पढ़ाइए। इनको आप हिन्दी पढ़ाइए। उनके पास जाइए और 'ब्रिंग मोर लॉइफ' के लिए आग्रह कीजिए। स्वामी जी ने कितनी कठोर शब्दों में कहा है, उनकी आँख बंद है, उनको खोलने दो। विद्या भारती के कार्यकर्ता के ऊपर एक बड़ी जिम्मेदारी है। एक बड़ा दायित्व है एक ओर वैश्विकदाय है तो दूसरी ओर एक बड़ी रिस्पॉनसिबिलिटी है। दूसरी ओर हर विद्वान कहता है कि दुनिया में संघर्ष चल रहा है। यानि दुनिया एक दूसरे से बड़ा दिखने और दिखाने के लिए संघर्ष कर रही है। भारत में इस प्रकार के संघर्ष से बचा जा सकता है पर दूसरी ओर हमारे अंदर भी एक संघर्ष है। हमको अपने आप भी खड़ा होना है। खड़े तो हो रहे हैं। एक बड़े संगठन के साथ विश्व के परिदृश्य में आज हम अपनी उपस्थिति के साथ हैं इसलिए हम और अधिक शक्ति के साथ खड़े होंगे। संघ की शताब्दी वर्ष की वेला आने वाली है, उसमें हम और परिश्रम के साथ अपने क्षेत्र का विस्तार करेंगे। इन्हीं शब्दों के साथ मैं अपना उद्‌बोधन समाप्त करूँगा।

(विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की साधारण सभा, जोधपुर में दिए गए मार्गदर्शन की लेख रूप में प्रस्तुति।)

## सेवा भाव का विकास भी आवश्यक है।

जिन बच्चों में आरम्भ से ही सेवा की भावना का स्वस्थ विकास कर दिया जाता है, वे आगे चलकर अपनी सेवा से समाज में प्रतिष्ठा का पात्र बन जाते हैं। सेवा-पथ से चलकर हजारों ऐसे व्यक्ति उन्नति के महान् शिखर पर पहुँचे हैं, जिनके पास साधन नाम की कोई वस्तु न थी। उनके परिवार निर्धन और निरक्षर थे।

तन, मन और वाणी से दूसरे की सेवा में रहना स्वयं इतना बड़ा साधन है कि उसके सम्मुख किसी अन्य साधन की आवश्यकता ही नहीं रहती। साथ ही अन्य सारे साधन इस एक साधन के अनुगामी रहते हैं, क्योंकि जो व्यक्ति सेवा में सच्चे मन से लग जाएगा उसको सीमा के भीतर के सारे साधन अवश्य ही प्रस्तुत रहते हैं। इस प्रकार प्रत्येक की सेवा में तत्पर रहने से प्रत्येक के साधन सुलभ रहने से साधनों की प्रचुरता हो जाएगी। किन्तु जो निःस्वार्थ भाव से सेवा करने के लिए सेवा करता है वह दूसरे के साधन का अपनी निजी आवश्यकता अथवा उन्नति के लिए उपयोग नहीं करता और सच बात तो यह है कि उसको किसी के साधनों की आवश्यकता भी नहीं रहती। सच्चा सेवा भाव रखने वाले के लिए पथ के अवरोध स्वयं ही हटते और सफलताओं के द्वार खुलते चले जाते हैं। हर आदमी उसके सेवा भाव से प्रसन्न हो, विनिमय रूप में कुछ न कुछ सहायता एवं सहयोग करने के लिए लालायित रहता है। अस्तु समाज के सुन्दर निर्माण और भविष्य में उन्नति के लिए बच्चे में सेवा भाव का विकास करने के लिए परिवार सबसे सुन्दर संस्था है। धीरे-धीरे गुरुजनों की सेवा प्रारम्भ करके सारे परिवार की सेवा करने के भाव जागरण करना चाहिए ।

# Hkkjrh; f'k{kk d ifreku

## *प्रज्ञा-प्रवाह*

*श्री पंडित मदन मोहन मालवीय*

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का यह द्वितीय उपाधि वितरणोत्सव है। इस अवसर पर मेरे हृदय में जो प्रमुख भावनाएँ और उसके सम्बन्ध में मेरा विचार है कि विश्वविद्यालय से सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में वैसी भावना होगी। यह परमपिता परमात्मा को अनेकानेक धन्यवाद देने वाली है, जिसकी कृपा के परिणामस्वरूप आज हम इस वार्षिकोत्सव के अवसर पर यहाँ एकत्र हुए हैं। सन् 1904 में महाराजाधिराज बनारस की अध्यक्षता में की गई सभा में इस विश्वविद्यालय के आन्दोलन का सर्वप्रथम सूत्रपात हुआ था। सन् 1905 ई.में यह विचार एक योजना के रूप में रखा गया था और 31 दिसम्बर 1905 को जिस वर्ष राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन काशी में हुआ था, देश के गणमान्य व्यक्तियों की टॉउन हॉल में सभा हुई थी जिसमें इस योजना पर विचार किया गया था। कुछ समय तक यह आन्दोलन चला किन्तु फिर कुछ कारणवश आन्दोलन की गति सन् 1910 तक रुकी रही। योजना को ठीक रूप से कार्यरूप में परिणत करने से पहले बहुत सा प्रारम्भिक कार्य करना आवश्यक था। सन् 1911 में जब राजराजेश्वर भारत सम्राट ने भारत का दौरा किया तो विश्वविद्यालय की आवश्यकता तथा इसके उद्देश्य फिर से प्रकाशित किए गए। पहली योजना ने इसकी आवश्यकता भली भाँति बतलाई थी, किन्तु फिर भी कुछ परिवर्तन आवश्यकीय थे। जब यह योजना सन् 1911 में फिर से रखी गई तो जनता ने इसका हृदय से समर्थन किया। बहुत से राजाओं तथा धनिकों ने सहायता देने का वचन दिया। पच्चीस लाख रुपये का वचन मिल जाने पर भारत सरकार से प्रार्थना की गई और लार्ड हार्डिंग्स तथा सर हारकोर्ट बटलर की सहायता से सरकार ने हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापित करने का समर्थन किया। दाताओं की संख्या भी क्रमशः बढ़ने लगी। 1 अक्टूबर 1915 तक जिस समय कि हिन्दू विश्वविद्यालय विधान स्वीकृत हुआ तबतक पचास लाख रुपये एकत्रित किए जा चुके थे। सन् 1917 में भारत सरकार ने हमें इस स्थान पर विश्वविद्यालय का कार्य चलाने की आज्ञा दी।

इसी समय दो मील लम्बा तथा एक मील चौड़ा सुन्दर स्थान नगवा पर लगभग छः लाख रुपये में खरीद लिया गया। इसी स्थान पर अब सुन्दर भवन बन रहे हैं। लगभग छः सप्ताहों में आर्ट्स कॉलेज, भौतिक तथा रासायनिक प्रयोग शालाएँ हो जाएँगी, छः सौ विद्यार्थियों के रखने योग्य दो छात्रावास तुरन्त ही तैयार हो जायेंगे। बहुत से ग्रंथालय भी बन गए हैं। प्रिंसपल किंग की अध्यक्षता में इंजीनियरिंग कॉलेज का कार्य सुचारू रूप से चल रहा है। हमें आशा है कि जुलाई मास में अथवा अधिक से अधिक सन् 1921 तक के जनवरी मास में हम अपना कार्य इस स्थान पर प्रारम्भ कर देंगे। हमें आशा है कि हम प्रिंस ऑफ वेल्स का स्वागत करने का सौभाग्य तथा प्रसन्नता भी प्राप्त करेंगे। विश्वविद्यालय की कौंसिल ने युवराज को एक सादर निमंत्रण भेजने का निश्चय किया है, इसी बीच में हमें बहुत कुछ कार्य करना है तथा बहुत कुछ अधिक रुपयों की भी आवश्यकता है।

कुछ सज्जनों का कथन है कि अपनी योजना को कार्य रूप में परिणत करने के लिए हमें अपना ध्यान भवन निर्माण की ओर न देकर भिन्न-भिन्न विषयों में विद्वान नियुक्त करने की ओर देना चाहिए। आप लोगों को यह जानकर संतोष होगा कि विश्वविद्यालय के कार्यकर्ताओं ने इस बात को भुला नहीं दिया। हमने केवल उन्हीं भवनों का निश्चय किया है जिससे हम जल्दी ही नए स्थान पर अपना कार्य प्रारम्भ कर दें। इस अवसर पर हमें अधिकाधिक रुपयों की आवश्यकता है और मेरा विश्वास है कि प्रत्येक विश्वविद्यालय प्रेमी हमारे उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए हमें अधिकाधिक आर्थिक सहायता देगा।

इस अवसर पर इस बात का ध्यान रखना

आवश्यक है कि हम देश तथा विश्वविद्यालय के एक प्रसिद्ध युग में हैं। हमें कला-कौशल सम्बन्धी शिक्षा, विज्ञान, प्राच्य विद्या तथा धार्मिक शिक्षा के विभागों की ही उन्नति में सहयोग नहीं देना है अपितु हमें अपने कार्यक्रम के अनुसार कृषि विभाग, शिल्प विभाग, वाणिज्य विभाग, आयुर्वेद विभाग तथा संगीत विद्या व ललितकला विभाग को भी स्थान देना है। हमें एक संग्राहलय की आवश्यकता है जहाँ विद्यार्थी भिन्न-भिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सके। एक पुस्तकालय के लिए भी रुपयों की बड़ी आवश्यकता है। एक मंदिर भी बन जाना आवश्यक है। देश के भिन्न-भिन्न भागों से आए हुए विद्यार्थियों के लिए एक छात्रावास की आवश्यकता है। इस सब कार्यों के लिए बहुत सा धन चाहिए। विश्वविद्यालय की संतोष जनक प्रगति के लिए हमारे सम्मुख सबसे बड़ी आवश्यकता अधिकाधिक रुपये एकत्र करने की है।

अपने देश के इतिहास में हम एक महत्त्वपूर्ण युग में प्रवेश कर रहे हैं। श्रीमान् भारत सम्राट् की घोषणा भी हम सबको विदित है। नया शासन विधान जो देश के लिए स्वीकृत हुआ है उसे आप लोग जानते हैं। शासन विधान महत्त्वपूर्ण हैं ही किन्तु उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण सम्राट् की घोषणा है। भारत सम्राट् ने भारत छोड़ने के समय हमें आश्वासन पूर्ण सन्देश भेजा था। यह आश्वासन अब आंशिक रूप में हमने कार्यान्वित किया और भविष्य में समय आने पर हमें पूर्ण उत्तरादायित्व शासन देने का वचन दिया है। उस घोषणा में भारत सम्राट की वास्तविक अभिलाषा भली भाँति प्रगट होती है कि भारतवासियों को संसार के देशों में उचित स्थान मिलना चाहिए। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उस घोषणा में भारत वासियों ने नवीन शासन विधान को सफल बनाने के लिए प्रार्थना की गई है।

आज की सभा के सम्मुख सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न शिक्षा का है। आप जानते हैं कि शिक्षा प्रबंध व्यवस्थापिका सभा द्वारा तथा निर्वाचित मंत्रियों द्वारा होगा। केवल प्रारम्भिक तथा द्वितीय श्रेणी की शिक्षा ही नहीं, अपितु विश्वविद्यालयों की शिक्षा भी मंत्रियों द्वारा संचालित होगी। शिक्षा की उन्नति में इस अवसर का सदुपयोग कितना लाभदायी होगा, इसकी कल्पना हम कर सकते हैं। हमारा बहुत दिनों से कहना था कि शिक्षा के लिए हमें पर्याप्त धन नहीं मिलता। बहुत दिनों से हमने इसकी आवश्यकता बतलाई है कि शिक्षा के लिए सरकार को अधिक प्रोत्साहन देना चाहिए। सरकारी लोगों द्वारा जो कार्य अब तक किया जाता था उस कार्य का उत्तरादायित्व अब हमारे कन्धों पर आ पड़ा है। हमें अब परिस्थिति को देखना है, और देखना है कि विश्वविद्यालय किस प्रकार की शिक्षा कार्य में और सहयोग दे सकता है।

एक और दूसरी घटना भी परिस्थिति पर प्रभाव डाल रही है। नवीन शासन विधान के अनुसार जनता द्वारा निर्वाचित मंत्रियों के हाथ में शिक्षा का प्रबंध रहेगा। ये अपने कार्यों के लिए व्यवस्थापिका सभाओं के सम्मुख उत्तरदायी होंगे। कलकत्ता विश्वविद्यालय कमीशन ने अपनी रिपोर्ट जनता के सम्मुख आई है और इसकी सिफारिशों पर बहुत सी प्रान्तीय सरकारें भी विचार कर रही हैं। समस्त सिफारिशों पर प्रकाश डालना मेरे लिए असम्भव है किन्तु आपका ध्यान दो अथवा तीन धाराओं की ओर आकर्षित करूँगा जो हमारे वर्तमान कार्य से सम्बन्ध रखती हैं। कमीशन की प्रमुख सिफारिशें में एक यह भी है कि इन्टरमीडिएट आर्ट्स तथा साईंस कक्षाओं तक के अलग कॉलेज बनने चाहिए तथा बी.ए. आनर्स उत्तीर्ण होने का पाठ्यक्रम तीन साल का हो जाना चाहिए। जो विद्यार्थी ऑनर्स लेकर बी.ए. पास करेंगे वे विशेष परिस्थितियों में एक साल में ही एम.ए. की परीक्षा में सम्मिलित हो सकेंगे। इन दो प्रस्तावों से कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों की स्थिति में महान परिवर्तन हो जाएगा। दोनों मार्गों में से कौन सा मार्ग श्रेयस्कर है, इसके ऊपर विद्वानों में मतभेद है। अधिकांश लोगों की धारणा है कि विश्वविद्यालयों से इन्टरमीडिएट कक्षाएँ अलग हो जानी चाहिए किन्तु इस बात पर अभी मतभेद है कि इन्टमीडिएट कक्षाओं के अलग कॉलेज बनने चाहिए अथवा ये कक्षाएँ हाईस्कूलों में सम्मिलित कर दी जाएँ।

सज्जनों ! मेरे लिए इस विषय जिस पर सर माइकेल सैडलर तथा आशुतोष मुखर्जी जैसे विद्वान् विचार कर रहे हैं, उसपर किसी प्रकार की सम्मति प्रगट करना निस्सन्देह साहस का कार्य होगा। इस प्रश्न पर विचार करने वाले सज्जनों में से डॉ. जियाउद्दीन अहमद तथा महाशय हारवैल जैसे सुयोग्य व्यक्ति भी थे। किन्तु मेरी सम्मति में यह विषय इतना महत्त्वपूर्ण है तथा इसका प्रभाव समस्त विद्यालयों पर पड़ेगा कि इसको सुलझाने का सर्वोत्तम मार्ग हमें यही दिखलाई पड़ता है कि देश के प्रसिद्ध शिक्षा प्रेमियों की एक सभा बुलाई जाए जो अपने व्यक्तिगत अनुभव तथा योग्यता के आधार पर सर्वोत्तम मार्ग निश्चित कर सकें। मैंने इस प्रश्न पर अपने बहुत से साथियों के साथ विचार किया है और मेरे विचार से बहुत से ऐसे व्यक्ति हैं जो इन्टरमीडिएट कक्षाओं के एक अलग कॉलेज बना देने के प्रस्ताव के विरोधी हैं।

कुछ सज्जनों की यह सम्मति है कि हमें शिक्षा के समस्त अंगों पर विचार करना चाहिए, उसके भिन्न-भिन्न अंगों पर अलग-अलग नहीं। यदि हम इस समस्या का निर्णय इस रूप में करेंगे तो सर्वप्रथम हमें इस बात का निर्णय इस रूप में करेंगे तो सर्वप्रथम हमें इस बात का निर्णय करना पड़ेगा कि जैसा कि कमीशन में भी कहा गया था कि शिक्षा का माध्यम क्या हो? मुझे इस बात को जानकर बड़ी प्रसन्नता होती है कि कमीशन ने स्कूलों में मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने की बात का समर्थन किया है। इन्टरमीडिएट कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में कमीशन की सम्मति के अनुसार अंग्रेजी माध्यम द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिए। मेरे विचार से कमीशन की इन सिफारिशों में थोड़ा परिवर्तन होना चाहिए। मेरे विचार से अब समय आ गया है कि जब हमें केवल स्कूलों ही नहीं बल्कि विश्वविद्यालयों तथा उच्च श्रेणियों में भी देशी भाषाओं के माध्यम द्वारा शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए।

मैं यह जानता हूँ कि हमारी देशी भाषाओं में अभी समस्त शिक्षा देने योग्य साहित्य नहीं है। किन्तु यह कमी पूरी तो हो सकती है। जब हम उसके लिए अभी से कार्य करना प्रारम्भ कर दें। जब हमें अपने ध्येय का भली प्रकार ज्ञान हो जाए तो तथा वह नीति हमें भलीभाँति विदित हो जाए जिसे हम काम में लाना चाहते हैं। संसार में कोई ऐसा सभ्य देश नहीं है जहाँ प्रारम्भिक तथा उच्च श्रेणियों की शिक्षा के लिए मातृभाषा का प्रयोग न किया जाता हो। तब हम भी उस मार्ग को क्यों न अपनाएँ? आप को इस समस्या पर ऊपर से विचार करना पड़ेगा। हमारे स्कूलों में अँग्रेजी ही शिक्षा का माध्यम है। हमारे शिक्षा प्रेमियों को अपने समय का अधिकांश इसी बात के सोचने में लगना पड़ता है कि अँग्रेजी शिक्षा का प्रारम्भ किस श्रेणी से करना चाहिए ? मामला यही रुका रह जाता है। यदि प्रारम्भ से ही सरकार तथा जनता का यह मत हो जाए कि जहाँ सम्भव हो सकेगा देशवासियों को शिक्षा देने के लिए देशी भाषाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए तथा पाठ्य पुस्तकों को तैयार करने का अभी से यथा साध्य प्रयत्न किया जाएगा। तब मेरे विचार से प्रारम्भिक शिक्षा की समस्या तथा मिडिल स्कूलों में अँग्रेजी का उपयुक्त स्थान निर्धारित करने की समस्या भी बहुत जल्दी सुलझ जाएगी। मेरा यह विचार कदापि नहीं है कि हम अंग्रेजी भाषा को सर्वथा त्याग दें। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से देशवासियों को पिछले वर्षों से जो लाभ हुए हैं वे सबको भली भाँति विदित हैं तथा देशवासी इसके लिए सदा उपकृत रहेंगे। उसी शिक्षा के परिणामस्वरूप हमारी राष्ट्रीय भावनाओं को उत्तेजन मिला है और हमारा दृष्टिकोण भी पहले की अपेक्षा अधिक विस्तीर्ण हो गया है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली के लिए हम निस्सन्देह बहुत अधिक कृतज्ञ हैं। किन्तु उसी समय हमें अपने भविष्य तथा वर्तमान के प्रति कर्तव्यपालन करने में भी किसी प्रकार का आलस्य नहीं दिखाना चाहिए। जब उस शिक्षा प्रणाली से हमारे देश को बहुत सी हानियाँ हुईं हैं, किन्तु सरकार की अपेक्षा हम अधिक दोषी हैं। मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि हमनें दूसरी भाषाओं से देशी भाषाओं में उत्तम-उत्तम ग्रंथों का अनुवाद नहीं किया और इस प्रकार हमनें सैकड़ों अंग्रेजी न जानने वाले भाइयों को उसके उत्तम-उत्तम गुण जानने से वंचित रखा है। मैं भली प्रकार जानता हूँ कुछ प्रांतीय साहित्यों में विशेषतया बंगाल में इस सम्बन्ध में पर्याप्त कार्य किया गया है। कुछ प्रांतों में हिन्दी उर्दू के साहित्यों में भी आश्चर्य जनक उन्नति हुई है। किन्तु यह सब कार्य शेष कार्य की अपेक्षा बहुत ही कम है और अभी हमें इसके लिए बहुत बड़ा कार्य करना होगा।

दूसरा प्रश्न हमारे सम्मुख यह है कि हमारे देश में जो प्रारम्भिक तथा द्वितीय श्रेणी की शिक्षा दी जाए वह फिर किस प्रकार की हो ?, मेरे विचार से हमें यही करना चाहिए जो जर्मनी ने कई साल पहले किया था, जो जापान ने पिछले वर्षों किया है, जिसे अमेरिका तथा फ्रांस पिछले कई वर्षों करते आ रहे हैं और जिसे इंगलैंड ने पिछले थोड़े वर्षों से धीरे-धीरे करना प्रारम्भ किया है। इंगलैंड ने बहुत समय तक सुव्यवस्थित शिक्षा प्रणाली के आधार पर शिक्षा व्यवस्था का आयोजन नहीं किया था, किन्तु अब हमारे अंग्रेज मित्रों ने व्यवस्थित द्वितीय श्रेणी की शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार कर लिया है। सन् 1918 का शिक्षा विधान इसका भलीभाँति परिचय देता है। हमारे देश में भी चौदह वर्ष तक की प्रारम्भिक तथा द्वितीय श्रेणी की शिक्षा प्रणाली पर फिर से विचार होना चाहिए। प्रारम्भिक अवस्था में हमें केवल विद्यार्थियों को पढ़ने लिखने तथा जोड़ने की शिक्षा देकर ही चुप न रह जाना चाहिए। संसार की प्रगति को देखते हुए शिक्षा व्यवस्था का यह क्रम सर्वथा अनुपयुक्त है। अपने देश में प्रारम्भिक अवस्था में हमें प्रारम्भिक विज्ञान तथा साधारणतया रोचक शिक्षा की ओर भी ध्यान देना चाहिए।

द्वितीय श्रेणी की शिक्षा कितनी अवस्था तक के विद्यार्थियों को दी जाए, इस बात पर हमें विचार करना है। मेरे विचार से चौदह वर्ष से लेकर सत्रह या अठारह वर्ष तक के विद्यार्थियों को यह शिक्षा दी जानी चाहिए। द्वितीय श्रेणी की शिक्षा वाले स्कूल भी फ्रांस, जापान तथा इंगलैंड के स्कूलों की नाईं (तरह) संगठित होने चाहिए। प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने वाले विद्यार्थी द्वितीय श्रेणी की शिक्षा में भलीभाँति प्रवेश कर सकें ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए। हाई स्कूल शिक्षा में पिछली श्रेणी की शिक्षा से अधिक तो योग्यता होनी ही चाहिए, इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों को इस योग्य भी बना देना चाहिए कि किसी न किसी उपाय से वह अपनी जीविका उपार्जन करने में सफल हो सके। तभी हाई स्कूल की शिक्षा अन्य सभ्य देश की नाई (तरह) हमारे देश के युवाओं के लिए लाभदायक हो सकेगी। इस व्यवस्था के अनुसार कॉलेज की शिक्षा प्राप्त करने वालों की संख्या घटने के बदले बढ़ेगी ही और उच्च शिक्षा पर व्यय किए गए धन का परिणाम भी इसी अवस्था में अच्छा निकलेगा। कलकत्ता विश्वविद्यालय कमीशन की सिफारिशों के अनुसार प्रत्येक जिले में एक इंटरमीडिएट कॉलेज स्थापित होना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि अनेक विद्याप्रेमी युवक जो अपने को किसी उद्योग- धन्धे के योग्य बनाना चाहते हैं, अपने जिलों में ही रहकर सोलह अथवा अठारह वर्ष की अवस्था में दूर स्थानों में न जाकर उस प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। अधिकांश विद्यार्थियों को शिक्षित बनने में इस प्रकार सुभीता होगा और सुयोग्य विद्वान भी इसी के परिणाम स्वरूप निकल सकेंगे।

इस प्रस्ताव पर विचार करना आवश्यक है। प्रश्न यह है कि इसका निर्णय किस प्रकार होना चाहिए? क्या प्रत्येक विश्वविद्यालय अपनी इच्छा के अनुसार इसका निर्णय कर सकता है? क्या इस उपाय से यथेष्ट उन्नति हो सकती है? मेरे विचार से यह मार्ग ठीक नहीं है इस प्रश्न का सम्बन्ध समस्त विश्वविद्यालयों से है और मेरे विचार से इससे सम्बन्ध रखने वाले सब व्यक्तियों की एक सभा होनी चाहिए। अधिक विचार करने से सम्भवतः मेरा यह विचार माननीय न हो, परन्तु मुझे इसकी सम्भावना नहीं है कि मेरा यह विचार अस्वीकृत हो

जाएगा। केवल कला सम्बन्धी शिक्षा देने से ही किसी देश का हित नहीं हो सकता है, अपितु विज्ञान की पिछली शताब्दियों की उन्नति को देखते हुए तथा विज्ञान के प्रयोगात्मक क्षेत्र में जो असाधारण उन्नति हुई है उसको देखते हुए हममें से कोई विचारवान व्यक्ति यह कहने का साहस न करेगा कि प्रारम्भिक स्कूलों में जो शिक्षा व्यवस्था की जाए उसमें विज्ञान की शिक्षा का कार्यक्रम न हो तथा हाई स्कूलों में किसी प्रकार की उद्योग धन्धा सम्बन्धी शिक्षा का उचित प्रबन्ध न हो।

अब समय आ गया है जब हमें भी देशी भाषाओं के माध्यम द्वारा देश के युवकों को शिक्षा देनी चाहिए और हमें जल्दी से जल्दी इसके लिए प्रस्तुत हो जाना चाहिए और हम यह भली भाँति जानते हैं कि अंग्रेजी भाषा संसार के समस्त विषयों के ज्ञान के लिए किस प्रकार लाभदायक है। हमारा यह विचार नहीं है कि अंग्रेजी भाषा की शिक्षा आपको नहीं न देनी चाहिए। सुव्यवस्थित शिक्षा प्रणाली में अंग्रेजी को उचित स्थान मिलना चाहिए। हमारे युवकों को विदेशी भाषाएँ सीखने की आवश्यकता है और कोई विदेशी भाषा हमारे लिए उतनी लाभदायक नहीं हो सकती जितनी अंग्रेजी। लगभग साठ वर्षों से देश के समस्त भागों में अंग्रेजी पढ़ाई जा रही है और अधिकांश जनता इस भाषा को भलीभाँति समझ सकती है। अच्छे से अच्छे विषयों का ज्ञान भी अंग्रेजी के द्वारा हो सकता है। किन्तु अंग्रेजी दूसरी भाषा की तरह पढ़ाई जानी चाहिए और उसके द्वारा युवकों को शिक्षा देने की व्यवस्था बदल देनी चाहिए। क्योंकि इसके ज्ञान के लिए उन्हें अपने जीवन के अमूल्य वर्ष खोने पड़ते हैं।

मेरा विचार है कि यह तो सरकार अथवा कोई भी विश्वविद्यालय इस विषय के निपटारे के लिए सभा निमंत्रित करेगा, जहाँ इन सब विषयों विचार हो और वह निर्णय सब को मान्य हो। किसी और प्रकार से समस्या का निर्णय नहीं हो सकता है। इस सम्बन्ध में हमें उन सज्जनों का परामर्श लेना चाहिए जिन्होंने अपने जीवन भर स्कूलों और कॉलेजों में अंग्रेजी और देशी भाषाओं की शिक्षा दी है। मेरा विश्वास है कि यदि ऐसी सभा हो सकेगी तो देश का बड़ा कल्याण होगा। जब एक राष्ट्रीय नीति निर्धारित हो जाएगी तब विश्वविद्यालयों का कार्य भी अधिक सुगम और लाभदायक हो जाएगा। मैं इस बात को यहाँ प्रकट कर देना उचित समझता हूँ कि कमीशन ने जो-जो सिफारिशें शासन सम्बन्धी तथा शिक्षा सम्बन्धी विषयों पर की है वे बस पहले से ही हमारे विश्वविद्यालयों द्वारा सोची जा चुकीं थीं। कमीशन ने जिस शासन विधान की योजना रखी है उसी के अनुसार हिन्दू विश्वविद्यालय पहले ही कार्य कर रहा है।

हमारे सम्मुख अब इस बात का प्रश्न है कि अपने ध्येय को कार्यरूप में परिणत करने के लिए हमें किन उपायों को काम में लाना चाहिए ? वे उपाय हैं आर्थिक सहायता तथा व्यक्तिगत सहयोग। हमें विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त अवसरों को तथा अपने उत्तरादायित्वों को भलीभाँति समझ लेना चाहिए। हमारा ध्येय संसार के सम्मुख एक विशेष आदर्श रखना है। वर्तमान समय में शिक्षा क्षेत्र में बहुत अधिक हलचल मची हुई है। योरोप अपने वर्तमान पथ को सशंकित दृष्टि से देखता है क्योंकि जिस मार्ग का स्वयं अनुसरण कर रहा है वह उस भयानक युद्ध को न रोक सका जिसके परिणामस्वरूप स्वयं सभ्यता के ही विस्तार पर भारी आघात पहुँचा था। हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति जो सांसारिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा का मधुर समन्वय है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों ध्येयों की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करती है। बोलिए हम इससे लाभ उठाएँ या त्याग दें। इस पर विचार करना चाहिए।

हमारा एक दूसरा भी कर्तव्य है जब हम आक्सफोर्ड तथा कैम्ब्रिज जैसे विश्वविद्यालयों का विचार करते हैं और जब हम वहाँ से निकले हुए विद्यार्थियों की प्रसन्नता तथा श्रद्धा के साथ अपने विश्वविद्यालयों के वातावरण का स्मरण करते हुए देखते हैं तो हमारे हृदय में यह भावना होती है कि हमें देश में क्या करना चाहिए? जब हम फ्रांसियों तथा जर्मनों में अपने राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों पर गर्व करते हुए देखते हैं तथा जापानियों को अपने देश तथा राष्ट्र के प्रति उत्कट देशप्रेम रखते हुए देखते हैं तो हम अवश्य ही इन सब विचारों से प्रभावित होते हैं। हम उन्हीं की सन्तान हैं जिन्होंने नालन्दा, तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों को जन्म दिया था। इस विद्या के प्राचीन केन्द्र पर हमारा गर्व करना स्वाभाविक ही है। काशी का इतिहास बहुत प्राचीन समय से प्रारम्भ होता है। वह संसार के सबसे प्राचीन नगरों में एक है। यह पवित्रतात्माओं की स्मृतिभूमि है, यह वह पूण्य भूमि है जहाँ राजा हरिश्चन्द्र अपने सत्यप्रेम के कारण अपना नाम युगयुगान्तर के लिए अमर कर गए। भगवान् बुद्ध ने अपने मानव प्रेम का सुन्दर उपदेश यहीं से आरम्भ किया था। प्राचीन धर्म को फिर से संस्थापित करने वाले भगवान् शंकर भी इसी स्थान पर पधारे थे। हमारे प्राचीन पवित्र धार्मिक ग्रंथों के सुरक्षा तथा टीकाकार भगवान् व्यास की भी यही जन्मभूमि है और यहीं कबीर तथा तुलसीदास जी रहे थे। ऐसी राष्ट्रीय संस्थाएँ अब कहाँ हैं जो महात्माओं की कृतियों को स्थायी रूप से रख सकें। ऐसा राष्ट्रीय संग्राहालय कहाँ है जहाँ अपने-अपने राष्ट्रीय रत्नों तथा कलाकौशलों को यत्नपूर्वक सुरक्षित रखा हो? आपकी राष्ट्रीय चित्रशालाएँ तथा राष्ट्रीय भवन कहाँ हैं ? मैं इस आक्षेप को भलीभाँति सुन रहा हूँ कि हम भवन निर्माण में अधिक व्यय कर रहे हैं। मैं केवल आपका ध्यान संसार के बड़े-बड़े विश्व विश्वविद्यालयों के ऐसे कार्यों की ओर आकर्षित करूँगा और यह भी बतलाऊँगा कि उनसे हमें क्या शिक्षा मिलती है ? मेरा विचार है कि आप सब लोग काशी में आधुनिक नालन्दा तथा तक्षशिला बनाने में मेरे साथ सहयोग दें। हमें इस स्थान को हिन्दुओं की विद्या का केन्द्र बना देना चाहिए। हमारे पास दो मील लम्बा, एक मील चौड़ा रमणीक स्थान है। सरकार भी हमें सहायता दे रही है। देश के राजे, महाराजे तथा धनी-मानी व्यक्ति धन से हमारी सहायता करने को

तैयार हैं शिक्षित वर्ग विश्वविद्यालय की योजना से पूर्णतया सहमत हैं। हमें एक दूसरे से मिलकर इस उद्देश्य को पूर्ण करने का प्रयत्न करना चाहिए। निस्सन्देह थोड़े समय में हम वह कर दिखाएँगे जिसके लिए अभियान से हमारी छाती फूल जाएगी। मेरा विश्वास है कि इस स्थान पर एकत्रित सभी बहन और भाई मेरी इस प्रार्थना से सहमत होंगे तथा अन्य सज्जन भी इस कार्य में पूर्णतया हाथ बटाएँगे। मुझे प्रसन्नता है कि श्रीमती बेसन्ट भी यहाँ हैं। उन्होंने कॉलेज तथा विश्वविद्यालय के लिए अगाध परिश्रम किया है। हमें उनके इस कार्य के लिए उनका कृतज्ञ होना चाहिए। क्या अच्छा होता यदि मेरी तरह आप लोगों में भी यह भावना हो जाती कि अपने धर्म की पवित्र तथा प्रिय वस्तुओं की रक्षा करने में हमने अपने कर्तव्य का पूर्णरूप से पालन नहीं किया। किन्तु जो कुछ हो गया सो हो गया। हमें वर्तमान की ओर ध्यान देना चाहिए। काशी को सर्वोच्च सभ्यता की पवित्र भूमि बना देनी चाहिए। जिसके लिए वह प्राचीन समय में इतनी प्रसिद्ध थी। इस विश्वविद्यालय को हमें इस प्रकार बनाना चाहिए कि इसकी पग-पग भूमि से प्राचीन गौरव तथा सभ्यता का आभास मिले। आप लोग निराश न हों। सदैव इस आशा पर कार्य करते जाइए कि प्राचीन समय में जो किया गया था वही वर्तमान समय में अवश्य पूर्ण होगा कि हमारे पूर्वजों ने जो प्रशंसनीय कार्य किए वही हम भविष्य में अवश्य पूर्ण कर लेंगे तथा फिर से देश वहीं गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा।

जिन युवकों को आज उपाधियाँ मिली हैं उनसे मेरा केवल यही अनुरोध है कि वे इस बात को अपना पवित्र कर्तव्य समझें कि अपने विश्वविद्यालय की उन्नति के लिए जो कुछ कार्य वे कर सकें, अवश्य करें। उन्हें अपना यह कर्तव्य समझना चाहिए कि उनके लिए राष्ट्र शिक्षा के इस मंदिर के निर्माण में अपनी शक्ति के अनुसार सहायता करना आवश्यक है। हमें एक ऐसा स्थान बनाना है जिसकी प्रत्येक व्यक्ति तन, मन, वचन अथवा धन से सेवा कर सकें। मुझे विश्वास है कि भगवान् विश्वनाथ के अनुग्रह से हम अपने इस कार्य को पूर्ण कर सकेंगे तथा उनकी प्रेरणा से जो योजना बनी थी, अवश्य पूर्ण होगी।

( महामना मालवीय मिशन, दिल्ली द्वारा संचालित पं. मदनमोहन मालवीय सम्पूर्ण वाङ्मय परियोजना कार्यालय द्वारा प्रदत्त। )

## हिन्दी के उत्थान में मालवीय जी का योगदान

हिन्दी के उत्थान में मालवीय जी की भूमिका ऐतिहासिक है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नेतृत्व में हिन्दी गद्य निर्माण में संलग्न मनीषियों में मकरंद तथा झक्कड़ सिंह के उपनाम से विद्यार्थी जीवन में रसात्मक काव्य रचना के लिए ख्यातिलब्ध मालवीय जी ने देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा को पश्चिमोत्तर प्रदेश व अवध के गवर्नर सर एंटोनी मैकडोनेल के सम्मुख 1898 ई. में विविध प्रमाण प्रस्तुत करके कचहरियों में प्रवेश दिलाया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन (काशी 1910) के अध्यक्षीय अभिभाषण में हिन्दी के स्वरूप निरूपण में उन्होंने कहा कि "उसे फारसी-अरबी के बड़े-बड़े शब्दों से लादना तैसे बुरा है वैसे ही अकारण संस्कृत शब्दों से गूँथना भी अच्छा नहीं है और भविष्यवाणी की कि एक दिन यह भाषा राष्ट्रभाषा होगी।" सम्मेलन के एक अन्य वार्षिक अधिवेशन (मुम्बई 1919) के सभापति पद से उन्होंने हिन्दी उर्दू के प्रश्न को धर्म का नहीं अपितु राष्ट्रीयता का प्रश्न बतलाते हुए उद्घोष किया कि साहित्य और देश की उन्नति अपने देश की भाषा द्वारा ही हो सकती है। समस्त देश प्रांतीय भाषा के विकास के साथ-साथ हिन्दी को अपनाने के आग्रह के साथ यह भविष्यवाणी भी कि कोई ऐसा दिन आयेगा कि जिस भाँति अंग्रेजी विश्वभाषा हो रही है, उसी भाँति हिन्दी का भी सर्वत्र प्रचार होगा। इस प्रकार उन्होंने हिन्दी का अन्तरराष्ट्रीय रूप का लक्ष्य भी दिया।

सनातन धर्म व हिन्दू संस्कृति की रक्षा और संवर्धन में मालवीय जी का योगदान अनन्य है। जनबल तथा मनोबल में नित्य क्षयशील हिन्दू जाति को विनाश से बचाने के लिए उन्होंने हिन्दू संगठन का शक्तिशाली आन्दोलन चलाया और स्वयं अनुदार सहधर्मियों के तीव्र प्रतिवाद को झेलते हुए भी कलकत्ता, काशी, प्रयाग और नासिक में समाज के लोगों को धर्मोपदेश और मंत्रदीक्षा दी। उल्लेखनीय है कि राष्ट्रनेता मालवीय जी ने जैसा स्वयं पं. जवाहर लाल नेहरू ने लिखा है अपने नेतृत्व काल में अनेक बार धर्मों के सहअस्तित्व में अपनी आस्था को व्यक्त किया।

प्रयाग के भारती भवन पुस्तकालय, मैकडोनेल युनिवर्सिटी, हिन्दू छात्रालय और मिन्टोपार्क के जन्मदाता, बाढ़ भूकम्प, साम्प्रदायिक दंगों व मार्शल ला से त्रस्त दुखियों के आँसू पोछने वाले मालवीयजी को ऋषिकुल हरिद्वार, गोरक्ष और आयुर्वेद सम्मेलन तथा सेवा समिति, ब्यॉय स्काउट तथा अन्य कई संस्थाओं को स्थापित अथवा प्रोत्साहित करने का श्रेय प्राप्त हुआ। उनका अक्षय कीर्ति स्तम्भ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ही है जिसमें उनकी विशाल बुद्धि, संकल्प, देशप्रेम, क्रियाशक्ति तथा तप और त्याग का साक्षात् मूर्तिमान हैं।

# vfXu rÙo % lf"V dh Åtkl dk vk/kkj

## प्रकृति

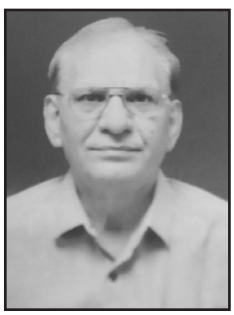




***डॉ० उमेश चन्द वर्मा***

एसोसिएट प्रोफेसर सेवानिवृत्त
दिल्ली विश्वविद्यालय
शिक्षाविद्, विचारक
शैक्षिक, सांस्कृतिक विषयों
पर लेखन,
सामाजिक कार्यकर्ता

***संपर्क***

मो. 9013319761


सम्पूर्ण सृष्टि में मानव जीवन के लिए अग्नि का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। सृष्टि के समस्त जीवन अग्नि के आधार पर ही चलता है। आदिमकाल से ही मनुष्य के क्रिया कलाप, कर्मकाण्ड, आचरण-व्यवहार, चिंतन-विचार, शारीरिक-भौतिक विकास सभी अग्नि से प्रभावित था। यही कारण है कि विश्व साहित्य का प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में सर्वप्रथम अग्नि की ही उपासना की गई है। यहाँ तक की ऋग्वेद का प्रारम्भ ही अग्नि शब्द से होता है। इस प्रकार अग्नि शब्द की उत्पत्ति विश्व साहित्य के प्रथम अक्षर 'अ' से होता है।

*''अग्निमीणे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम*
*होतारं रत्नधातमम् ।''*

हम अग्नि की स्तुति करते हैं, जो यज्ञ (श्रेष्ठतम पारमार्थिक कर्म) के पुरोहित (आगे बढ़ाने वाले), देवता (अनुदान देने वाले), ऋत्विज (समयानुकूल यज्ञ का सम्पादन करने वाले), होता (देवों का आवाहन करने वाले) और याचकों को रत्नों से (यज्ञ के लाभों से) विभूषित करने वाले हैं। अग्नि ऋग्वेद में प्रतिष्ठित देवता है। वैदिक ऋषि ने अग्नि के प्रति कृतज्ञता मंत्रों के माध्यम से व्यक्त की है।

ऋग्वेद के समान अन्य शास्त्रों में भी अग्नि की महत्ता का वर्णन मिलता है। ब्राह्मण ग्रंथों में यह बार-बार कहा गया है कि देवता में प्रथम स्थान अग्नि का है। वैदिक ऋषियों ने अग्नि की सर्वव्यापकता और सर्वसमुपस्थिति का साक्षात्कार किया था। फलस्वरूप उन्होंने मंत्रों के माध्यम से अग्नि के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की है। अतः वे बार-बार अग्नि देवता की स्तवन करते थे।

वैदिक साहित्य के विद्वान डॉ. कपिलदेव द्विवेदी ने वेदों में अग्नि उल्लेख के 2483 मंत्र बताए हैं। अकेले ऋग्वेद में अग्नि सम्बन्धी 200 सूक्त है। भारत के विवाहादि प्रत्येक मंगलकार्य अथवा गर्भाधान से अन्त्येष्टी पर्यंत प्रत्येक संस्कार की साक्षी अग्नि ही बनती है। उपनिषदों में भी अग्नि की उपासना के गीत हैं।

ऋग्वेद में लकड़ी की डालों को अरणि कहा गया है। अग्नि का जन्म अरणि के संघर्षण से हुआ। ऋग्वेद में कहा गया है कि 'काष्ठ लकड़ियाँ अरणि अग्नि की माताएँ हैं। ' एक मंत्र में कहते हैं कि अग्नि वनों के भीतर है -''गर्भों वनानां''। वे पानी के भीतर भी हैं -गर्भों या अपाम्। आदिम मनुष्य ने अग्नि का उपयोग लगभग 10 लाख वर्ष पूर्व सीखा था। मनुष्य ने जंगल में लगी आग देखी, वहाँ से उसे अपने उपयोग के लिए लाए। वे उसे घरों में जलाए रखते थे। ऋग्वेद के ऋषियों ने अग्नि का सुन्दर मानवीकरण किया है। मनुष्य के कर्म का उपकरण हाथ है। अग्नि के हाथ मधुर हैं। अग्नि कवि हैं, वैदिक कवि ऋषि हैं। अग्नि को भी ऋषि कहा गया है, मनुष्य के समान ही अग्नि को घृत प्रिय है, इसीलिए ये अग्नि को घृतपृष्ठा भी कहते हैं। अग्नि दो मुँह वाले देवता हैं और क्रुध भेड़ पर सवार रहते हैं। अग्नि देवता का दो मुँह इस बात का प्रतीक है कि अग्नि जीवनदाता और जीवन भक्षक दोनों है।

वैदिक कवि ऋषि अग्नि को पुत्र मानते हैं। उनसे मनुष्यों जैसा प्रेम करते हैं। ऋषि उनसे कहते हैं कि आप हमारे पुत्र भी हैं -'त्वं पुत्रों भवसि'। अग्नि आकाश में हैं। सूर्य का मूल अग्नि हैं। अग्नि का स्थान प्राची दिशा है जिसका 'ईषु' सूर्य है जो असित से रक्षा करता है।

''प्राची दिगग्निधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योउस्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः। '' अंतरिक्ष में वह विद्युत है, पृथ्वी पर वह है ही। अग्नि ने अपने तेज से द्युलोक, अंतरिक्ष और पृथ्वी को भर दिया है। अग्नि का तेज, ताप कल्याणकारी

है। वे यज्ञ में भिन्न-भिन्न देवों को दी गई आहुतियों को उन-उन देवों तक पहुँचाती हैं।

अग्नि की पीठ घृत से निर्मित है। 'घृतपृष्ठा' इस का मुख घृत से युक्त है, घृतमुख, इस की जिह्वा द्युतिमान् है। दाँत स्वर्णिम, उज्ज्वल तथा लोहे के समान हैं। केश और दाढ़ी भूरे रंग के हैं। जबड़े तीखे हैं। मस्तक ज्वालामय है। इस के तीन सिर और सात रश्मियाँ हैं। इस के नेत्र घृतयुक्त हैं :-घृतम् में चक्षुः। इस का रथ सुनहरा और चमकदार है जिसे दो या दो से अधिक घोड़े खींचते हैं। अग्नि अपने स्वर्णिम रथ में यज्ञशाला में बलि (हवि) ग्रहण करने के लिए देवताओं को बैठाकर लाती हैं।

आचार्य यास्क और सायणाचार्य ऋग्वेद के प्रारम्भ में अग्नि की स्तुति का कारण यह बताते हैं कि अग्नि देवताओं में अग्रणी है। पुराणों के अनुसार अग्नि की पत्नी स्वाहा है। अग्नि सभी देवताओं का मुख है और इस में जो आहुति दी जाती है, वह इन्हीं के द्वारा देवताओं तक पहुँचती हैं।

ऋग्वेद के प्रथम सूक्त में अग्नि की प्रार्थना करते हुए विश्वामित्र के पुत्र मधुच्छंदा कहते हैं कि अग्नि आराध्य हैं। उपास्य हैं, उपयोगी हैं, संरक्षक हैं, पोषक हैं। ''अग्निमीणे पुरोहितं यज्ञस्यदेवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।। ऋग्वेद में अग्नि को धृतपृष्ठा, शोचिषकेश, रक्तश्मश्रु, रक्तदन्त, गृहपति, देवदूत, हव्यावाहन, समिधान, जातवेदा, विश्वपति, दमूनस, यविष्ठ्य, मेध्य आदि नामों से सम्बोधित किया गया है।

अग्नि शब्द ''अगि गतौ'' धातु से बना है। गति के तीन अर्थ हैं :- ज्ञान, गमन और प्राप्ति। इस प्रकार जहाँ विश्व में जहाँ भी ज्ञान, गति, ज्योति, प्रकाश, प्रगति और प्राप्ति है, वह सब अग्नि का ही प्रताप है। अग्नि की निरुक्ति है : ''अग्रणीर्भवतीति अग्निः''। मनुष्य के सभी कार्यों में अग्नि अग्रणी होती है। कोई भी यज्ञ अग्नि के बिना सम्भव नहीं है। याग की तीन मुख्य अग्नियाँ होती हैं- गार्हपत्य, आह्वनीय और दक्षिणाग्नि। गार्हपत्याग्नि सदैव प्रज्ज्वलित रहती है। शेष दोनों अग्नियों को प्रज्ज्वलित किए बिना यज्ञ नहीं हो सकता। फलतः अग्नि सभी देवताओं में प्रमुख है। अग्नि में सभी देवताओं का वास होता है। ''अग्निर्वे सर्वादेवता''। अर्थात् अग्नि के साथ सभी देवताओं का सम्बन्ध है। अग्नि सभी देवताओं की आत्मा है -'अग्निर्वै सर्वेषां देवानाम् आत्माः।'

अग्नि स्वजन्मा, तनूनपात् है। ये स्वतः उत्पन्न होती है। ऋग्वेद के पुरुष सुक्त में अग्नि की उत्पत्ति विराट् पुरुष के मुख से बताई गई है -मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च। अग्नि। अग्नि का मुख्य भोजन काष्ठ और घृत है। आज्य उनका प्रिय पेय पदार्थ है। ये यज्ञ में दी जाने वाली हवि को ग्रहण करती है। अग्नि कवि तुल्य है। वह अपना कार्य विचार पूर्वक करती है। कवि का अर्थ है : क्रान्तिदर्शी, सूक्ष्मदर्शी, विमृश्यकारी। वह ज्ञानवान् और सूक्ष्मदर्शी है। उस में अन्तर्दृष्टि है। अग्निर्होता कविक्रतुः।

अग्नि का मार्ग कृष्ण वर्ण का है। ये विद्युत रथ पर सवार होकर चलती है। जो प्रकाशमान, प्रदीप्त, उज्ज्वल और स्वर्णिम है। वह रथ दो अश्वों द्वारा खीचा जाता है। जो मनोज्ञा, मनोजवा, घृतपृष्ठ, लोहित और वायुप्रेरित है।

अग्नि रोग-शोक, पाप-दुर्भाव, दुर्विचार और शाप तथा पराजय का नाश करती हैं । इसका अभिप्राय यह है कि जिसके हृदय में सत्त्व, विवेकरूपी अग्नि प्रज्ज्वलित हो जाती है, उसके हृदय से दुर्भाव, दर्विचार रोग-शोक के विचार नष्ट हो जाते हैं। वह व्यक्ति पराजित नहीं होता। अग्नि के साथ अश्विनी और उषा रहते हैं। मानव शरीर में आत्मारूपी अग्नि विस्तार है। अश्विनी प्राण-अपान वायु हैं। इनसे ही मानव जीवन चलता है। इसी प्रकार उषाकाल में प्राणायाम, धारणा और ध्यान की क्रियाएँ की जाती हैं। अग्नि वायु की मित्र हैं। जब अग्नि प्रदीप्त है, तब वायु उसका साथ देती है। ''आदस्तवातोअनुवातिशोचिः। ''

आत्मारूपी अग्नि हृदय में प्रकट होती है। ये हृदय में हंस के समान निर्लेप भाव से रहती है। ये उषर्बुध (उषाकाल) में जागने वालों के हृदय में हंस के समान निर्लेप भाव से रहती है। ये उर्षबुध उषाकाल में जागने वालों के हृदय में चेतना का संचार करती है।

अग्नि रूपी आत्मा शरीर में अतिथि के तुल्य रहती हैं और सत्यनिष्ठा से रक्षा करती है। इसका अभिप्राय यह है कि जो व्यक्ति सत्य का आचरण, सत्यनिष्ठ और सत्यवादी है, वे उसकी सदैव रक्षा करती है। ये अतिथि के समान शरीर में रहती हैं, जब उनकी इच्छा होती है, तब प्रस्थान कर जाती है।

संसार नश्वर है, इसमें अग्नि ही अजर-अमर है। यह अग्नि ज्ञानी को अमृत प्रदान करती है। अग्नि रूप परमात्मा मानव हृदय में विद्यमान अमृत तत्त्व है। जो साधक और ज्ञानी हैं, उन्हें इस अमृततत्व आत्मा का दर्शन होता है : ''विश्वास्यामृत भोजन।''

मानव शरीर अन्नमय कोश और प्राणमय कोश वाला स्थूल शरीर है। मनोमय और विज्ञानमय कोश वाला सूक्ष्म शरीर है। आनन्दमय कोश वाला शरीर कारण शरीर है। अग्नि इन तीनों शरीरों में व्याप्त है।

अग्नि इस मानव शरीर के लिए बहुत ही आवश्यक है। इस अग्नि को विद्ववान मनीषी जठराग्नि कहते हैं। यह अग्नि मनुष्य को ओजस्वी बनाती है। उसके तेज से ही हम सबका चेहरा दमकता है। उसकी गरमी से ऊर्जा मिलती है और शरीर स्वस्थ रहता है। यदि शरीर की अग्नि मन्द हो जाए अर्थात मन्दाग्नि हो जाए तब मनुष्य का शरीर रोगी होने लगता है। उस पर सर्दी का प्रकोप बार-बार होता है। मनुष्य का पाचनतंत्र प्रभावित होता है। उसका जीवन प्रभावित हो जाता है।

क्षमा, तेज, बल और ओज आदि सभी गुणों के साथ अग्नि को ग्रहण करना चाहिए। मनुष्य भी क्रोध के आवेश में सारी दुनिया को जलाकर राख कर देने का दावा करता है। इसलिए मनुष्य से

क्षमाशील होने की अपेक्षा की जाती है। दूसरों को क्षमा कर देने वाले तेजस्वी व्यक्ति संसार के अमूल्य रत्न होते हैं। इस अग्नि के बल पर हम साहसी बने रहते हैं। इसके आभाव में मनुष्य का चेहरा तेजहीन, ओजहीन और कान्तिहीन दिखाई देता है।

अग्नि पक्षपात नहीं करती है। जंगलों में लगी आग को दावानल कहते हैं। दावानल सभी प्रकार के हरे-भरे या ठूँठ पेड़-पौधों, पशु पक्षियों, कीट-पतंगों आदि को जलाकर राख कर देती है। सबको समान रूप से भस्मसात् कर देती है। इसी प्रकार समुद्र में लगने वाली आग अर्थात बड़वाग्नि समुद्री जीवों को अपनी चपेट में ले लेती है। 'रघुवंशम्' महाकाव्य में महाकवि कालिदास ने अग्नि के विषय में कहा है -''पावकस्य महिमा स गणयते, कक्षवज्ज्वलति सागरेअपि यः।''

अर्थात् अग्नि का यही महत्त्व गिना जाता है कि वह समुद्र में घास की तरह जलती है। कर्मकाण्ड में अग्नि तीन प्रकार की मानी गई है। यथा गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि। स्भ्याग्नि, आवसथ्य और औपासनाग्नि इन तीन को मिलाकर उनके छह भेद हैं। जिनमें प्रथम तीन प्रधान है। अग्नि की सात जिह्वाएँ मानी गई है जिनके अलग-अलग नाम हैं। जैसे काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, धूर्मवर्णा, उग्रा और प्रदीप्ता।

अग्नि के तीन स्थान और तीन मुख्य रूप हैं। व्योम में सूर्य, अन्तरिक्ष मध्याकाश में विद्युत और पृथ्वी पर साधारण अग्नि। यह अग्नि जठराग्नि, भूताग्नि तथा चिताग्नि के रूप में जानी जाती है। योगाग्नि अथवा ज्ञानाग्नि के रूप में भी ''अग्नि'' का प्रयोग होता है। गीता में इस सम्बन्ध में यह कथन है- ''ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा।'' अर्थात ज्ञानाग्नि सभी कर्मफल को भस्म कर देता है। अग्नि धूम पताका के समान ऊपर की ओर जाती है। इसी कारण से अग्नि को धूमकेतु कहा गया है। वह सभी प्राणियों के ज्ञाता देव हैं अतः इसे जातवेदाः कहा गया है।

अग्नि का आकाश तत्त्व के साथ निकट का सम्बन्ध है। जहाँ अग्नि होती है, वहाँ आकाशिक आयाम तक पहुँचना ज्यादा सरल होता है। दक्षिण भारत में मंदिरों में तथा घरों में दिए में घी या तिल का तेल का प्रयोग किया जाता है। कहीं मुंगफली अथवा नारियल के तेल का भी प्रयोग होता है। तेल से जलने वाली अग्नि में विशेष गुण होते हैं। इनमें दूसरे इंधनों की अपेक्षा धुएँ का बिन्दु ज्यादा ऊँचा होता है। इससे आकाशीय आयाम ज्यादा मिलता है।

घर में अनुकूल शुद्ध वातावरण के लिए तेल अथवा घी का दिया जलाना चाहिए। यह परम्परा भारतीय परिवारों में प्रचलित है। वास्तव में घी/तेल अपने आसपास एक विशेष प्रकार का आभामंडल तैयार करता है। जिससे आकाश तत्त्व को पाना आसान हो जाता है। वातावरण में आकाश तत्त्व को बढ़ा देने से वहाँ उपस्थित लोगों में एक खास तरह की नजदीकी या जुड़ाव होने लगता है। उसी तरह अग्नि के आसपास बैठने से घनिष्ठता और संवाद की संभावना कहीं ज्यादा बढ़ जाती है, क्योंकि जहाँ भी अग्नि होती है वहाँ आकाश तत्त्व प्रबल हो जाता है। भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार की संस्था का मूल आधार यही था। इसी प्रकार खुले आकाश के नीचे अग्नि के चारों ओर बैठकर परस्पर संवाद तथा सौहार्द में वृद्धि होती है। यह परम्परा भारत में अभी तक विद्यमान है। सम्भवतः विदेशों में ''बोन फायर'' के पीछे यही उद्देश्य होता होगा।

बच्चों में गर्भवती महिलाओं, रोगियों के लिए सामान्य स्वास्थ्य प्राप्त करने की दृष्टि से जरूरी से जरूरी है कि घर में तेल का जलता हुआ दिया रखा जाए। यह अग्नि सिर्फ जठराग्नि को हो नहीं बढ़ाती है, बल्कि चिताग्नि को बेहतर बनाने और आकाश तत्त्व को सुगम बनाने में भी सहायक होती है। यदि केवल भौतिक या शारीरिक आग ही जलेगी, प्रज्ञा की आँच नहीं होगी तो जीवन दुखमय और रंगहीन हो सकता है। अतः प्रज्ञा के लिए चिताग्नि का प्रबल होना भी आवश्यक है।

ऋग्वेद में शवदाह का भी उल्लेख है। एक पूरा सूक्त मृतक और अग्नि से सम्बन्धित है। शव को अग्नि समर्पित करते हुए अग्नि की स्तुति करते हुए कहा है कि ''इस मृत शरीर को सुमार्ग से उच्च लोकों में ले जाओ। इसे कष्ट न हो। इसे स्वयं अपने में समाहित करो।

*अग्ने नय सुपथाराये अस्मान्विश्वानिदेव वायुनानि विद्वान।*
*युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनोभूयिष्ठां ते नमउक्तिं विधेम।।*

फिर मृतात्मा से कहते हैं ''तेरी आँखें, आँखों की ज्योति सूर्य से मिले। तेरा प्राण विश्ववायु से मिले। जो अंग जिस दिव्य प्रकृति का प्रसाद है, वह उसी प्रकृति शक्ति के पास लौट जाए।''

*''सूर्य चक्षु गच्छतुवातमात्मा द्यां च पृथिवी च धर्मणा अपो वा गच्छ*
*यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतिष्ठा शरीरैः स्वाहा।''*

सार रूप में कहा जा सकता है कि अग्नि आराध्य है। उपास्य है। मानव जीवन के लिए उपयोगी है, संरक्षक है, पोषक है, पालनकर्ता है, सर्जक कवि है। वाणी का ओजस्, तेजस्, अग्नि से है। प्रकृति की महाशक्ति है अग्नि। काव्य और लेखन तथा सृजन की शक्ति अग्नि देता है। वे स्वयं कवि हैं। वे हमारी स्तुतियाँ देवों तक ले जाते हैं। हम अग्नि को बार-बार नमस्कार करते हैं।

# jkekuqtkpk;Z vkSj mudk fof'k"Vk}Sr oknkUr

## आचार्य-कुल

*डॉ. गिरिधर गोपाल शर्मा*
एसोसिएट प्रोफेसर,
संस्कृत विभाग,
प्राचीन दर्शन, वेद
उपनिषदादि के गहन अध्येता
उक्त विषयों पर अनेक शोध लेखों
का प्रकाशन

*संपर्क*
मो. 9891471308

भारतीय मनीषा का चरमोत्कर्ष वेदान्त दर्शन में प्राप्त होता है। वेदान्त शब्द का अर्थ है जहाँ वेद का अन्त हो यानि उसके बाद का जो साहित्य है वह उपनिषद् है। इन उपनिषदों में वेद के सिद्धान्त को प्रतिपादित व व्याख्यायित किया गया है। अतः उपनिषद् वैदिक रहस्यों के उद्घाटक एवं वैदिक साहित्य के अन्तिम प्रतिनिधि होने से वेदान्त अभिधान से युक्त हैं। बाह्यतः सिद्ध दृश्मान पदार्थ जगत् अत्यन्त व्यापक ब्रह्म तथा जीवात्मा के सम्बन्ध में पूर्ववर्ती साहित्य की अपेक्षा अधिक स्पष्टता हमको उपनिषद् साहित्य में प्राप्त होती है। साथ ही जीव, जगत् एवं ब्रह्म के यथार्थ स्वरूप विवेचन में अनेक परस्पर भिन्न एवं विरुद्ध आख्यान भी इन उपनिषद् साहित्यों में विद्यमान है। उपनिषद् साहित्य की बहुत ही विस्तृत ग्रंथ परम्परा प्राप्त होती है। मुक्तोपनिषद् एक सौ आठ उपनिषदों का उल्लेख करता है। उपनिषद् शब्द का अर्थ है ब्रह्म से सम्बन्धित वैदिक ऋषि की प्रतिभा के चरम विकास के रूप में वह प्रछन्न एवं प्रकृष्ट ज्ञान जिसे गुरुदेव के सान्निध्य में बैठ कर शिष्य प्राप्त करता है। और जिसको प्राप्त करके वह संसारिकता से सर्वथा मुक्त होकर ब्रह्ममय हो जाता है। यह दर्शन श्रुति प्रधान उपनिषद्, स्मृति प्रधान भगवद्गीता तथा न्याय प्रधान ब्रह्मसूत्र रूपी प्रस्थानत्रयी पर आधारित है। जीव तथा ब्रह्म के पारस्परिक सम्बन्ध के विवेचन के आध ार पर ही वेदान्त दर्शन के विभिन्न सम्प्रदायों सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ। उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र और श्रीमद्भगवद्गीता वेदान्त के प्रस्थानत्रयी माने गए हैं। इनमें भी उपनिषद् साहित्य को मूल प्रस्थान माना जाता है तथा शेष दोनों को उस पर आधारित माना जाता है। वेदान्त के आचार्यों में जिन्होंने ब्रह्मसूत्र पर भाष्य लिखकर अपने वेदान्त सिद्धान्तों को प्रतिष्ठापित किया उनमें शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, माध्वाचार्य, निम्बार्काचार्य और वल्लभाचार्य प्रमुख हैं।

शंकराचार्य अद्वैत मार्ग के प्रमुख आचार्यों में से एक हैं। जिनके सिद्धांत को वेदान्त दर्शन में मायावाद के नाम से जाना जाता है। तथा ब्रह्मसत्यजगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैवनापरः को स्थापित करता है। अद्वैतवाद के अनुसार ब्रह्म ही एक मात्र मूल तत्त्व है। संसार को असत्य मानते हुए ब्रह्म की माया शक्ति के द्वारा ही अस्तित्व की प्रतीति सिद्ध करते हैं। माया अनिर्वचनीय है तथा संसार का कारण है। माया से भ्रमित जीव अपने आपको ब्रह्म से भिन्न मानता है, तथा परमतत्त्व को देख नहीं पाता है। वह केवल अपनी देह तक ही सीमित रहता है। कृत-कर्म को अपना मानकर सुख-दुःख के कारण जन्म-मरण को भोगता रहता है। कल्प के अन्त में जब जगत् का प्रलय होता है, उस समय जीव का विचित्र विश्व माया में विलीन हो जाता है। फिर कोई उपाधि नहीं रहती, किन्तु फिर जीव जन्म-मरण को प्राप्त होते रहते हैं जबतक की स्वकर्म का प्रायश्चित नहीं कर लेते हैं। इस प्रायश्चितरूप कर्मकाण्ड की जटिलता होने से एवं उन क्रियाओं पर सभी का अधिकार न होने से वैष्णव धर्म का सर्वकल्याणार्थ प्रादुर्भाव हुआ। जिसमें मानव मात्र को सरल एवं सहजता के साथ भगवान् की प्राप्ति का अधिकार प्राप्त हो गया। यहाँ जाति-पाँति के बन्धन समाप्त हो गए ''हरि को भजे सो हरि का होई। कर्मकाण्ड की कृतिमता का कोई स्थान शेष नहीं रह गया। श्रद्धा और भक्ति ही भगवान् की प्रसन्नता के एक मात्र उपाय थे।

इसी क्रम में वैष्णव सम्प्रदाय के चार स्तम्भों का प्राकट्य हुआ, इनमें श्रीवैष्णव सम्प्रदाय, ब्रह्म सम्प्रदाय, रूद्र सम्प्रदाय और सनक सम्प्रदाय हैं। इन वैष्णव सम्प्रदायों का प्राकट्य भगवान् की प्रेरणा से क्रमशः लक्ष्मी, ब्रह्मा, रूद्र और सनत्कुमार के द्वारा हुआ। इनमें श्रीवैष्णव सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य श्रीरामानुजाचार्य और उनका 'विशिष्टाद्वैत' ब्रह्म सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य मध्व और उनका सिद्धान्त द्वैत, रूद्र सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य

विष्णुस्वामी और उनके अनुयायी वल्लभाचार्य और उनका सिद्धान्त शुद्धाद्वैत एवं सनक सम्प्रदाय के आचार्य निम्बार्क तथा उनका सिद्धान्त द्वैताद्वैतवाद के नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्रीसम्प्रदाय के मूर्धन्य आचार्यों में श्रीरामानुजाचार्य का उल्लेख प्राप्त होता है। इन्हीं को लक्ष्मण भी कहा जाता है। इनका जन्म 1017 ई. में मद्रास के समीप तेरुन्कुन्दुर नामक ग्राम में हुआ। इनके पिता का नाम केशवभट्ट तथा माता का नाम कान्तिमती था। इनका विवाह सोलह वर्ष की अवस्था में हो गया था। विवाह के कुछ ही दिन बाद इनके पिता का देहावसान हो गया था। तदन्तर अध्ययनार्थ अपने गांव को त्याग कर सपरिवार कांची में अद्वैतवाद के वेदान्ती 'यादव प्रकाश' के समीप आ गए। उनके सान्निध्य में वेद-वेदान्त का शिक्षा ग्रहण करने लगे। किन्तु गुरु के साथ दार्शनिक परम्परा को लेकर विवाद होने पर रामानुजाचार्य ने उनके सान्निध्य को त्याग दिए। अन्य वैष्णव सन्तों आचार्यों से विद्योपार्जन करने लगे। कांची में हस्तिशैल पर श्रीनारायण की उपासना करने लगे। यहाँ पर उन्होंने अपने मातुल महापूर्ण के श्रीमुख से यामुनाचार्य आलवन्दार कृत स्तोत्ररत्नम् को श्रवण किया तथा उससे प्रभावित होकर उनसे विद्योपार्जन के लिए श्रीरंगम् की ओर चल दिए। श्रीरंगम् पहुँचने से पूर्व ही यमुनाचार्य जी का बैकुण्ठ गमन हो गया था। यमुनाचार्य के पार्थिव शरीर के हाथ की तीन अंगुलियों को मुड़ा हुआ देखकर और उनको गुरुआदेश मानकर वे गुरुदेव की इच्छा 'ब्रह्मसूत्र', 'विष्णुसहस्त्रनाम' और आलवारों के 'दिव्यप्रबन्धम्' पर टीका लिखवाना चाहते हैं ऐसा मानकर श्रीरामानुजाचार्य इस पर चिन्तन करते हुए कांची वापस आ गए। वहाँ इन्होंने यामुनाचार्य के शिष्य कांचीपूर्ण से दीक्षा लेकर 30 वर्ष की आयु में संन्यास ग्रहण किए। रामानुजाचार्य ने अपने गुरु यामुनाचार्य के सांकेतिक आदेश मानकर स्वयं ब्रह्मसूत्र पर विशिष्टाद्वैतमतानुसारी ''श्रीभाष्य'' नामक ग्रंथ का प्रणयन किया। अपने प्रिय शिष्य कुरेश के पुत्र पराशर भट्ट द्वारा विष्णुसहस्त्रनाम पर भगवद् दर्पण नामक टीका का प्रणयन करवाया। अपने मातुल पुत्र कुरुकेश के द्वारा नम्मालवार के तिरुवायमोलि पर तमिल भाष्य की रचना कर श्री यामुनाचार्य आलवन्दार के तीनों मनोरथों को पूर्ण किया। वस्तुतः श्री रामानुजाचार्य ने यामुनाचार्य के इन सांकेतिक संकल्पों को पूरा करके श्रीवैष्णव समाज पर बड़ा ही उपकार किया।

श्रीवैष्णव जगत् में श्री रामानुजाचार्य के सम्बन्ध में तीन घटनाएँ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। अपने प्रथम गुरु से अष्टादशाक्षर मंत्र ''ओम नमो नारायणाय नमः'' प्राप्त करना और गुरुदेव के आदेश गुप्त रखने के बजाय परमकारुणिक रामानुजाचार्य ने लोकमंगल की कामना से इस मंत्र को जन-जन तक पहुँचाने के लिए भवन के मुड़ेर पर चढ़ कर जोर-जोर से उसका उच्चारित किए। द्वितीय श्रीरंगम् नामक स्थान के शैव राजा कुलोतुंग के कारण श्रीरंगम् का त्याग करना तथा उस राजा ने सन् 1096 ई. में श्रीरामानुजाचार्य को अपने दरबार में छद्म सम्मान के साथ बुलाने का निमंत्रण भेजा और उस समय आचार्य की लगभग आयु 80 वर्ष की थी को इनके पट्ट शिष्य भक्त श्रीकुरेश ने इनको वहाँ जाने नहीं दिया और स्वयं रामानुजाचार्य का वेश धारण कर उस राजा के दरबार में चले गए। वहाँ पर श्रीकुरेश के द्वारा वैष्णव धर्म के सिद्धान्तों की स्थापना में दिए अकाट्य प्रमाणों से क्रोधित होकर उस शैव राजा ने इनके दोनों नेत्रों को निकालने का आदेश दिया। परिणामतः श्रीकुरेश के दोनों नेत्रों को निकाल दिया गया। इस प्रकार श्रीकुरेश ने रामानुजाचार्य की रक्षा की। तृतीय घटना मैसूर के राजा विट्टिदेव को वैष्णव धर्म की दीक्षा देना और उनका नाम विष्णुवर्धन रखना था। इस घटना का समय लगभग 1098 ई. माना जाता है। इसके बाद रामानुजाचार्य ने 1100 ई. में मेलकोट में भगवान् श्रीनारायण के मन्दिर की स्थापना की जहाँ आपने १६ वर्षों तक निवास किया। शैव राजा कुलोतुंग के मृत्यु के बाद 1118 ई. में आप पुनः श्रीरंगम् लौट आए और वहाँ पर 1137 ई. तक आचार्य पीठ को सुशोभित किया।

श्रीरामानुजाचार्य के द्वारा आलवार सन्तों के द्वारा स्थापित भूमि में भक्ति के बीज को बोया गया और दक्षिण में श्रीवैष्णव सम्प्रदायोक्त विशिष्टाद्वैत दर्शन का खूब प्रचार-प्रसार हुआ। आलवार संत तमिल भाषा में निबद्ध श्रीकृष्ण नारायण भक्ति के पदों का भावविभोर होकर गायन करते थे। वहीं श्रीवैष्णव आचार्य संस्कृतनिष्ठ भाषा में भक्तिपरक पद्यों द्वारा भगवान् का स्तवन करते थे। साथ ही भगवान् सेवापूजा में वैदिक विधि विधानों के द्वारा अनुष्ठानादि करते थे। इस प्रकार इस सम्प्रदाय में दो प्रकार से भगवान् का अर्चन-पूजन होता था एक आलवारोक्त तमिल वेद के द्वारा तथा द्वितीय आचार्यों के द्वारा संस्कृत निष्ठ वैदिक विधि के द्वारा। वस्तुतः इन्हीं आचार्यों के द्वारा आलवार सन्तों ने प्रकट भक्ति को शास्त्रीय पीठ पर अभिसिंचित किया यानि सुशोभित पूजित किया। रामानुजाचार्य के बैकुण्ठ प्रयाण के बाद विशिष्टाद्वैत सम्प्रदाय में श्रीनारायण की सेवा-पूजा दो भागों में विभक्त हो गई।

प्रथम टेंकलई मत जो तमिल वेदपद्य को ही सर्वोत्कृष्ट मानता था और उन्हीं के द्वारा भगवान् श्रीनारायण का अर्चन करता था। द्वितीय मत वडकलै नाम से जाना जाता था। इस मत के अनुयायी भक्त दोनों भाषाओं में निबद्ध पद्यों एवं मंत्रों से भगवान् पूजन और अर्चन करते तथा संस्कृत में विशेष आग्रह और आदर स्थापित करता है। इस भेद के साथ इन दोनों टेंकलई एवं वडकलै मतों में प्रपत्ति विषयक भेद विशेष रूप से उल्लेखनीय है। टेंकलई मत के अनुयायी भक्त एक मात्र प्रपत्ति यानि शरणागति को ही मोक्षोपाय के रूप में स्थापित करते हैं। इसकी स्थापना करते हुए भगवान् की प्राप्ति में सर्वसाधनराहित्य की स्थापना करते हैं। इसके विपरीत वडकलै वैष्णव भक्त भगवान् की प्राप्ति प्रपत्ति यानि शरणागति में जीव के लिए कुछ कर्मानुष्ठान की आवश्यकता की स्थापना करते हैं। उन वैदिक अनुष्ठानादि के द्वारा ही

प्रपन्न भाव उत्पन्न होता है और भक्त को भगवान् की कृपा रूप प्रपत्ति यानि शरणागति की प्राप्ति होती है। श्रीवैष्णव सम्प्रदाय में इस प्रपत्ति की उद्‌भावना को दो उदाहरणों द्वारा स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

प्रथम मार्जार यानि बिल्ली का बच्चा स्वयं कोई काम नहीं करता है। वह अपने आप को माता को समर्पित कर देता है। मार्जार माँ ही उसे अपने मुख के उन्हीं दांतों से उठाकर अपने साथ एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती है, जिन दांतों वह शिकारादि अनेक कठोर क्रियाएँ सम्पादित करती है। इस मातृ सन्निधि शरणागति में मार्जार जीव का कोई पुरुषार्थ नहीं होता है। मात्र वह अपनी माँ को अपने आप को समर्पित कर देता है। उसी प्रकार भक्त केवल अनन्यभाव से अपने आपको भगवान् को समर्पित कर देता है। भक्त भगवान् की शरणागति यानि प्रपत्ति करता है। इसमें उस भक्त का कोई पुरुषार्थ रूप कर्मानुष्ठानादि नहीं रहता है।

द्वितीय कपि वानर का बच्चा अपनी माँ को जोर से पकड़ता है। माँ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने में खूब उछलती-कूदती है। किन्तु वह बच्चे को नहीं पकड़ती है। अपितु कपि बालक ही माँ को जोर से पकड़ता है। तथैव भक्त विविध कर्मानुष्ठानों के द्वारा भगवान् की शरणागति प्राप्त करता है। श्रीरामानुजाचार्य के बाद इन दोनों मतों के मूर्धन्य आचार्य श्रीलोकाचार्य तथा इन्होंने इस मत की स्थापना का विशद रूप से वर्णन श्रीवचन भूषण ग्रंथ में किया है। वडकलै मत के प्रमुख आचार्य श्री वेंकटनाथ वेदान्तदेशिक हैं। श्रीरामानुजाचार्य ने श्रीवैष्णव मत के लिए प्रमुखतः आठ पीठों की स्थापना की। जिनमें छः पीठों के आचार्य सन्यास दीक्षा लेकर तथा दो पीठों के आचार्य सद्‌गृहस्थ होकर विशिष्टाद्वैत वेदान्त का प्रचार-प्रसार कर अपनी शिष्य परम्परा के द्वारा पूजित हो रहे हैं।

विशिष्टाद्वैत सिद्धांत के अनुसार तीन पदार्थ हैं चिद्-जीव, अचिद्-जगत् और ईश्वर। इनके अनुसार चिद् जीव रूप से, अचिद् जगत् रूप से, ब्रह्म ईश्वर रूप से प्रकट होते हैं। प्रलय काल में चिद् रूप ब्रह्म और अचिद् रूप ब्रह्म ये दोनों अपने कारणावस्था परमब्रह्म में निवास करते हैं। जब भगवान् सृष्टि की इच्छा करते हैं तब नामरूपात्मक नाना प्रकार वाला यह चिद् रूप जीव और अचिद् रूप जगत् दोनों को अपने में प्रकट कर देते हैं। इनके अनुसार जीव एवं जगत् यद्यपि नित्य तथा स्वतः स्वतंत्र पदार्थ है किन्तु ईश्वर इन दोनों में अन्तर्यामी रूप में विद्यमान रहते हैं। जिससे ये दोनों ईश्वराधीन रहते हैं। चिद् व अचिद् से विशिष्ट ब्रह्म ही रामानुज दर्शन में विशिष्टाद्वैत है। विशिष्टाद्वैतम् अर्थात् विशिष्ट कारण और विशिष्ट कार्य की एकता। सूक्ष्मचिद् चिद् विशिष्ट ब्रह्म कारण है। और स्थूल चिद् जीव और अचिद् जगत् विशिष्ट कार्य ब्रह्म कार्य है अर्थात् दोनों अवस्थाओं में एक हैं। अतः विशिष्टाद्वैत है। ईश्वर का चिद् और अचिद् के साथ शरीर और आत्मा का जैसा सम्बन्ध है। अर्थात् शरीर वह वस्तु है जिसे आत्मा धारण करता है एवं अपनी कार्य सिद्धि के लिए अनेकानेक कार्यों में प्रवृत्त करता है। उसी प्रकार ईश्वर चिद्‌चिद् को आश्रित करता है। नियमन करता है तथा अनेकानेक कार्यो में प्रवृत्त होता है। नियामक होने से प्रधान और विशेष्य कहा जाता है। नियमित और अप्रधान होने से जीव जगत् विशेषण कहलाते हैं। विशेष्य की सत्ता पृथक रूप से सिद्ध है। परन्तु विशेषण विशेष्य के साथ सर्वदा सम्बद्ध होने से कभी अलग रूप में सत्ता युक्त नहीं हो सकता है। अतः त्रिविध तत्त्व के मानने पर भी रामानुज अद्वैतवादी हैं। किन्तु अंगभूत चिद्‌चिद् की अंगीभूत ईश्वर से पृथक सत्ता न होने कारण ब्रह्म अद्वैतरूप है। इसी वैलक्षण्य विशेषता के कारण यह दर्शन विशिष्टाद्वैत दर्शन कहलाता है। इति शुभम्।

## श्री रामानुजाचार्य जी का प्रादुर्भाव

1017 ई. में रामानुज का जन्म दक्षिण भारत के तमिलनाडु प्रांत में हुआ था। बचपन में उन्होंने कांची जाकर अपने गुरु यादव प्रकाश से वेदों की शिक्षा ली। रामानुजाचार्य आलवार सन्त यमुनाचार्य के प्रधानशिष्य थे। गुरु की इच्छानुसार रामानुज से तीन विशेष काम करने का संकल्प कराया गया था ब्रह्मसूत्र, विष्णु सहस्रनाम और दिव्य प्रबन्धम् की टीका लिखना। उन्होंने गृहस्थ आश्रम त्याग कर श्रीरंगम् के यतिराज नामक संन्यासी से संन्यास की दीक्षा ली।

मैसूर के श्रीरंगम् से चलकर रामानुज शालिग्राम नामक स्थान पर रहने लगे। रामानुज ने उस क्षेत्र में बारह वर्ष तक वैष्णव धर्म का प्रचार किया। उसके बाद तो उन्होंने वैष्णव धर्म के प्रचार के लिए पूरे भारत वर्ष का ही भ्रमण किया। 1137 ई. में 120 वर्ष की आयु पूर्ण कर वे ब्रह्मलीन हुए। उन्होंने यू तो कई ग्रंथों की रचना की किन्तु ब्रह्मसूत्र के भाष्य पर लिखे उनके दो मूल ग्रंथ सर्वाधिक लोकप्रिय हुए श्रीभाष्यम् एवं वेदान्त संग्रहम् ।

रामानुज के अनुसार भक्ति का अर्थ पूजा-पाठ या कीर्तन नहीं बल्कि ध्यान करना ईश्वर की प्रार्थना करना है। सामाजिक परिपेक्ष्य से रामानुजाचार्य ने भक्ति को जाति एवं वर्ग से पृथक तथा सभी के लिए सम्भव माना है। इसके अलावा रामानुजाचार्य भक्ति को एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत कर उसके लिए दार्शनिक आधार भी प्रदान किया कि जीव ब्रह्म में पूर्णता विलय नहीं होता है बल्कि भक्ति के द्वारा ब्रह्म से निकटता प्राप्त करना है यही मोक्ष है।

# JhenHkxonxhrk % HkfDr l=

## *चिंतन*



***डॉ० धीरेन्द्र झा***

संस्कृत भाषा व साहित्य के अध्येता
अनेक पुस्तकों के लेखक,
'भाऊराव देवरस सेवान्यास' सम्मान
युवा लेखक सम्मान एवं अनेक
सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्मान प्राप्त
प्राचीन गौरवमयी शिक्षा प्रणाली पर
पुस्तक का प्रकाशन

***संपर्क***

मो. 9939467860

भारतवर्ष देवभूमि है, यहाँ के मानव प्रकृति प्रदत्त सुलभ ऐहिक चिन्ता को छोड़कर पारलौकिक चिंतन में लीन रहते हैं। हमारे देश में अध्यात्म को ही वास्तविक विद्या यानि 'विद्यानाम्' कह कर सर्वश्रेष्ठ ज्ञान माना है। भारतीय दर्शन ग्रंथों में 'श्रीमद्भगवद्गीता' अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। गीता ज्ञानयोग, राजयोग और भक्तियोग की पवित्र त्रिवेणी है। जो अपने सार सहित पृथक्, पृथक् रूप में प्रवाहित हुई है। गीता में प्रधानतया औपनिषद् ज्ञान व दर्शन के मूल तत्त्व विद्यमान हैं। यह भगवान् श्री कृष्ण के द्वारा गाया गया ऐसा पावन प्रेरक गीत है, जो हजारों वर्ष बीत जाने पर आज भी अपनी दिव्यता बनाए हुए है, अपितु समय के साथ-साथ इसकी उपयोगिता, आवश्यकता और प्रासंगिकता अधिकाधिक बढ़ती हुई अनुभव की जा रही है। श्रीमद्भगवद्गीता एक सर्वभौम, सार्वलौकिक, सार्वकालिक तथा चिरंतन धर्मग्रंथ है। इस दृष्टि से विश्वभर में गीता का व्यापक प्रचार हो रहा है। भाग्यशाली व्यक्ति ही इस गीतामृत का पान कर पाते हैं। व्यास के शब्दों में

*''सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।*
*पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।''*

भारतीय जनमानस में अत्यंत ही लोकप्रिय होने के साथ ही विश्व की अनेकानेक भाषाओं में भी इसका अनुवाद हुआ है। प्रसिद्ध विद्वान् विलियम वॉन हम्बोल्ट का कहना है कि ''विश्व की किसी भी सुसमृद्ध भाषा के गीतों में सम्भवतः सर्वाधिक सुन्दर दार्शनिक गीत श्रीमद्भगवद्गीता है। गीता में सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त आदि प्रमुख दर्शनों का सारतत्त्व अन्तर्निहित है, अर्थात् गीता के गूढ़ अध्ययन से ही सभी दर्शनों का सार सुगमता से जाना जा सकता है। महर्षि व्यास कहते हैं

*''गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरै ः।*
*यावयं पदमानाभस्य मुखपद्माद् विनिसृताः ।।*

आज के भौतिकवादी परमाणु युद्धोन्माद ग्रस्त और कोरोनादि मानव आविष्कृत व्याधियों के काल में जब सम्पूर्णतः मानव का अस्तित्व ही खतरे में है। आज सभी लोग सुख शान्ति, करुणा, मैत्री और प्रेमपूर्वक 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के विचार के साथ रहना चाहते हैं। मानव ही नहीं अपितु ब्रह्मांड के प्राणिमात्र में प्रेम, शान्ति एवं सद्भाव का समावेश श्रीमद्भागवद्गीता के अनुशीलन से ही हो सकता है। क्योंकि गीता का मौलिक ज्ञान तत्त्व पर आधारित है। गीता के सभी अध्यायों का नाम योगाधारित है। इसका प्रथम अध्याय अर्जुन विषाद योग, द्वितीय अध्याय सांख्ययोग, तृतीय अध्याय कर्मयोग, चतुर्थ अध्याय ज्ञान-कर्म-संन्यास योग, पंचम अध्याय कर्म-संन्यास योग, षष्ठ अध्याय आत्मसंयम योग, सप्तम अध्याय ज्ञान-विज्ञान योग, अष्टम अध्याय अक्षर ब्रह्मयोग, नवम अध्याय राजविद्या राजगुह्ययोग, दशम अध्याय विभूतियोग, एकादश अध्याय विश्वरूप दर्शन योग, द्वादश अध्याय भक्तियोग, त्रयोदश अध्याय क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभागयोग, चतुर्दश अध्याय गुणत्रय विभागयोग, पंचदश अध्याय पुरुषोत्तमयोग, षोडश अध्याय दैवासुरसम्पद विभागयोग, सप्तदश अध्याय श्रद्धात्रय विभागयोग एवं अष्दश अध्याय मोक्षसंन्यासयोग है।

गीता के अनुसार प्रेम शरीर या सुन्दरता को देखकर नहीं होता है। भक्ति हृदय से होती है, जहाँ दो हृदय मिल जाते हैं वहीं भक्ति जन्म लेती है। गीता के बारहवें अध्याय में प्रत्येक जीवमात्र के प्रति भक्तिभाव के जागरण के निमित्त 30 जीवन मूल्यों को अपनाने पर जोर दिया गया है।

**अद्वेष्टा** – सब जीवों में एक ही चेतन सत्ता विद्यमान है। अतः सभी प्राणियों से द्वेष रहित सद्व्यवहार करना।

**मैत्री** – सब जीवों के प्रति मैत्री या दोस्ती का भाव मनसा, वाचा, कर्मणा रखना।

**करुणा** – दूसरे प्राणियों के दुःख-सुख को

समझने का भाव तथा दुःखों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

**निर्मम** – किसी वस्तु या प्राणी को मैं एवं मेरेपन के भाव से मुक्त होकर अपने समान ही समझना।

**निरहंकार** – अहंकार अर्थात् 'मैं' ही सब कुछ। इस भाव का त्याग करना।

**समदुःखसुखः** – सुख एवं दुख में समान भाव से रहना।

**क्षमा का भाव रखना** – अपने आपको दूसरों के लिए क्षमावान् बनाना। भूलवश अपराध होने पर अभय प्रदान करना।

**संतुष्ट** – सदा सन्तोष रखना, कुछ प्राप्त हो या न हो यानि प्राप्त-अप्राप्त दोनों अवस्थाओं में प्रसन्न रहने का भाव को प्रभुप्रसाद समझना।

**योगी** – ध्येय के प्रति एकनिष्ठ भाव से बिना कोई समझौता करते हुए आगे बढ़ते रहना।

**यतात्मा** – मन, बुद्धि, आत्मा, चित्त व अहंकारादि वृत्तियों व इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार एवं मन को एकलक्ष्योन्मुख बनाए रखना।

**दृढ़निश्चयी** – निश्चित की हुई बातों पर सभी प्रकार की परिस्थितियों में टिका रहने वाला जो किसी को भी न उद्वेग प्रदान करता है, न ही उद्वेगित होता है।

**हर्षाहर्षमुक्तिः** – जो किसी भी किसी प्रकार की मूल्यवान शुभ वस्तु, पदार्थ अथवा व्यक्ति से वाहवाही अथवा निन्दा प्राप्त करने पर प्रसन्न व अप्रसन्न नहीं होता है।

**शुचिः** – जो बाहर व भीतर से पूर्णतः शुद्ध। शरीर एवं अन्तःकरण से पूर्णतया पवित्र रहता है।

**दक्षः** – चतुरता से युक्त, कार्यकुशल एवं आलस्य से रहित ।

**उदासीनः** – कठिनाइयाँ, बाधाएँ, सुविधा-असुविधाओं के प्रति निरपेक्ष भाव से रखना।

**गतव्यथः** – इच्छाओं की अतृप्ति में भी भय एवं व्यथा से मुक्त रहना।

**सर्वारम्भ परित्यागी** - इसका अर्थ है कि सब कार्यों को त्याग कर आलसी बनना नहीं अपितु इसका सही अर्थ है कर्तव्य के अभिमान को त्याग कर सर्वथा निरहंकार रहकर कर्म करना।

**हृष्यति** – जिसे सुख-दुखः आदि न आकर्षित करते हों और न ही विचलित करते हों।

**न शोचति न कांक्षतिः** – इष्ट की प्राप्ति पर हर्षित भी न होना और नहीं मिलने पर शोकग्रस्त न होना।

**मानः अपमानः समत्वम्** – मान अथवा अपमान मिले, प्रत्येक स्थिति में समभाव रहना।

**मौनी** – मनन करने वाला। संतुष्ट जो शरीर के लिए आवश्यक है उसी से निर्वाह कर लेना।

**अनिकेतः** – जो निवास स्थान में ममता और आसक्ति से रहित होता है।

**स्थिरमतिः** – जो स्थिर बुद्धि का होता है। शत्रु या मित्र के साथ समतापूर्ण व्यवहार करना। एक योगी के समान मानसिक प्रक्रिया बने ऐसा होना चाहिए।

गीता में प्रदत्त उपर्युक्त जीवनमूल्यों को जीवन में उतारने एवं प्रत्येक का मनन कर उपयोग में लाने पर ही मानव जीवन में भक्ति भाव का जागरण किया जा सकता है।

समाज में दिव्यता को सर्वव्यापक बनाने की दृष्टि प्रदान करते हुए श्रीमद्भगवद्गीता के तृतीय अध्याय में बताया गया है कि ''समाज के श्रेष्ठ पुरुषों का जीवन व आचरण यदि भक्तिपूर्ण होगा तभी समाज में भक्ति व उत्तम आचरण प्रवाहित हो सकेगा। इस दृष्टि से समाज को यशस्वी नेतृत्व प्रदान करने वालों में कुछ विशेष गुणों व क्षमताओं का होना आवश्यक है। श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं –

*''दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।*
*वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ।।''*

जो व्यक्ति दुःख आने पर उद्विग्न नहीं होता तथा सुख प्राप्त होने पर सर्वथा निस्पृह रहता है। ऐसा स्थिर बुद्धि वाला मनुष्य यशस्वी होता है। समाज या संगठन या संस्था का नेतृत्व ऐसे ही प्रेम भाव से परिपूर्ण लोग ही सफलतापूर्वक कर सकते हैं। इसे संपुष्ट करते हुए कहा गया है कि –

*'' यः सर्वत्रानभिस्नेहंस्तत्तत्प्राप्यं शुभाशुभम् ।*
*नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।''*

जो पुरुष सर्वत्र पक्षपातरहित स्नेहयुक्त होकर शुभ और अशुभ की चिन्ताओं से ऊपर रहकर न द्वेष या हर्ष करता है। वह स्थिरबुद्धि व्यक्ति ही प्रेम की पराकाष्ठा को प्राप्त कर सकता है।

श्रीमद्भगवद्गीता प्रत्येक प्राणी को अपना कार्य एकनिष्ठ होकर भक्तिपूर्वक सम्पन्न करने, कार्य की सफलता के लिए सहयोगी जन, मित्रों, कार्यकर्ताओं और समाज के प्रति प्रेम व कृतज्ञता का भाव रखने की प्रेरणा देती है। जीवन प्रबंधन के शास्त्र के रूप में श्री भगवत गीता की सम्पूर्ण विश्व में प्रतिष्ठा है।

श्रीमद्भगवद्गीता के तृतीय अध्याय में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि –

*''सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।*
*कुर्याद्विवांसस्तथा सक्ताश्चिकीर्षु लोकसंग्रहम् ।।*

जिस प्रकार अज्ञानी जन फल की आसक्ति से कार्य करते हैं उसी तरह विद्वज्जनों को चाहिए कि वे लोगों को प्रेमपूर्वक उचित पथ पर ले जाने के लिए अनासक्त भाव से कर्म करके लोक संग्रह का कार्य करें।

भारतीय दर्शन के मत में व्यष्टि रूप से आत्मा और समष्टि रूप से परमात्मा इस सृष्टि के जड़ और चेतन सभी में भक्ति भाव आत्म तत्त्वरूप में व्याप्त है। देह जो जड़ आत्मरूप में प्रेम में स्वरूप ईश्वर तत्त्व सबमें परिव्याप्त है। यह आत्मा इस देह के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। अतः मनुष्य को व्यक्ति कहा जाता है। अज्ञान वश व्यक्ति आत्मस्वरूप प्रेमरूप ईश्वर को भूलकर देहाभिमान में लिप्त हो जाता है। इसलिए बुद्धिमान् मनुष्य को न स्वर्ग की और न ही नरक की अभिलाषा करनी चाहिए। मानव शरीर मृत्युग्रस्त है। किन्तु साधना करने से परमार्थ एवं सत्यस्वरूप ईश्वरीय प्रेम की प्राप्ति होती है। इसके लिए मन को एक क्षण के लिए स्वतंत्र न छोड़ कर व इसकी प्रत्येक गतिविधियों पर नियंत्रण जरूरी है। व्यक्तिगत जीवन के साथ समाज व व्यवहार में सर्वत्र प्रेमतत्व का संचार हो। गीता में कहा गया है कि -

*''कर्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत्।*
*विश्वमेकात्मकं पश्यन् प्रकृत्यापुरुषेण च। ''*

जब व्यक्ति ज्ञान दृष्टि का आधार लेकर सब को एक दृष्टि से देखता है तो उसके मन में धीरे-धीरे भक्तिभाव का जागरण होता है व अज्ञानता समाप्त हो जाता है। उसके चित्त से स्पर्धा, ईर्ष्या, तिरस्कार व अहंकारादि दोष दूर हो जाते हैं। उसे सर्वत्र प्रेम और भक्ति स्वरूप परमब्रह्म का अनुभव होता है।

यथा

*'' सर्वं ब्रह्मात्मकं तस्य विद्ययाऽऽत्मृमनीषया ।*
*परिपश्यन्नुपरमेत् सर्वतो मुक्तसंशय ः।।''*

आत्मबुद्धि, ब्रह्मबुद्धि का निरन्तर अभ्यास व चिंतन करने से प्रेमस्वरूप सच्चिदानन्द ब्रह्मस्वरूप ज्ञान की प्राप्ति होती है। संदेह एवं संशय नष्ट हो जाते हैं और भगवत्साक्षात्कार होता है। यथा

*''न ते मामगं जानन्ति हृदिस्थं च इदं यतः ।*
*उक्थशस्त्रा ह्यसुप्तो यथा नीहार चक्षुषः ।।''*

राजा परीक्षित ने कहा है ''जो वाणी प्रेमपूर्वक भगवान् के गुणों का गान करती है। वही सच्ची वाणी है। जो हाथ भगवान् की सेवा करते हैं वे ही सच्चा हाथ हैं। वही सच्चा मन है जो चराचर प्राणियों में निवास करने वाला सच्चिदानन्द स्वरूप भगवान् का स्मरण करता है। यथा -

*''सर्वभूतेषुमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि त।*
*ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शन ः ।।''*

आज के इस भूमंडलीकरण बाजारीकरण में अर्थ की सत्ता सर्वोपरि है। आज धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्ट्य में 'अर्थ देवो भव', 'कामदेवो भव' का बोलबाला सर्वत्र दिख रहा है। सर्वत्र भौतिक सुख-सुविधाओं का ही परचम लहरा रहा है। विश्वग्राम की संकल्पना साकार हो रही है। इंटरनेट, ईमेल के कारण 'कर लो दुनिया मुट्ठी में' का नारा साकार हो रहा है। लेकिन आज धन की लोलुपता, स्वार्थपरता स्वकेन्द्रित स्वभाव का प्रभाव व्यक्ति व समाज पर दृष्टिगोचर हो रहा है। जीवन मूल्यों, मानवीय मूल्यों के ह्रास के कारण सर्वत्र असंतोष, भय, अनाचार, संघर्ष एवं हिंसा का साम्राज्य स्थापित हो गया है।

सेवा, दया, परोपकार, क्षमा का कहीं पर नामोनिशान नज़र नहीं आता है। अगर कोई कर लेने की ठान लेता है तो उसमें उसे प्रसिद्धि प्राप्त करने का आरोप लगता है। हमारी पारलौकिक उन्नति घटने लगी है। भोगवृत्ति व्यापक रूप से स्वीकार्य हो गई है। मनुष्य के पास प्रेमस्वरूप 'वासुदेवशक्ति' का क्षरण हो रहा है। जिसके संरक्षण व प्रेम तत्त्व (सत्, चित् व आनन्द) के विस्तार हेतु श्रीमद्भगवद्गीता ही एकमात्र मुक्ति का मार्ग है।

आचार्य विनोबा जी ने कहा है कि ''जहाँ मनुष्य की पुरुषार्थ शक्ति क्षीण होने लगती है, वहाँ भक्ति व प्रेम की आवश्यकता होती है। यह वासुदेवशक्ति, ईश्वरीय शक्ति की प्राप्ति मनुष्य को भक्ति से होती है। स्वशक्ति और ईश्वरशक्ति में फर्क है। कुछ शक्ति भगवान् दे देता है तथा कुछ अपने पास रखता है जो भक्ति से प्राप्त होती है। इसके लिए तप, साधना, आत्मनिग्रह, धैर्य, प्रेम और ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण आवश्यक है। यथा -

*''तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत् मत्परः ।*
*वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।। ''*

सभी इन्द्रियों को वशीभूत कर ईश्वरपरायण बनना ही जीवनमुक्ति है। इसे ही प्रेम की पराकाष्ठा और परमागति कहते हैं -

*'' बुद्धिश्च न विचष्टते तमाहुः परमां गतिम् ।''*

*अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ।।*
*संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः। मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ।।*

जो किसी से द्वेष नहीं करता, लेकिन सभी जीवों का दयालु मित्र है, जो अपने को स्वामी नहीं मानता और मिथ्या अहंकार से मुक्त है, जो सुख-दुख में समभाव रहता है, सहिष्णु है, सदैव आत्मतुष्ट रहता है, आत्मसंयमी है तथा जो निश्चय के साथ मुझमें मन तथा बुद्धि को स्थिर करके भक्ति में लगा रहता है, ऐसा भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय है।

# xhrk jgL; % ,d vnHkqr d`fr

## *चिंतन*

***डॉ. आशीष मुकुंद पौराणिक***
उप-प्राचार्य,
बृहन्महाराष्ट्र वाणिज्य महाविद्यालय
पुणे
व्यवस्थापन परिषद् सदस्य,
डेक्कन एजुकेशन सोसायटी,
कोषाध्यक्ष
विद्या भारती पश्चिम महाराष्ट्र

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने अपने जीवन काल में शिक्षा, संस्कृति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीति, अध्यात्म आदि अनेक विषयों पर अपने विचारों का प्रस्तुतिकरण किया है। उन्होंने अन्तरिक्ष विज्ञान शास्त्र पर भी 'ओशियन, द ऑर्किटेक्ट होम इन वेदाज' आदि ग्रंथों के आधार पर अपने अध्ययन और विचार द्वारा एक नई दिशा निर्मित की है। 20 वीं शताब्दी के शुरुआती दौर में जब भारतीय तत्त्वज्ञान और जीवन पद्धति को अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर गलत तरीके से समझा और देखा जा रहा था तब 'भारतीय दर्शन' और पौराणिक ग्रंथों के मौलिक मूल्यों का विश्लेषण वे सबके सामने लाए और भारतीय ग्रंथों का आधार वैज्ञानिक है ये पूरे जगत् की समझ में आया। इस हेतु से अनेक ग्रंथों के लेखक के रूप में उनकी पहचान बहुत कम लोग जानते हैं। लोकमान्य तिलक आध्यात्मिक पुरुष थे। उन्होंने गीता रहस्य नाम से एक बृहद् ग्रंथ माण्डले के कारावास के दौरान लिखा और भगवद्गीता के कर्म योग पर अर्थानुसार विस्तृत विश्लेषण सबके सामने लाए।

श्रीमद्भगवद्गीता पर संस्कृत में अनेक ग्रंथ व देशी भाषाओं में अनुवाद सर्वमान्य निरुपित है। फिर भी 'गीता रहस्य' यह ग्रंथ क्यों प्रकाशित हुआ?

आरम्भ के कुछ पृष्ठों में तिलक महाराज ने कुछ ऐसी बातों का प्रतिपादन किया जिसके आधार पर गीता रहस्य का महत्त्व अपने आप पूर्ण हो जाता है। लोकमान्य तिलक जी का लेखन इतना स्तरीय और बिना पूर्वाग्रह के है कि वे स्वयं इस बात का उल्लेख करते हैं कि भगवद्गीता की अनेक टीकाएँ लिखी गईं है उनमें इसको कर्मयोग न बताते हुए उसके कर्मयोग के दृष्टिकोण को झूठा साबित करने का भी प्रयास अनेक ग्रंथों या लेखों में किया गया है। केवल भारतीय ही नहीं बल्कि कई विदेशी लेखकों का भी उल्लेख तिलक महाराज ने अपनी प्रस्तावना तथा पहले प्रकरण में किया है। अनेक लोगों द्वारा विस्तृत लेखन भगवद्गीता को मोक्ष प्रधान या निवृत्ति प्रधान मानकर किए गए पर तिलक महाराज का कहना है कि भगवद्गीता कर्म प्रधान है। गीता में 'योग' शब्द ही कर्मयोग के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। महाभारत, वेद, उपनिषद्, तथा अन्य हिन्दू ग्रंथों का आधार लेकर श्रीमद्भगवद्गीता का सम्पूर्ण कर्मयोग दर्शन तिलक महाराज ने इस ग्रंथ में निरुपित किया है। टीकाकारों के विविध मतों का संग्रह कर उसकी अपूर्णता को सकारण दिखाना व उसके निराकरण हेतु पाठकों के मन से वह दूर हो जाएँ, इस विचार से लोकमान्य तिलक महाराज ने श्रीमद्भगवद्गीता पर 'गीता रहस्य' नाम से ग्रंथ लिखा।

गीता रहस्य की प्रस्तावना में लोकमान्य तिलक जी ने कहा कि मैंने गीता के अनेक संस्कृत भाष्य, टीकाएँ और अनेक विद्वानों के मराठी तथा अंग्रेजी में लिखे विवेचन पढ़े किन्तु मन की शंकाओं का समाधान नहीं हुआ। अपने स्वजनों के साथ युद्ध को महान कुकर्म मानकर दुखी हुए अर्जुन को युद्ध के लिए उद्धत होने के लिए प्रेरित करने वाली गीता में ब्रह्मज्ञान व मोक्ष मार्ग का विवेचन कैसे हो सकता है? यह समझ में नहीं आ रहा था। जब समस्त टीकाओं और भाष्यों को लपेटकर एक ओर रख दिया और विचारपूर्वक स्वयं गीता का कई बार परायण व अध्ययन किया तब इस भाव का बोध हुआ।

गीता रहस्य के प्रारम्भ में तिलक महाराज ने उद्धृत किया है कि उनको श्रीमद्भगवद्गीता कर्मयोग शास्त्र क्यों लगा? इसका विवरण देते हुए तिलक महाराज ने आदि शंकराचार्य जी से लेकर अलग-अलग सिद्धांतों का आधार लिया है और मूलतः धर्म विचार को सब समाज के सामने लाने का अथक प्रयास किया है।

आदि शंकराचार्य का जन्म विक्रमसंवत् 845 (शक संवत् 710) में हुआ था। श्री

शंकराचार्य अलौकिक विद्वान् थे। उन्होंने श्रुति-स्मृति विहित वैदिक धर्म की रक्षा के लिए भरतखंड की चारों दिशाओं में चार मठ बनाकर वैदिक धर्म की कलियुग में रक्षा करते हुए पुनर्जीवित कर दिया।

शंकराचार्य के कथन के बारे में तिलक महाराज ने कहा है कि मनुष्य की आँख से दिखने वाले सम्पूर्ण जगत की अनेकता असत्य है। इन सबमें एक ही शुद्ध नित्य परमब्रह्म विद्यमान है और उसी की माया में मनुष्य की इन्द्रियों को इन वस्तुओं में भिन्नता का आभास होता है। मनुष्य की आत्मा भी मूलतः परमब्रह्म स्वरूप ही है, जिसे आत्मन् कहा गया है। आत्मा और परमब्रह्म की एकात्मता का अनुभवसिद्ध पूर्ण ज्ञान हुए बिना कोई भी मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। यह अद्वैतवाद है। एक शुद्ध बुद्ध, नित्य और मुक्त परमब्रह्म के अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु स्वतंत्र और सत्य नहीं है। जो भिन्नता दृष्टिगोचर होती है, वह मानवीय दृष्टि का भ्रम या माया निर्मित आभास मात्र है। माया भी कोई स्वतंत्र या सत्य वस्तु नहीं है, वह भी मिथ्या है। यही उस उक्त सिद्धान्त का तात्पर्य है।

तत्त्वज्ञान निरूपण में शंकराचार्य ने इसके आगे भी मंतव्य व्यक्त किया, जिसके अनुसार चित्त शुद्धि के द्वारा ब्रह्म और आत्मा में एक्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए बिना मोक्ष नहीं मिल सकता। सब वासनाओं और कर्मों से छूटे बिना ब्रह्मज्ञान की पूर्णता संभव नहीं। इस दूसरे सिद्धांत को निवृत्ति मार्ग भी कहते हैं।

तिलक महाराज बताते हैं कि शंकराचार्य के 250 वर्ष बाद श्री रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत मत प्रस्थापित किया, वे भागवतधर्मी थे। उनका मत था कि शंकराचार्य जी के माया मिथ्यावाद और अद्वैत मत सिद्धांत दोनों ही गलत हैं। जीव, जगत् और ईश्वर ये तीन तत्त्व यद्यपि भिन्न हैं तथापि जीव यानि चित और जगत् यानि अचित ये दोनों एक ही ईश्वर के शरीर हैं। ईश्वर शरीर के सूक्ष्म चित-अचित से ही स्थूल चित अर्थात् अनेक जीव और स्थूल अचित अर्थात जगत् की उत्पत्ति हुई है। उन्होंने तत्त्वज्ञान की दृष्टि से विशिष्टाद्वैत तथा आचरण की दृष्टि से मुख्यतः वासुदेव भक्ति पर जोर दिया। उन्होंने शंकराचार्य के अद्वैत मत के बदले विशिष्टाद्वैत तथा संन्यास के स्थान पर भक्ति को प्रतिस्थापित करने का प्रयत्न किया। तिलक महाराज की दृष्टि से इन दोनों मतों में कोई अधिक अंतर नहीं है। रामानुज मत में भी कर्माचरण से चित्त शुद्धि से ज्ञान प्राप्ति उपरांत प्रेमपूर्वक निस्सीम वासुदेव भक्ति का उपदेश एक प्रकार से निवृत्ति मार्ग ही तो है।

अद्वैत मत द्वारा माया को मिथ्या कहने के स्थान पर वासुदेव भक्ति को ही सच्चा मोक्ष साधन बताने वाले विशिष्टाद्वैत के बाद द्वैत मत सामने आया। उसका मत था कि परमब्रह्म और जीव के कुछ अंशों में एक, और कुछ अर्थों में भिन्न मानना असंगत है। अतः दोनों को सदैव ही भिन्न मानना चाहिए। इस मत के प्रवर्तक थे श्री माध्वाचार्य। उनके गीता भाष्य में उल्लेख है कि निष्काम कर्म भी केवल साधन है, भक्ति ही अंतिम निष्ठा है। भक्ति की सिद्धि हो जाने के बाद कर्म करना या न करना एक ही बात है।

रामानुजाचार्य और मध्वाचार्य के उपरांत वैष्णवपंथी श्री वल्लभाचार्य, जिन्हें महाप्रभु जी कहा जाता है, जिन्होंने अपनी 84 बैठकों द्वारा समाज का मार्गदर्शन किया, उन्होंने माना कि मायारहित शुद्ध जीव और परमब्रह्म और ईश्वर एक ही वस्तु है दो नहीं। इसलिए उन्हें शुद्धा द्वैती कहा गया। उनके सिद्धांत कुछ ऐसे हैं जैसे जीव अग्नि की चिंगारी के समान ईश्वरीय अंश है और मायात्मक जगत् मिथ्या नहीं है। माया परमेश्वर की इच्छा उससे विभक्त एक शक्ति है। अतः जीव को ईश्वर की कृपा से ही मोक्ष संभव है। इसलिए मोक्ष का मुख्य साधन भगवत्भक्ति ही है। इस मार्ग वाले परमेश्वर के अनुग्रह को 'पुष्टि' कहते हैं। इसलिए यह पंथ पुष्टिमार्ग भी कहा जाता है।

कर्म करने की आवश्यकता और महत्त्व बताते हुए तिलक महाराज ने कुछ आधार और उदाहरण दिए हैं। सब से पहले गीता में भगवान् श्री कृष्ण ने कर्मयोग की कुछ भिन्न परिभाषा दी है, उनका विचार है कि इन्द्रियों और मन की वृत्तियों का नाश करने के स्थान पर उन्हें अपने अधीन रखना चाहिए।

*न जातु कामः कामानां उपभोगेन शाम्यति।*
*हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ।।*

अर्थात् ''सुखों के उपभोग से विषय वासना की तृप्ति तो नहीं होती, किन्तु विषय वासना निरन्तर उस प्रकार बढ़ती है, जैसे अग्नि की ज्वाला घृत से बढ़ती है।''

महाभारत में कहा गया - ''असंतोषस्य नास्त्यन्तः तुष्टिस्तु परमं सुखं।'' असंतोष का अंत नहीं, संतोष ही परम सुख है। किन्तु इसका भाव यह नहीं है कि उत्कर्ष के लिए प्रयत्न ही न किया जाए। यदि हम असंतोष का पूर्णतः नाश कर डालेंगे तो न केवल इस लोक में वरन् परलोक में भी हमारी सद्गति होगी। भर्तृहरि ने कहा है - 'यशसि चाभिरुचिव्यसनं श्रुतौ।' यश के लिए रुचि या इच्छा अवश्य होनी चाहिए। भर्तृहरि ने आगे कहा 'मानसि च परितुष्ट कोऽर्थवान् को दरिद्रः।' यानि मन के प्रसन्न होने पर क्या अमीरी और क्या दरिद्रता। भगवद्गीता में कहा गया -आत्मनिष्ठ बुद्धि की प्रसन्नता से जो सुख मिलता है वही श्रेष्ठ और सात्विक सुख है। मनु संहिता के चौथे अध्याय में कहा गया -

*यत्कर्म कुर्वतोऽस्य स्यात परिशोअंतरात्मनः।*
*यत्प्रयत्नेन कुर्वीत विपरीतं तु वर्जयेत् ।।*

'वह कर्म प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए जिसके करने से हमारी अंतरात्मा संतुष्ट हो और इसके विपरीत कर्म छोड़ देना चाहिए।' याज्ञवल्क्य जी ने कहा -

*वेद स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियात्मनः।*

*एतच्चतुर्विधम् प्राहुः साक्षात् धर्मस्य लक्षणं ।।*

वेद, स्मृति, शिष्टाचार और अपनी आत्मा को प्रिय होना धर्म के चार मूल तत्त्व हैं। मन के सदृश बुद्धि भी शरीर का धर्म है। पूर्व कर्म के अनुसार परम्परानुसार या आनुवंशिक संस्कारों के कारण अथवा शिक्षा आदि अन्य कारणों से बुद्धि कम या अधिक, सात्विक, राजसी या तामसी हो सकती है। यही कारण है कि कोई एक बात को ग्राह्य तो दूसरे को अग्राह्यय लगती है। गीता के अठारहवें अध्याय में एक ही बुद्धि के तीन भेद कहे गए हैं :-

*प्रवृत्ति च निवृत्ति च कार्याकार्ये भयाभये।*
*बन्धे मोक्षं या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्विकी ।।*

''सात्विक बुद्धि वह है जिसे इसका ज्ञान है -कौन सा काम करना और कौन सा नहीं, इस बात से डरना चाहिए और किससे नहीं, किसमें नहीं, किसमें बंधन है और किसमें मोक्ष''।

*यथा धर्ममधर्म य कार्य या कार्यमेव च।*
*अयथावत्प्रज्ञानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी।।*

धर्म और अधर्म करणीय और अकरणीय का निर्णय किए बिना जो बुद्धि केवल भला करती है, वह राजसी है।

*अधर्म धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ।*
*सर्वाथानविपरीतांश्च बुद्धिः या पार्थ तामसी ।।*

अधर्म को ही धर्म मानने वाली अथवा सब बातों का विपरीत निर्णय करने वाली बुद्धि तामसी कहलाती है। जिस प्रकार एक मनुष्य कोई काम करने से पहले यह विचार कर लेता है कि उसे वह काम करना है या नहीं और करना है तो किस प्रकार का करना है, उसी प्रकार परमात्मा को इच्छा हुई और उन्होंने विचार किया-'बहुस्याम प्रजायेय' अर्थात् हमें अनेक होना चाहिए उसके बाद सृष्टि उत्पन्न हुई। सांख्य मत के अनुसार जिस प्रकार मनुष्य को कुछ काम करने की बुद्धि पहले होती है उसी प्रकार प्रकृति को भी अपना विस्तार करने की बुद्धि पहले होती है। किन्तु प्रकृति अचेतन या जड़ होने से उसे अपनी बुद्धि का ज्ञान नहीं रहता। आधुनिक सृष्टिशास्त्रज्ञ भी अब स्वीकारने लगे हैं कि गुरुत्वाकर्षण, लौह चुम्बक का आकर्षण तथा अपसारण आदि जड़ प्रकृति में दिखाई देने वाले गुणों का मूल कारण ठीक तरह बतलाया नहीं जा सकता। आधुनिक वैज्ञानिकों के उक्त मत पर ध्यान देने से सांख्य मत का यह विचार आश्चर्यजनक प्रतीत नहीं होता कि प्रकृति में पहले बुद्धिगुण का प्रादुर्भाव होता है। अव्यक्त प्रकृति में निर्मित होने वाली यह बुद्धि भी प्रकृति के ही समान सूक्ष्म होती हैं किन्तु उसके समान अव्यक्त नहीं होती -मनुष्य को इसका ज्ञान हो सकता है।

बुद्धि के बाद उत्पन्न होने वाले पृथकता के गुण को ही अहंकार कहते हैं। 'मैं-तू' के पृथकतासूचक शब्द ही अहंकार का प्रतीक होते हैं। प्रकृति में भी उत्पन्न होने वाले इस अहंकार के गुण का प्रकटीकरण पारे के जमीन पर गिरने के बाद बनने वाली छोटी-छोटी गोलियाँ हैं। पेड़, पत्थर, पानी एकरूप प्रकृति से ही उत्पन्न होते हैं। भेद केवल इतना है कि चैतन्य न होने के कारण उन्हें 'अहम्' का ज्ञान नहीं होता या यूँ कहें कि मुँह न होने से वे कह नहीं सकते। सारांश यह कि अभिमान या अहंकार का तत्त्व सब जगह समान ही है। अहंकार बुद्धि का ही एक भाग है। अतएव सांख्यों ने निश्चित किया कि अहंकार बुद्धि के बाद का गुण है।

लोकमान्य ने 4 भाग और 15 प्रकरणों में विस्तृत रूप से हर एक संवाद या तत्त्व को सांख्यशास्त्र, न्यायशास्त्र, वैशेषिकशास्त्र, योगशास्त्र, मीमांसाशास्त्र, वेदान्तशास्त्र इन 6 शास्त्रों के आधार पर समय रूप से सब के सामने रखा है। कई जानकार यह कहते हैं कि तिलक महाराज द्वारा लिखे गए इस ग्रंथ की भाषा समझने में कठिन है पर इतनी आसान भाषा में, इतने कम शब्दों में इतना सारा ज्ञान लिखना यह बात आसान नहीं होती। तिलक महाराज द्वारा लिखे हुए गीता रहस्य की महत्ता मेरे द्वारा कम शब्दों में लिखना भी इतनी सरल बात नहीं है।

संस्कृत साहित्य की परम्परा में उन ग्रंथों को भाष्य (शाब्दिक अर्थ-व्याख्या के योग्य), कहते हैं जो दूसरे ग्रंथों के अर्थ की वृहद् व्याख्या या टीका प्रस्तुत करते हैं। भारतीय दार्शनिक परम्परा में किसी भी नए दर्शन को या किसी दर्शन के नए स्वरूप को जड़ जमाने के लिए जिन तीन ग्रंथों पर अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करना पड़ता था (अर्थात् भाष्य लिखकर) उनमें भगवद्गीता भी एक है। (अन्य दो हैं उपनिषद् तथा ब्रह्मसूत्र)

गीता पर अनेक आचार्यों एवं विद्वानों ने टीकाएँ की हैं। सम्प्रदायों के अनुसार उनकी संक्षिप्त सूची इस प्रकार है :-

गीता भाष्य - आदि शंकराचार्य , गीता भाष्य - रामानुज

गूढार्थदीपिका टीका - श्रीधर स्वामी, ज्ञानेश्वरी - संत ज्ञानेश्वर (संस्कृत से गीता का मराठी अनुवाद)

गीता रहस्य - बालगंगाधर तिलक, अनासक्ति योग - महात्मा गांधी

एसेज ऑन गीता - अरविन्द घोष, ईश्वरार्जुन संवाद - परमहंस योगानन्द

गीता प्रवचन - विनोबा भावे, गीता तत्व विवेचनी टीका - जयदयाल गोयन्दका

# Jh vjfoUn % n'kHkfDr ,oa n'ku

*व्यक्तित्व*

*डॉ. अर्चना शर्मा*
पीएच.डी व डी.लिट्
भारतीय दर्शन परम्परा
विशेषकर श्रीअरविन्द के दर्शन का गहन अध्ययन
शोध पत्रिका 'प्रज्ञा' व आनन्दवार्ता में अनेक शोध व लेख प्रकाशित
नवनीत व विभिन्न पत्रपत्रिकाओं में लेखों का प्रकाशन

*संपर्क*
मो. 8171502992

श्री अरविन्द इस युग के महान् एवं अद्वितीय नव-वेदान्ती दार्शनिक हैं। उनके दर्शन में पूर्व और पश्चिम के तत्त्वचिन्तन का समन्वय बौद्धिक तर्कपूर्ण प्रणाली से किया गया है। उन्होंने स्वयं निम्नतम तत्त्व जड़ और उच्चतम तत्त्व आत्मा को समान रूप से महत्त्वपूर्ण माना है। अस्तित्व की व्याख्या में हमें इन दोनों को ही सम्मिलित करना पड़ेगा।

श्री अरविन्द का जन्म 15 अगस्त सन् 1872 को कलकत्ता में हुआ। श्री अरविन्द के पिता डाक्टर कृष्णधन घोष कलकत्ता के निकटवर्ती हुगली जिला स्थित कोन्नगर के निवासी थे। उनकी माता श्रीमती सुवर्णलता देवी ब्रह्म समाज के प्रसिद्ध नेता राजनारायण बसु महाशय की ज्येष्ठा पुत्री थीं। श्री अरविन्द का पालन पोषण अँग्रेजी वातावरण में हुआ क्योंकि उनके घर में मातृभाषा बंगाली नहीं बोली जाती थी। अंग्रेजी व हिन्दी दोनों भाषाएँ बोली जाती थीं। पाँच वर्ष के आयु में श्री अरविन्द एवं उनके दोनों बड़े भाईयों विनय भूषण व मनमोहन का दार्जिलिंग के लॉरेटो कान्वेन्ट स्कूल में प्रवेश कराया गया। उपर्युक्त स्कूल भारत में उच्चपदस्थ अँग्रेज अधिकारियों के शिशुओं की शिक्षा के लिए प्रसिद्ध था। वहाँ की अध्यापिकाएँ आयरिश नन थीं। स्वाभाविक रूप से वहाँ दैनिक बोलचाल की भाषा इंग्लिश थी। अरविन्द मात्र दो वर्ष वहाँ पढ़े। सन् 1879 में उनके पिता ने अपने तीनों पुत्रों, पुत्री सरोजनी एवं पत्नी सहित इंग्लैंड के लिए प्रस्थान किया।

उनके बड़े दोनों भाईयों का तो स्कूल में प्रवेश हो गया पर कम आयु होने के कारण श्री अरविन्द का प्रवेश तब नहीं हुआ था। वे घर पर ही रह कर पढ़ने लगे। पादरी डुएट ने श्री अरविन्द को लैटिन व इंग्लिश पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। शीघ्र ही बालक अरविन्द ने दोनों भाषाएँ भली प्रकार सीख लीं। पादरी की माँ अरविन्द को इतिहास, भूगोल, गणित एवं फ्रेंच पढ़ाती थीं। बचपन से ही श्री अरविन्द को खेलने में कोई रुचि नहीं थी। उसी अल्पायु में उन्होंने बाइबिल तथा अंग्रेजी साहित्य की कई पुस्तकें पढ़ीं। इसके अतिरिक्त उन्होंने शैली व कीट्स की कविताएँ भी पढ़ीं। इसके फलस्वरूप उनकी शिक्षा की नींव पक्की हो गयी। कुछ वर्ष बाद मिस्टर डुएट ऑस्ट्रेलिया चले गये तथा उसी वर्ष श्री अरविन्द का बारह वर्ष की आयु में सैण्टपॉल्स स्कूल में प्रवेश हुआ। अगले छः वर्ष अर्थात् अठारह वर्ष की आयु तक वे वहीं रहे। श्री अरविन्द ने बहुत जल्दी ग्रीक भी सीख ली। उन्हें अगली कक्षा के लिए कक्षोन्नति भी मिल गई। वे इतने मेधावी थे कि पाठ्यक्रम की तैयारी में उन्हें बहुत कम समय लगता था। अन्य विषयों का ज्ञान बढ़ाने में वे अधिक समय लगाते थे। स्कूल के बाद के तीन वर्षों में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य का गहन अध्ययन किया। साथ ही लैटिन, ग्रीक व फ्रेंच पर भी अच्छा अधिकार प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त जर्मन, इटैलियन व स्पेनिश से भी उनका परिचय हुआ। काव्य एवं इतिहास में उनकी रुचि थी। पाश्चात्य इतिहास को उन्होंने गंभीरता से पढ़ा व बहुत से कवियों की रचनाएँ भी पढ़ी। केवल चौदह वर्ष की आयु में अंग्रेजी की काफी अच्छी रचना उन्होंने लिखी। सैण्ट पॉल्स स्कूल से कैम्ब्रीज विश्वविद्यालय के किंग्स कॉलेज में उनका प्रवेश हुआ। वहाँ प्रवेश के समय उन्होंने विशेष योग्यता के साथ छात्रवृत्ति की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने विशेष परिश्रम करके ट्राइपोस का तीन वर्ष का कोर्स दो वर्ष में ही पूरा कर लिया। ट्राईपोस बी.ए. के समकक्ष परीक्षा थी। अगले दो वर्षों में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में एम.ए.की उपाधि प्राप्त की, साथ ही भारत की सर्वोच्च सेवा आई.सी.एस. की लिखित प्रतियोगिता परीक्षा में विशेष योग्यता के साथ उत्तीर्ण हुए। लेकिन उन्होंने यह निश्चय किया कि जिन अंग्रेज शासकों ने मेरी मातृभूमि को बन्दी बना रखा है वे उसकी सेवा सर्वोच्च अधिकारी के रूप में भी नहीं करेंगे। इसी अदम्य प्रेरणाशक्ति से प्रेरित होकर वे घुड़सवारी की

प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं हुए। स्वेच्छा से इस पद को उन्होंने ठुकरा दिया। उन्हीं दिनों बड़ौदा के गायकवाड़ से किसी मित्र ने, श्री अरविन्द का परिचय कराया व गायकवाड़ ने उन्हें बड़ौदा कॉलेज में अध्यापन के लिए आमंत्रित किया। बड़ौदा में उन्होंने अंग्रेजी के वरिष्ठ अध्यापक के रूप में कार्यरत रहते हुए भी भारतीय पुनर्जागरण की क्रान्तिकारी गतिविधियों में सक्रिय योगदान आरम्भ कर दिया। वे समर्पित देशभक्त थे एवं भारत को माता मानते थे। पूर्व में यद्यपि अठारह-उन्नीस वर्ष की आयु तक वे भारत के विषय में कुछ नहीं जानते थे पर जैसे ही पिता के भेजे साहित्य से उन्हें अपने देश और देशवासियों की दुर्दशा का ज्ञान हुआ तो उन्होंने कैम्ब्रिज के भारतीय छात्रों की संस्था ''इण्डियन मजलिस'' की सदस्यता ले ली। कुछ दिन तक वे उसके मंत्री पद पर रहे तथा अन्य भारतीय छात्रों के साथ भारत की राजनीति व भविष्य की योजनाओं के विषय में चर्चाएँ करते थे। वे उस समय भारत की राजनीति और विशेष रूप से अंग्रेज सरकार के विरुद्ध उग्र भाषण देते थे। एक गुप्त संस्था थी "The Lotus and dagger society" उसके भी वे सदस्य बने। अन्य भारतीय छात्रों के साथ मिलकर उन्होंने भारत को अंग्रेजी शासन से मुक्त कराने का संकल्प लिया। बड़ौदा में काम करते हुए उनका विवाह मृणालिनी देवी से हुआ। कुछ दिन बाद ही भारत के स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेने के लिए वे बड़ौदा छोड़कर कलकत्ता आ गए। पत्नी को वे साथ नहीं रखते थे। मृणालिनी देवी कभी तो पिता के घर देवघर रहती थीं व कभी गिरीश बाबू के यहाँ कलकत्ता। श्री अरविन्द ने उन्हें देश सेवा के अपने व्रत में सहयोगिनी बनने के लिए इस त्याग की शिक्षा दी जिसे उन्होंने सहर्ष मान लिया व पति की सच्ची सहधर्मिणी बनकर उनसे दूर रह कर ही उन्हें सहयोग देती रहीं। बंकिमचंद्र के सुप्रसिद्ध उपन्यास ''आनन्द मठ'' के संतानों का देश प्रेम ही उनका भी आदर्श था। बंकिमचन्द्र और श्री अरविन्द में यह साम्य था कि दोनों भारत की मातृ-रूप में उपासना करते थे तथा आततायियों के हाथों से माता को स्वातन्त्र कराना ही उनका उद्देश्य था।

इंग्लैण्ड से प्रत्यावर्तन के छः माह के अंदर ही श्री अरविन्द का ''न्यू लेम्प्स फार ओल्ड'' नामक राजनीतिक लेख प्रकाशित हुआ। इस लेख को 'हिन्दू प्रकाश' नामक अंग्रेजी मराठी पत्रिका में प्रकाशित किया था। इसके सम्पादक केशवराय देशपाण्डे जी के नाम से ही इसका प्रकाशन हुआ था। बड़ौदा के राज-कर्मचारी होने के कारण श्री अरविन्द के नाम से प्रकाशित नहीं हो पाया। इसी स्तर की उग्र राष्ट्रीयता भरे सात लेख श्री अरविन्द ने लिखे व देशपाण्डे जी के नाम से प्रकाशित हुए। उन लेखों में कांग्रेस की अनुचित नीतियों की समालोचना होती व देश को उचित मार्ग-दर्शन भी कराया जाता था।

प्रतिवर्ष क्रिसमस के अवकाश में कांग्रेस का कई वर्षों तक अधिवेशन होता रहा, जिसमें हर बार एक जैसे ही प्रस्ताव पारित करके सरकार को दिए जाते थे। इसके अतिरिक्त कांग्रेस की न कोई विकासमान गति थी न ही रीति-नीति। कांग्रेस जनों की इस अकर्मण्यता से अध्यवसायी श्री अरविन्द अत्यन्त क्षुब्ध हो उठे। श्री अरविन्द ने कांग्रेस की इस नीति की कटु आलोचना की। इसके विरोध के साथ ही श्री अरविन्द ने देशवासियों को आत्म-विश्वासपूर्वक भय का त्याग करने का भी संदेश दिया।

उन्होंने मुट्ठीभर अंग्रेजी शिक्षित वर्ग के लिए ही नहीं, सम्पूर्ण भारत के प्रत्येक वर्ग के प्रबुद्ध व्यक्ति का भारतीय समाज के जागरण के लिए आह्वान किया व इसके लिए अपने भााषणों व लेखों का माध्यम बनाया। उनका विचार था कि देश के महत्त्वपूर्ण कार्यों व विषयों में जनसाधारण की कभी उपेक्षा करनी चाहिए अन्यथा कालान्तर में उपेक्षाजन्य आक्रोश विप्लव के रूप में फूट पड़ेगा।

बड़ौदा रहते हुए ही श्री अरविन्द की मैत्री तत्कालीन भारत की राजनीति के जाने माने राजनेता लोकमान्य तिलक के साथ हुई। 'केशरी' नामक पत्रिका के सम्पादक तिलक ने ''हिन्दूप्रकाश'' में छपे लेख पढ़े थे। उन लेखों से तिलक अत्याधिक प्रभावित हुए, कारण कि लेखों में जैसी उच्च राष्ट्रीयता थी वैसा ही था बुद्धि-वैभव। तिलक स्वयं प्रकाण्ड विद्वान थे, अनन्य देशभक्त भी। परस्पर तीव्र आकर्षण के कारण दोनों घनिष्ठ मित्रता में बँध गए। अहमदाबाद के कांग्रेस की दयनीय आवेदन-निवेदन नीति के दोनों ही विरोधी निकले। कुछ दिन बाद जब कांग्रेस का गरम दल व नरम दल में विभाजन हुआ तो दोनों ही गरम दल के सक्रिय सदस्य बने।

श्री अरविन्द प्रारम्भ में राजनेता व बाद में गम्भीर विचारक एवं दार्शनिक के रूप में विख्यात हुए। उन्होंने आदर्श व तत्त्वदर्शन दोनों को मिलाकर राजनैतिक पद्धति तैयार की। जब वे राजनैतिक भाषण देते थे, उनका आदर्श गीता का कर्मयोग होता था। 'वन्देमातरम्' पत्र में प्रकाशित उनके सम्पादकीय लेखों में दार्शनिक आदर्शवादी प्रेरणा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। फिर भी कहीं पर उन्होंने देश, समाज एवं विश्व समष्टि की समस्याओं एवं उनके समाधान के प्रति उदासीनता या उपेक्षा प्रदर्शित नहीं की। उनकी विचारधारा यह थी कि राजनीति का लक्ष्य शासनतंत्र को हस्तगत करना व शासनतंत्र की सहायता से समाज के साधनों की उन्नति करना है।

स्वराज्य शब्द की सर्वप्रथम उन्होंने सटीक व्याख्या की। समाज के आमूल परिवर्तन में भी उनकी अखंड आस्था थी। अतिमानस की ऊँचाईयों तक पहुँच कर भी कभी उन्होंने समाज, राष्ट्र या विश्व को विस्मृत नहीं किया। उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा था कि ''पूर्ण प्रजातांत्रिक स्वराज्य'' ही हमारे स्वतंत्रता-संग्राम का लक्ष्य है। इससे कुछ भी कम हमें नहीं चाहिए। ''स्वराज्य'' के साथ ही उन्होंने भारत की आत्मा की भी व्याख्या की तथा स्पष्ट कहा कि हमारी किसी भी आध्यात्मिक क्रिया का लक्ष्य परमसत्य का साक्षात्कार करना है। शरीर को भी आत्मा के समान ही उन्होंने महत्त्वपूर्ण माना। शरीर को पुष्ट और बलिष्ठ

रखना भी अति आवश्यक माना। स्वतंत्रता व्यापक जन-सहयोग द्वारा ही मिलनी सम्भव थी, ऐसा उनका विश्वास था। सन् 1908 में ही उन्होंने घोषणा कर दी थी कि भारत की स्वतंत्रता दैवी शक्ति द्वारा निर्धारित है, शीघ्र ही भारत अंग्रेजी शासन से मुक्त स्वतंत्र गणराज्य बन जायेगा। इसके साथ ही भारत को सम्पूर्ण विश्व को वेदों, उपनिषदों, गीता, पुराणों एवं तंत्र का ज्ञान भी देना है। उनका विचार था कि सभी नेताओं को नैतिक प्रशिक्षण भी देना चाहिए। स्वतंत्रता की देवी केवल तब ही प्रसन्न होंगी जब सभी अपने स्वार्थ का त्याग करके उसकी प्राप्ति की अभ्यर्थना करें।

श्री अरविन्द को उग्र क्रान्तिकारी एवं उत्तेजक लेख लिखने के अपराध में राजद्रोह का मुकदमा लगाकर पुलिस ने 1908 में उनके कलकत्ता स्थिर घर से बन्दी बना लिया। उन्हें कलकत्ता के न्यू अलीपुर जेल में रखा गया। उनके स्ट्रीट वाले मकान की तलाशी भी ली गई पर कुछ नहीं मिला। ''वन्देमातरम्'' में प्रकाशित उनकी लेखमाला के कारण उनपर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया था। कहा भी गया कि उनके लेखों में अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध हिंसात्मक कार्यवाही को प्रोत्साहन दिया गया। इसके साथ ही उनके छोटे बेटे भाई वारीन्द्र कुमार घोष, उल्लासकर दत्त, इन्द्रभूषण व उपेन्द्रनाथ बनर्जी वगैरह को श्री अरविन्द के पैतृक मकान से (जो मुरारी पुकुर बागान में था) बन्दी बनाया गया। 9 मई 1908 को मिस्टर बर्ले के कोर्ट में श्री अरविन्द का केस शुरु हुआ। सरकार उनकी विरोधी थी एवं श्री अरविन्द के पास धन नहीं था इसलिए उनकी बहन सरोजनी ने देशवासियों के नाम एक खुली अपील की जिसमें उन्होंने इस केस के लिए आर्थिक सहायता मांगी थी। श्री अरविन्द ने अपने केस के विषय में लिखा था कि देशभक्त का काम देश का निर्माण करना है तथा देशभक्त कानून के प्रति भी सम्मान रखता है क्योंकि बिना कानून के देश का विकास नहीं हो सकता है। न्याय वह है जो देशहित में हो। देशप्रेमी किसी भी संकट एवं कष्ट से भयभीत नहीं होता। जज ने श्री अरविन्द के सम्बन्ध में कुछ पंक्तियों में अपने विचार व्यक्त किए थे उनमें उनकी लेखनी के लेखन क्षमता की प्रशंसा की गई थी।

श्री अरविन्द ने जेल में रहते हुए प्रारम्भिक दिनों से ही योगसाधना का अभ्यास किया क्योंकि उनकी चिंतनधारा आध्यात्मिक हो गई थी। एक दिन अकस्मात् उन्हें घुटन भरी जेल की कोठरी में शांत भाव से रहते देखकर जेल के सुपरिटेण्डेण्ट ने बाहर हवा में प्रतिदिन कुछ दिन घुमने की अनुमति दे दी।

एक दिन उन्हें जेल के आसपास घूमते हुए भगवान् श्रीकृष्ण का दर्शन हुआ, जो ''वासुदेव दर्शन'' के नाम से उनकी जीवनी में उल्लेखित है। ''वासुदेव दर्शन'' के समय अचानक उन्हें यह प्रतीति हुई कि सब कुछ श्रीकृष्णमय है। जेल के सारे बन्दी, प्रहरी यहाँ तक की चलते फिरते सिपाही भी उन्हें कृष्ण ही दिखाई देते थे। उन्हें लगा कि वृक्ष पर भी श्रीकृष्ण ही बैठे हैं व गौशाला में दूध दूहने वाला ग्वाला भी कृष्ण ही है। यद्यपि यह कृष्ण दर्शन उन्हें कुछ क्षण ही हुआ पर इस चामत्किारिक घटना के बाद उनकी दृष्टि पूर्ण रूपेण आध्यात्मिक हो गई।

इस घटना के साथ ही वे हार-जीत के प्रति भी निरपेक्ष हो गए किन्तु हठात् घटनाक्रम भी परिवर्तित व उनके अनुकूल हो गया। देशबन्धु चित्तरंजनदास ने उनका मुकदमा लड़ने का निश्चय किया। देशबन्धु उस समय कलकत्ता के अत्यधिक सफल व योग्य वकील थे। प्रायः हर केस में वे अपने मुवक्किल को जिताते थे इस कारण उनकी बहुत ख्याति एवं आय भी थी। श्री अरविन्द का केस लड़ने के लिए उन्होंने एक वर्ष तक अन्य कोई भी केस नहीं लिया, जिससे उनका आर्थिक स्रोत भी बंद रहा। अपने परिवार के लिए पूरे वर्ष उन्होंने दूसरों से ऋण लेकर परिवारीजनों का व्यय वहन किया। जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं का उन्होंने पूरे वर्ष त्याग किया। खाना, सोना या सामाजिक जीवन का भी त्याग करके तन-मन-धन से इस कार्य में व्यस्त रहे। मानो जेल में श्री अरविन्द बन्दी न होकर वे स्वयं ही बन्दी बने हों। श्री अरविन्द के कार्य को उन्होंने महान यज्ञ मान कर उसको समर्पित भाव से सम्पन्न किया जिसमें उन्होंने अपने व्यक्तिगत हितों की आहुति दी।

दूसरी ओर श्री अरविन्द जेल में आकर योगी बन गए थे। वे अधिकांश समय योग-साधना में व्यतीत करते थे। वे घंटों तक गहन ध्यान में डूबे हुए आसपास के घटनाक्रम से निर्लिप्त रहते थे। अन्य युवा देशभक्त जो उनके साथ ही बन्दी थे, आपस में बातचीत करके एवं गाने गाकर उल्लासपूर्वक समय बिताते थे। वे यह तो नहीं जानते थे कि श्री अरविन्द योगासनों का अभ्यास करते रहते हैं परन्तु उनकी साधना व उपलब्धियों से वे भी अनभिज्ञ थे।

19 अक्टूबर 1908 को जस्टिस ब्रीचक्राफ्ट की कोर्ट में देशबन्धु चितरंजन दास ने श्री अरविन्द के पक्ष में जोरदार बहस की। उनकी बहस सुनने के लिए हजारों लोग इस दिन न्यायालय में आए थे। दो से अधिक गवाहों को प्रस्तुत किया गया जिन सभी ने श्री अरविन्द के पक्ष में गवाही दी। 13 अप्रैल 1909 तक यह केस चला। मि.ब्रीचक्राफ्ट कैम्ब्रिज में श्री अरविन्द के सहपाठी थे। दोनों ने एक साथ आई.सी.एस. की लिखित परीक्षा पास की थी। श्री अरविन्द के छोटे भाई वारीन्द्र कुमार बम केस में मुख्य अभियुक्त थे। उन्होंने अपने साथियों सहित बंगाल के तत्कालीन गवर्नर की हत्या का प्रयास किया था। यद्यपि वारीन्द्र कुमार प्रत्यक्षतः इस हिंसात्मक आन्दोलन में मुख्य अभियुक्त थे। प्रचार यह हुआ कि इन सारी हिंसात्मक घटनाओं के मूल में श्री अरविन्द का मस्तिष्क था। वे ही परोक्ष रूप से इसके संचालक माने गए। श्री अरविन्द के विरूद्ध अपराध सिद्ध करने के लिए सरकार ने अथक परिश्रम व धन का प्रचुर व्यय किया। श्री अरविन्द ने अपने वकील के बारे में कहा था कि चित्तरंजन दास के रूप में

साक्षात् नारायण ही मेरे पक्ष में लड़ रहे थे, वे ही मुझे बचा रहे थे। दैवी शक्ति ने देशबन्धु में अपार क्षमता भर दी थी एवं उनके अथक परिश्रम व तर्क सम्मत बहस से निरपराध सिद्ध होकर श्री अरविन्द कारागार से मुक्त हो गए।

श्री अरविन्द के बाहर आने पर जनता ने स्नेह व उत्साह से ''उत्तरपाड़ा'' नामक स्थान पर उनके भाषण का आयोजन किया। इस उत्तरपाड़ा अभिभाषण का ऐतिहासिक महत्त्व है जिसमें श्री अरविन्द ने भारत भूमि के प्रति अपने असीम प्रेम का उल्लेख करते हुए भी सक्रिय राजनीति से सन्यास लेने की घोषणा की। उसी समय उन्होंने जेल मे रहते हुए जो आध्यात्मिक अनुभूतियाँ हुईं थीं उनको जनता के सामने प्रकाशित किया। कुछ दिन अनन्तर वे दैवी आदेश पाकर कलकत्ता से चन्दन नगर चले गये। उनका ध्यान व योगाभ्यास प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। चन्दन नगर में भी अंग्रेज सरकार के गुप्तचरों ने उन्हें तरह-तरह से तंग करना शुरु कर दिया था, इसलिए वे शीघ्र ही अपने एक विश्वासपात्र व्यक्ति के साथ सन् 1910 में पाण्डिचेरी चले गए। पाण्डिचेरी उस समय अंग्रेज शासन से मुक्त एवं फ्रेंच अधिकृत नगर था। जीवन के शेष चालीस साल उन्होंने पाण्डिचेरी में रह कर निर्विघ्न रूप साधना करते हुए व्यतीत किए। 1950 के दिसम्बर माह में उनका महानिर्वाण हुआ।

अपने पूर्णान्वयी दर्शन में श्री अरविन्द सृष्टि को विराट् सत्ता के परम सत्य की रचना होने के कारण सत्य मानते हैं। उनके विचार से सृष्टि सतत् विकासशील है। उनके योग का उद्देश्य दिव्य अतिमानसिक चेतना को प्रयास पूर्वक प्राप्त करता है। परमसत्ता ने ही सारी दृश्यमान सृष्टि का निर्माण किया है। विश्व के सारे उपादान उसी परम सत्ता ने ही सारी दृश्यमान सृष्टि का निर्माण किया है। विश्व के सारे उपादान उसी परमतत्त्व के सत्य ज्योति एवं आनन्द की सहज अभिव्यक्तियाँ हैं। यह जगत् ब्रह्म की परमचेतना व ज्ञान का सुनियोजित परिणाम है न कि अज्ञान या अपूर्णता का फल। श्री अरविन्द मानते हैं कि अतिमानसिक चेतना की प्राप्ति के लिए हमें सीमित बुद्धि का परित्याग करके व्यापक बुद्धि का प्रयोग करना चाहिए। यह अभ्यास द्वारा सम्भव हो सकता है न कि बुद्धि की क्षमता को आमंत्रित करके हम अपने अन्दर हर विषय के समावेश की क्षमता का विकास कर सकते हैं। इसके लिए अपनी देह, आत्मा एवं सम्पूर्ण जीवन को परमचेतना के लिए समर्पित करना होगा।

दार्शनिक दृष्टि से भी अरविन्द का दर्शन प्राचीन वेदान्त की नवीन व्याख्या है। वेदान्त की आधुनिक व्याख्या स्वामी विवेकानन्द ने सर्वप्रथम शिकागो के धर्म सम्मेलन में की थी। उनकी दृष्टि में परमतत्त्व सच्चिदानंद है जो सत्-चित्-आनन्द से मिलकर बना है। यह विशुद्ध सत्य है, स्वयं चित् शक्ति भी है एवं अनन्त आनन्द का अधिष्ठान भी। यह द्वैत से रहित अद्वैत तत्त्व है। सच्चिदानन्द त्रयात्मक तत्त्व होने के साथ ही शाश्वत, शुद्ध व परिपूर्ण है। वाणी द्वारा इसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। सच्चिदानन्द शंकर के अद्वैत ब्रह्म से भिन्न हैं। शंकर के लिए केवल ब्रह्म ही सत्य है, जगत् मिथ्या है जबकि श्री अरविन्द के लिए ब्रह्म भी सत्य है व जगत् भी। भारत की आत्मा वेदान्त दर्शन है। इस दर्शन के कारण ही विभिन्न संस्कृतियों से बार-बार आक्रान्त होते हुए भी भारत की आत्मा अमर रही। स्वामी विवेकानन्द ने वेदान्त दर्शन को भारत की प्राणशक्ति का केन्द्र मानकर विदेशों में भी उसका प्रचार किया।

श्री अरविन्द ने पाण्डिचेरी में साधना करते हुए जिन अनुभूतियों को उपलब्ध किया उसे प्रतिदिन लिख कर पुस्तकाकार में प्रकाशित भी किया है। ''द लाइफ डिवाइन'' उनके वेदान्त दर्शन का सार है। इसमें विशेष रूप से उपनिषदों व कहीं-कहीं वेद पुराण व गीता के श्लोकों को उद्धृत करके उनकी सटीक व विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की गई है। वेदों की व्याख्या में जैसे आचार्य सायण का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है, वैसे ही आधुनिक युग में वेद, उपनिषद् व गीता के मौलिक व्याख्याकारों में श्री अरविन्द का स्थान सर्वोपरि है। समकालीन दर्शन के वे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण दार्शनिक एवं भारतीय दर्शन के रहस्यमय सिद्धांतों से विद्वज्जनों को परिचित कराने वाले विशिष्ट तत्त्ववेता हैं।

## वैदिक आश्रम ( गुरुकुल )

''इन हजारों हजार वर्षों में जो कुछ हम हिन्दुओं ने किया है, चिन्तन किया है तथा कहा है, हम जो कुछ हैं और जो कुछ बनने की चेष्टा करते हैं, उस सब के मूल में प्रच्छन्न रूप से स्थित है हमारे दर्शनों का स्रोत, हमारे धर्मों का सुदृढ़ आधार, हमारे चिन्तन का सार, हमारी आचारनीति और समाज का स्पष्टीकरण, हमारी सभ्यता का सारांश, हमारी राष्ट्रीयता को थामे रखने वाला स्तम्भ, वाणी की एक लघु राशि अर्थात् वेद। इस एक ही उद्गम से अनेकानेक रूपों में विकसित होने वाली असंख्य आयामी एवं उत्कृष्ट उत्पत्ति, जिसे हिन्दू धर्म कहते हैं, अपना अक्षय अस्तित्व धारण करती है। अपनी प्रशाखा ईसाई धर्म के साथ ही बौद्ध धर्म भी इसी आदि स्रोत से प्रवाहमान हुआ। इसने अपनी छाप फारस पर छोड़ी, फारस के द्वारा यहूदी धर्म पर और यहूदी धर्म द्वारा ईसाई धर्म तथा सूफीवाद से इस्लाम धर्म पर, बुद्ध के द्वारा यह छाप कन्फ्यूशीवाद पर, ईसा एवं मध्यकालीन सूफीवाद, यूनानी और जर्मन दर्शन तथा संस्कृत के ज्ञान द्वारा यह छाप यूरोप के विचार एवं सभ्यता पर पड़ी। यदि वेद न होते तो विश्व को आध्यात्मिकता का विश्व के धर्म का, विश्व के चिंतन का ऐसा कोई भी भाग नहीं है जो वैसा होता जैसा कि वह आज है। विश्व की किसी भी अन्य वाक् राशि के विषय में ऐसा नहीं कहा जा सकता।''

**- श्री अरविन्द**

अभिलेखागार और अनुसंधान अप्रैल 1977 खंड 1, नंबर 1

# lkekftd nkf;Rockk/k

## संगठन-सूत्र

**राजकुमार भाटिया**
ऐसोसिएट प्रोफेसर सेवानिवृत्त
पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष
अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्
आर्थिक, सामाजिक एवं
सगठनात्मक विषयों के गहन अध्येता।
इन विषयों पर पुस्तकों का प्रकाशन

**संपर्क**
मो. 9212208859

समाज के प्रति दायित्व भाव से अनेक व्यक्ति समाजिक कार्य के लिए उद्यत होते हैं। फिर अपनी प्राथमिकता अथवा कार्य के आधार पर किसी कार्य से वे जुड़ते हैं अथवा स्वयं कुछ प्रारम्भ करते हैं।

उनकी सामाजिक सक्रियता दो प्रकार से रूप ग्रहण करती है या तो वे व्यक्तिगत स्तर पर कार्य करते हैं या किसी संगठन के माध्यम से। उनके लिए सांगठनिक माध्यम भी दो प्रकार के होते हैं या तो वे स्वयं संगठन बनाते हैं या पहले से चल रहे किसी संगठन में सक्रिय हो जाते हैं।

सक्रियता का प्रकार जो भी हो व्यक्ति को कार्य की स्पष्टता होनी वांछनीय होती है पर यह स्पष्ट केवल व्यक्ति के लिए हीं नहीं अपितु संगठन के लिए भी वांछनीय होती है। निकले थे दिल्ली जाने के लिए और चल पड़े चेन्नई की ओर, यह नहीं होना चाहिए। यह बात इसलिए कहनी पड़ी क्योंकि सामाजिक कार्यों के हजार प्रकार हो सकते हैं और कई बार व्यक्ति या संगठन किसी एक काम को हाथ में लेते हैं और फिर कुछ समय बाद दूसरे काम की ओर आकर्षित हो जाते हैं।

विषय के विस्तार में जाने से पहले यह समझ लें कि कार्य कितने प्रकार के हो सकते हैं। उससे भी पहले यह समझ लें कि समाज को कैसे परिभाषित करें। समाज के भी पचासों प्रकार हो सकते हैं। पूरा विश्व भी एक समाज है। फिर उसमें राष्ट्र या देश एक समाज होता है। राष्ट्र/देश के अन्तर्गत अनेक छोटे-छोटे समाज होते हैं। अलग प्रकार से देखें तो विविध व्यक्तियों के समूहरूपी समाज होते हैं। महिला, पुरुष, जाति, पंथ, आयु वर्ग, बुद्धिजीवी, आर्थिक स्तर या व्यवसाय के आधार पर बने समाज। सामाजिक कार्य के लिए प्रवृत्त व्यक्ति अथवा संगठन के लिए यह उचित हो जाता है कि उन्हें यह स्पष्ट हो कि वे किस समाज से संबंधित कार्य करना चाहते हैं।

कार्यों के भिन्न प्रकार होते हैं -रचनात्मक, आन्दोलनात्मक, प्रतिनिधित्वात्मक अथवा अन्य। कुछ उदाहरण लें। रक्तदान एक रचनात्मक कार्य होता है। किसी सही कार्य के लिए आन्दोलन करना भी सामाजिक कार्य होता है। उदाहरण ाार्थ भ्रष्टाचार के विरुद्ध प्रदर्शन करना। जनता के प्रतिनिधि बन कर जनहित में कार्य करना प्रतिनिधित्वात्मक कार्य कहलाता है। उदाहरणार्थ नगर निगम, विधानसभा अथवा लोकसभा का चुनाव लड़ना और जनप्रतिनिधि की भूमिका निभाना।

अब फिर से मूल विषय की ओर लौटते हैं। कार्य की स्पष्टता और उस पर टिके रहना। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठतम प्रचारक और पूर्व सरकार्यवाह श्री एकनाथ रानाडे कहा करते थे कि मनुष्य तय कर ले कि उसके लिए एक ही सामाजिक कार्य जीवन भर के लिए पर्याप्त होता है।

एक-दो उदाहरण लें। आज विश्वभर में पर्यावरण का ह्रास चिंता का विषय बना हुआ है। एक व्यक्ति चाहे तो पर्यावरण संरक्षण को अपने जीवन का उद्देश्य बना सकता है।

एक और उदाहरण लें। भारत के शहरों में बड़ी-बड़ी झुग्गी झोपड़ियों से युक्त बस्तियाँ हैं जिनमें लाखों लोग रहते हैं और नारकीय जीवन जीते हैं। उनकी सेवा की कोई ठान लें तो उसके 10-15 वर्ष उसमें व्ययतीत हो जायेंगे।

विषय है कि कार्य की स्पष्टता और उसी में समय, शक्ति और प्रतिभा लगा देना। यदि व्यक्ति में अथवा संगठन में सामाजिक कार्य के प्रति प्रतिबद्धता हो तो उनकी यह समझ भी बननी चाहिए अन्यथा उनका सामाजिक योगदान गुणात्मक नहीं होता।

# ijuk % ,d ?kqeUrw lekt

## *यायावर*

***श्री शैलेन्द्र विक्रम***
शोध अध्येता
समाजिक कार्यकर्ता
मंत्री, सेवा भारती दिल्ली

***संपर्क***
मो. 9717334419

अल्प अवधि में ही अपने निवास के स्थान को बदलने वाले समाज को घुमन्तू समाज कहा जाता है। बड़े-बड़े शहरों में, कई बार गाँव में भी घुमन्तू समाज के लोगों का दर्शन हो जाया करता है। यह समाज अपने पूरे परिवार के साथ, जिसमें जानवर भी शामिल होते हैं, लगभग पूरे वर्ष भारत में दिखाई देते हैं। यह समाज जानवरों, दुर्लभ जड़ी-बूटियों व पुराने कपड़ों आदि का व्यापार करते हैं।

मुम्बई, कोलकाता व दिल्ली आदि बड़े शहरों में भी सड़क किनारे छोटी-छोटी झुग्गियाँ बनाकर घुमन्तू समाज के लोग एक लम्बे समय से एक ही स्थान पर निवास करते हुए देखे जा सकते हैं। एक सामान्य समाज के धरातल पर ही घुमन्तू समाज में भी जाति व गोत्र की परम्परा है। आज भी प्राचीनतम परम्परा का पालन करते हुए यह समाज कबीलों की भाँति यत्र-तत्र निवास करता है। घुमन्तू समाज में आने वाले सभी अलग-अलग समाजों के अलग-अलग कार्य भी पूर्व से ही निर्धारित हैं। गाड़िया लोहार समाज लोहे के सामानों का कारीगर है तो सिकलीगर छूरी समाज, चाकू आदि में धार लगाने का काम करता है। इसी प्रकार पेरना समाज भी अपनी आवश्यकता अनुसार अपने कार्य को कुशलता पूर्वक करने में दक्ष है।

हजारों वर्षों से इतिहास को खुद में समाए हुआ यह समाज देश के प्रमुख शहरों में रहता है। दिल्ली के नाहरगढ़ (नजफगढ़) में हजारों की संख्या में इन्हें देखा जा सकता है। 30 वर्ष से पहले तक यह समाज वास्तव में घुमन्तू जीवन ही यापन करता था। आज इस समाज के सभी लोगों के पास सरकार द्वारा प्रदान किए छोटे-छोटे घर हैं। एक-एक घर में 5-6 लोग रहते हैं। वर्तमान में इस समाज के पुरुषों द्वारा शादी-विवाह व मांगलिक अवसरों पर ढोल बजाने का कार्य किया जाता है। शिक्षा के नितांत अभाव के साथ यह समाज अपने सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों से लगभग कट चुका है।

इतिहास के आधार पेरना समाज का आकलन एक कुशल योद्धा के तौर पर किया जाता है। यह समाज एक कुशल गुप्तचर हुआ करता था। यह दूसरे विधर्मी राजाओं की सूचना हिन्दू राजाओं को प्रदान करता था। कई बार गुप्तचरों के कार्य के कारण पकड़े जाने पर विधर्मियों द्वारा इनकी हत्या भी कर दी जाती थी। महिलाओं व बच्चों को पकड़ कर रख लिया जाता था। विधर्मियों द्वारा, महिलाओं को कैद कर खुले मंच पर बोली लगाकर बेचा जाता था। बच्चों के साथ दर्दनाक व शर्मनाक हरकतें की जाती थीं। पेरना समाज का अस्तित्व वंश मौर्य के खंड काल से ही मिलना प्रारम्भ होता है। वंश गुप्त के राजाओं के शासन के खंड काल के समय से लेकर कालीन अँग्रेजी राजाओं तक पेरना समाज की भूमिका चौकीदार की हुआ करती थी। भारत पर आए सभी संकटों की पूर्व सूचना पेरना समाज द्वारा ही दी जाती थी। इस समाज के द्वारा समय-समय पर जनपदीय राजाओं पर आए संकटों पर उनकी रक्षा निमित्त अपना सर्वस्व अर्पण कर देते थे। इसके अनेक उदाहरण हैं, जैसे छत्रपति शिवाजी महाराज के सेनानी के तौर पर व बाद में भी सभी पेशवाओं के साथ सैनिक गुप्तचर व छद्म सैनिक बन कर उनकी रक्षा कार्य का एक लम्बा इतिहास है। इसी प्रकार झांसी की महारानी लक्ष्मीबाई के साथ इस समाज के सभी लोगों ने अपनी राष्ट्रभक्ति का परिचय दिया। आजादी के संघर्ष के समय भी इस समाज का योगदान रहा है।

ऐसा माना जाता है कि जिस प्रकार गाड़िया लोहार समाज ने महाराणा प्रताप के लिए पाँच संकल्प लिए उसी प्रकार पेरना समाज ने भी संकल्प लिए। कभी जिसने एक पवित्र उद्देश्य से निर्माण राष्ट्र के निमित्त गुप्तचर का कार्य किया बाद में राजवंशों द्वारा इस समाज का उपयोग अपने-अपने निजी हित हेतु किया गया।

वर्तमान में इस समाज में भी अशिक्षा, इस तरह व्याप्त है कि महिलाओं को अपने बच्चों के

लिए बेरोजगारी का प्रबंध स्वयं करना पड़ता है। इन समाज के अधिकांश पुरुष नशे का सेवन करने के आदी है। इनका ज्यादातर समय जुआ आदि खेलने में व्यतीय होता है। महिलाओं को इसी कारण किसी भी प्रकार से यापन जीवन हेतु पैसा चाहिए फलतः पेरना समाज को सामान्य रूप से अछूत माना जाता है। कुछ संस्थाएँ इनके लिए कुछ सुविधाओं को जुटाने का कार्य कर रही हैं। इस समाज को मुख्यधारा में लाने हेतु कतिपय प्रयास हो रहे हैं।

1. सेवा भारती इस समाज के 7 बच्चों के साथ अपराजिता नामक महिला छात्रावास को पिछले 6 माह से संचालित कर रही है।
2. पिछले छः मास में 3 स्वास्थ्य परीक्षण शिविर लगे।
3. कोरोना काल में कोविड से बचाव के लिए जागरूकता हेतु प्राथमिक उपचार सम्बन्धी किट का वितरण हुआ।
4. इस समाज के सभी लोगों को किसी भी प्रकार का मदद की गइ।

**लक्ष्य :**

1. 20 वर्ष के एक लम्बे समय हेतु इन बच्चियों का यहाँ लालन-पालन किया जा रहा है। इन सभी बच्चियों की उम्र अभी 6 से लेकर 8 वर्ष तक है।
2. यह सभी अपराजिता में रह कर संस्कारों के प्रति जागरूक होंगी, जिससे ये सभी न केवल अपने लक्ष्य के प्रति आगे बढ़ेगीं बल्कि भारतीयता के प्रति सजग रहेगीं।
3. इन बेटियों की सफलता से पेरना समाज की सामाजिक स्वीकारोक्ति बनेगी।
4. समाज के दूसरे बच्चों के प्रति संवेदना बढ़ेगी।
5. संभवतः यह समाज आने वाले कुछ काल के बाद एक प्रतिष्ठित समाज के रूप में स्थापित होगा। अन्ततः इनका योगदान अपने देश के प्रति होगा।

# रानी रोपुइलियानी – स्वाभिमानी भारतीय नारी

इनका जन्म उत्तरी मिजोरम के राजा लाल समूंगा के यहाँ हुआ था। इनके तीन भाई व दो बहनें थीं। ये छोटी थीं। इन्होंने अपने भाई और बहनों के साथ वीरोचित खेल खेला करती थीं। उन्हें घुड़सवारी करना, तीरन्दाजी का खेल खेल खेलना अति प्रिय था। खेल-खेल में अपने अपने समाज, अपनी मिट्‌टी के प्रति, अपने देश के प्रति स्वाभिमान का जागरण सहज ही हुआ। अपने पिता के साथ सहज भाव से राज्य के कार्य में रुचि लेती थीं। इनके पिताजी ने 1796 से 1842 तक राज्य किया। इनकी शादी दक्षिण मिजोरम के राजा बांडूला से हुई थी। राजा बांडूला का साहसिक कार्यों में सदैव सहयोग करती थी। पर्यावरण प्रेमी होने के कारण इनको पेड़ों से सदैव लगाव रहता था। धरती को हरा-भरा रखने के लिए इन्होंने पहाड़ों पर लकड़ी न काटा जाए, इसके लिए नारी सेना का गठन किया था। इनकी आठ संतानें थीं। अंग्रेज अपनी सीमाविस्तार के क्रम में इन पहाड़ियों को हथियाने लगे थे। अंग्रेज ने रोपुइलियानी के भाई साइकुंआ को मजबूर करके उत्तरी मिजोरम के संधि पर हस्ताक्षर करवा लिये। इसके बाद ये दक्षिणी मिजोरम के राजा रोपुईलियानी के पति बांडूला के पास संधि प्रस्ताव लेकर गये किन्तु उन्होंने मना कर दिया। अंग्रेज डेगलूम गांव की पहाड़ियों पर सेना के आने-जाने का रास्ता बनाना चाहते थे। इस प्रस्ताव के ठुकरा दिए जाने पर मेजर सी.एस.मर्रे इनका दुश्मन बन गया। उसने 1889 में पुनः प्रस्ताव भेजा और आक्रमण की धमकी दी पर अस्वस्थता के बावजूद राजा बांडूला ने अपने राज्य की भूमि पर कब्जा न करने के प्रस्ताव पर अड़े रहे। इसी वर्ष इनकी मृत्यु के बाद इनकी पत्नी रोपुईलियानी को रानी बनाया गया। जब इन्होंने भी अंग्रेजों का प्रस्ताव नहीं माना तो 8 अगस्त 1893 को कैप्टन जे.सैक्सपियर, कैप्टन आर.ए.एस.यूथेसन के आदेश पर मिस्टर कुक ने 80 सैनिकों को लेकर डेंगूगांव पर हमला बोल दिया। रानी व उनके सैनिक बहुत बहादुरी से लड़े किन्तु आधुनिक हथियारों से लैस अंग्रेज सेना के सामने वे टिक नहीं पाए। रानी के पास पुनः संधि प्रस्ताव रखा गया पर उन्होंने अस्वीकार कर दिया और कहा मिज़ोरम की धरती मेरी माँ है और मैं का सौदा नहीं करती। इस उन्हें बंदी बना का चिटगांव जेल में अनेक यातनाएँ दी गईं। जहाँ 3 जनवरी 1895 को इनकी मृत्यु हो गई।

# Nk= e Kku dh yk txk,

*अनुभव*

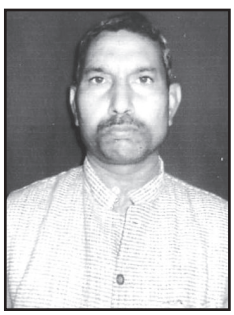

*श्री कमल कुमार*
प्रदेश निरीक्षक
जन शिक्षा समिति प०उ०प्र०

*संपर्क*
मो. 9412809203

छात्र के हृदय में जिज्ञासा, उत्कण्ठा, कौतूहलता व उत्सुकता जगाने के लिए प्रेरक का कार्य करने वाले शिक्षक ही होते हैं। अतएव आचार्य भैया, बहनों को अपने स्वयं का अवलोकन करना चाहिए और अपने उन्नयन के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए।

**1.** श्रेष्ठ शिक्षक अर्थात् ? - कक्षा कक्ष में प्रवेश करने के बाद जो शिक्षक कक्षा के सभी छात्रों के चेहरों पर प्रश्नचिह्न के भाव अंकित कर सकने में सफल हो जाए वही श्रष्ठ शिक्षक होता है अर्थात छात्रों के हृदय में जिज्ञासा, उत्कण्ठा, कौतूहलता, उत्सुकता जाग्रत कर सके वह श्रेष्ठ शिक्षक होता है। कक्षा कक्ष में जाने से पूर्व अपने विषय का T.L.M. लेकर जाता हो तथा T.L.M. का सही ढंग से प्रयोग करना आना चाहिए।

एक आचार्य जी ने अपने विद्यालय के निरीक्षण के दौरान कक्षा के एक छात्र को प्रधानाचार्य कार्यालय से ग्लोब लाने के लिए कहा - छात्र दौड़कर प्रधानाचार्य कार्यालय में गया और ग्लोब को दौड़ता हुआ लेकर आया। आचार्य जी को बालक ग्लोब दे ही रहा था तभी कक्षा के पिछले गेट से निरीक्षक कक्ष में घुसे। शिक्षक की दृष्टि निरीक्षक पर पड़ी। इस हड़बड़ी में ग्लोब को ठीक से पकड़ नहीं पाये और ग्लोब नीचे गिर गया। जैसे-तैसे उठाया, छात्र को डांटते हुए कहा - कर दिया न टेढ़ा ? आचार्य जी को यह नहीं मालूम की ग्लोब टेढ़ा ही होता है। किसी भी परिस्थिति में निर्भीकता व निडरता के साथ खड़े हो सकें ऐसा आत्मविश्वास एक शिक्षक में होना चाहिए।

**2.** **<u>Team</u>** बनाकर कार्य करना -

- जिनके मन में कुछ कर गुजरने की ललक होती है वे सतत प्रयास करते हैं और तब तक प्रयत्न करते रहते हैं जब तक सकारात्मक परिणाम न आ जाये। देश और समाज का काम करने वाले सारे भेद-भाव भुलाकर दोशों की चर्चा न करते हुए Team बनाकर कार्य करते हैं। **TEAM = Total efforts of all members**
- समर्थ व्यक्ति के पीछे कई समर्थ साथी होते हैं।
- महान् कार्य करने का मात्र एक तरीका है कि आप जो कार्य करते हैं उससे प्यार करें। यदि आपको अभी तक वह कार्य नहीं मिला तो उसे खोजते रहें जब तक उस कार्य को खोज न लें तब तक स्थिर न हों।
- व्यक्तित्व विकास यानि क्या? बालक का विकास संवेदनशीलता, सहानुभूति, सौहार्द, पारस्परिक सहयोग, आत्मीयता के साथ रचनात्मकता को गति देने वाला हो। छात्र को शिक्षक इन चार वाक्यों से हमेशा दूर रहना सिखाये।

1. I can not do it.
2. Today is my mood off.
3. I have bad luck.
4. What other will says.

- Either creat the changes or accept the changes. Other wise be ready to become a part of history.

एक सफल शिक्षक को निम्नांकित पाँच पदों पर खरा उतरना चाहिए।

1. Noble (आदर्श)
2. Self control (आत्म संयम)
3. Honesty (ईमानदारी)
4. Intelligency (बुद्धिमत्ता)
5. Personality (व्यक्तित्व)

- अपना आदर्श प्रस्तुत करते हुए आत्म

संयम के साथ ईमानदारी व बुद्धिमत्ता से बालक के व्यक्तित्व का विकास करें। उच्च व पवित्र लक्ष्य की प्राप्ति मिलावटी संशाधनों से नहीं हो सकती है। ईमानदारी की भाव-भावना से कार्य करने की प्रवृत्ति बनाने की आवश्यकता है।

**3.** **ध्येयनिष्ठ मृदुभाषी व समर्पित** – बड़े कार्य करने के लिए लक्ष्य प्रेरित निःस्वार्थ ध्येयनिष्ठ एवं समर्पित शिक्षकों की आवश्यकता होती है। हम इसी के निमित्त हैं। देश व समाज की जिन्हें चिन्ता होती है उनकी करनी और कथनी में समानता होती है। वे आत्मविश्वासी होते हैं। किसी भी प्रकार के दिये गये कार्य को हृदय से स्वीकार कर उस कार्य को अपने मनोनुकूल बनाने का प्रयास करते हैं। जो कार्य मुझे मिला है उस कार्य को पूर्ण करने की सिद्धता हासिल करूँगा यह भाव उनके मन में रहता है। देश समाज का कार्य करने वाला शिक्षक पग-पग पर मृदुभाषिता का परिचय देता है। पारदर्शी होते ही नहीं बल्कि दिखाई भी पड़ते हैं। प्रामाणिकता व संवेदनशीलता उनकी रग-रग में बसी होती है। सदैव मितव्ययिता का भाव हृदय में रहता है सदैव प्रसन्न मुद्रा रखने वाला होता है।

**4.** **लक्ष्य की स्पष्टता**

- प्रत्येक विद्यार्थी को अपने लक्ष्य की स्पष्टता का ध्यान दिलाना एक शिक्षक के लिए बहुत आवश्यक है। अंग्रेजी, गणित, विज्ञान आपका बहुत अच्छा है आप I. A. S. तो बन सकते है, किन्तु लक्ष्य की स्पष्टता न होने के कारण बहुत कुछ छूट जाता है।

Smart Target (लक्ष्य) –

| | | |
|---|---|---|
| S – | Specific | – सुस्पष्ट परिभाषित |
| M – | Measurable | – मापने योग्य |
| A – | Achievable | – प्राप्य |
| R – | Relevant | – सुसंगत |
| T – | Time bound | – समय सीमान्तर्गत |

- छात्रों को वैज्ञानिक सोच का विकास करने हेतु शिक्षक निम्नांकित छः को अपना दोस्त अवश्य बनाएं-

**(What, How, When, Why, Who, Where)**

क्या करना, कैसे करना, कब करना, क्यों करना, किसको करना और कहाँ करना। इसका ध्यान रखें तो जीवन में कभी असफल नहीं होंगे। शिक्षक को सदैव छात्रों से क्यों व कैसे के प्रश्न अधिकाधिक पूछने चाहिए। कब, कहाँ, किसने, कितने वाले प्रश्नों से परहेज करने का प्रयास करें।

**5.** **SWOT Analysis –** शिक्षक अपना और अपने छात्रों का SWOT Analysis करें। चुनौतियाँ कौन-कौन सी हैं उनको अवसर में बदलने का प्रयास करें।

| | | |
|---|---|---|
| S – | Strength | – क्षमताएँ |
| W – | Weakness | – कमजोरियां |
| O – | Opportunities | – सुअवसर |
| T – | Threats | – चुनौतियां |

मेरी कमजोरी और क्षमता मुझसे अच्छा कोई नहीं जानता। प्राप्त अवसरों और सामने आने वाली चुनोतियो का सामान कर सकने की समता जुटाना अत्यावस्यक है।

Paper, Pencil, Calculation – के कार्यों में अपनी क्षमताएँ विकसित करना। कैलकुलेटर धीमा चलाना कमजोरी है और बिना कैलकुलेटर के कैलकुलेशन करना क्षमता है।

**6.** **Observe perceive** व **Visualize** करें – अच्छा शिक्षक अपनी कक्षा का **Observation** करता है। कक्षा का **perceive** करता है और उसका **Visualize** करता है। ध्यान रहे व्यक्ति का मैनेज करना सबसे कठिन कार्य है। कष्ट तब होता है जब बालक को जाने बिना ही अनेक शिक्षक उसे मैनेज करने का प्रयास करते हैं। **Do I know them** ? क्या मैं अपनी कक्षा के प्रत्येक बालक को जानता हूँ ? उसकी आदत, उसका स्वभाव, उसके माता-पिता, उसके घर का वातावरण, उसके मित्र उसके गुण, उसके दोष, उसका शौक, उसकी व्यवस्थितता आदि। जब शिक्षक की **Absence** में छात्र सीखना शुरू कर रहे होते हैं, ऐसी स्थिति में छात्रों को लाकर खड़ा करने का काम जो करता है वह सफल शिक्षक होता है। शिक्षक का मूल कार्य छात्रों के लिए सीखने का वातावरण पैदा करना है।

**7.** **छात्रों को पहचानें** – कक्षा कक्ष में चार प्रकार के छात्र होते हैं –

1. Avoident student

वे छात्र जो शिक्षक के प्रश्न पूछने पर कक्षा में नीची गर्दन करके चुप बैठे रहते है।

2. Participatory student

जो छात्र शिक्षक के प्रश्न पूछने के तुरन्त बाद उत्तर देना प्रारम्भ कर देते हैं।

3. Collaborative student

वे छात्र जो शिक्षक के प्रश्न पूरा होने से पूर्व ही उत्तर दे देते हैं।

4. Naughty student

वे छात्र जो कक्षा में न स्वयं शान्ति से कुछ सीखते हैं और न ही दूसरे छात्रों को सीखने देते है।

**8.** **Q.C.T. (Quality Circle Test)** – कक्षा कक्ष में बैंचे छात्रों के सीखने की प्रक्रिया में सबसे ज्यादा बाधक होती हैं। मण्डल में

बैठाकर छात्रों को ज्यादा सिखाया जा सकता है। अच्छा शिक्षक सतत् जागरूक रहने वाला योद्धा है जो हमेशा अपने से लड़ता है। अपना Ego हराता है। Vilma Rovold (America) मे पैर को पैरालाइसिस हो गया। वह रेसर बनना चाहती थी। किन्तु ऐसी स्थिति में कैसे सम्भव था। ''उसके हौसले, जुनून के आगे घर परिवार रिश्तेदार सब को झुकना पड़ा।'' (जो यह कहते थे अब घर बैठो छोटी-सी दुकान खुलवा देते हैं उससे गुजारा चल जायेगा। जिंदगी अब ऐसे ही काटनी है।) उनकी स्वीकृति मिली – जो मन में है सो करो। फिर क्या – रेसर बनने की इच्छा व्यक्त की। कोच ने उसके पैर को देखा तत्पश्चात् उसके चेहरे पर नजर डाली और एक झटके में कह दिया। ठीक है, कल से तैयारी के लिए आना प्रारम्भ करें। वह गिर कर उठती, फिर गिरती फिर उठती। अपने से अपना नाम लेकर कहती Vilma you have to do it. Vilma तुम कर सकती हो और दुनिया की सर्वश्रेस्ठ रेसर बनी।

''शिक्षक को एक जादूगर की तरह कार्य करना चाहिए। उसे सीखने का वातावरण उत्पन्न करने के लिए कक्षा कक्ष में अपनी गतिविधियाँ बदलते रहना चाहिए।''

एक सफल शिक्षक को यह ध्यान रखना आवश्यक है कि अपने कार्य की गति क्या हो ?

''यदि विस्थापन शून्य है तो कार्य भी शून्य ही होगा। यद्यपि बल लगाया जा रहा है। अर्थात् यदि शिक्षक के व्यावहारिक परिश्रम से छात्र के जीवन में उल्लास, उमंग, उत्साह, अभिरुचि जाग्रत न हो तो 40 मिनट युक्त पसीना परिश्रम शून्य है। प्रत्येक छात्र एक शिक्षक के लिए सम्मानित होता है।'' ऐसा भाव आते ही फिर वह शिक्षक ऐसे छात्रों का निर्माण करने में सफल हो सकेगा जिनमें Reasonal thinking हो, जिनके हृदय में दया का भाव हो, दूसरों के प्रति संवेदना हो, कठिनाइयों को झेलने की क्षमता हो, जिसकी जीवनशैली नैतिकता के मूल्यों पर आधारित हो। Creativity को लेकर आगे बढ़ने वाला Competent हो। इस प्रकार के छात्र पूरे समाज में समयानुकूल परिवर्तन लाने की सिद्धता हासिल कर सकेगा।

**The secret of education is to respect the every student.**

''शिक्षक को ज्ञान कितना है ? इस का प्रभाव छात्र पर 7% पड़ता है। शिक्षक की वाणी का प्रभाव छात्र पर 38% पड़ता है और शिक्षक की भाव भंगिमा (अभिनय) का प्रभाव 55% पड़ता है।'' इस आधार पर सफल व सुयोग्य शिक्षक बनने का सार्थक प्रयास करें।

# बच्चों में जिज्ञासा जगाएँ

यदि बच्चों में जीवन के हर क्षेत्र में सावधान और जिज्ञासु बनकर उत्सुक आँख लेकर हर चीज को ठीक से देखते और समझने चलने की आदत का विकास कर दिया जाए तो समझो उनके लिए ज्ञान के साथ सफलता का द्वार ही खोल दिया। पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े, नदी-पर्वत, आकाश तथा प्रकृति के सुन्दर दृश्य अपनी मुखरता एवं मौनता में महानता शिक्षा का भंडार भरे रहते हैं। जो शिक्षा का लाभ उठाने की पात्रता प्राप्त कर लेता है वह विद्वान होने के साथ-सा. थ यथार्थ ज्ञान से परिपूर्ण अनुभवी मनुष्य बन जाता है। उसका प्रभाव बढ़ जाता है। उसकी मनोशक्ति का विकास हो जाता, उसकी आत्मा प्रकाशित हो उठती है और वह सफलता के सोपानों पर कदम रखता हुआ दिन-दिन आगे बढ़ता जाता है। हारवर्ड विश्वविद्यालय के महान जीवशास्त्री प्रोफेसर श्री ऐगाजिस के पास जब कोई नया छात्र आता, तब वे उसे एक मछली देते और कहा करते थे कि आधे या एक घंटे तक इसे अच्छी तरह से देखो जब छात्र मछली देखकर वापस आता तो वे उससे उसके विषय में पूछते और कहते कि तुमने अभी मछली को ऊपरी तथा सरसरी नजर से देखा है। इसे गहरी नजर से गहराई तक देखकर आओ। ऐसा वे अनेक बार कहते और जब छात्र में किसी चीज को गहराई के साथ देखने और समझने की बुद्धि का विकास हो जाता था तब उसकी शिक्षा प्रारम्भ करते थे। ऐसा करने से उनके सभी छात्र न केवल परीक्षा में ही अच्छे अंकों से पास होते थे बल्कि शिक्षा के बाद एक सफल नागरिक सिद्ध होते थे।

# Lkn'< dVEc 0;oLFkk] lkekftd lejlrk o Ik;koj.k

## *मार्गदर्शन*

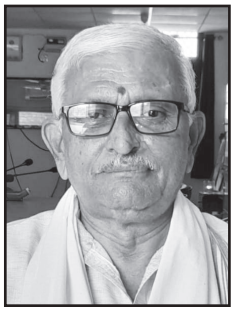

***श्री जे. एम. काशीपति***
अखिल भारतीय संगठन मंत्री,
विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान

***संपर्क***
मो. 9650339090

कुटुम्ब प्रबोधन हेतु हमें अभिभावक सम्मेलन के माध्यम से "घर ही विद्यालय'' तथा "सुदृढ़ कुटुम्ब व्यवस्था'' पर 2024 तक अधिकाधिक कुटुम्बों का प्रबोधन करना चाहिए। इस हेतु हमें क्या-क्या करना है इसकी योजनाएँ बनाएँ। अखिल भारतीय संगठन मंत्री जी ने कुटुम्ब प्रबोधन के कार्यक्रमों का स्वरूप पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि कार्यक्रम का आधार संवाद होना चाहिए। इसके लिए एक बार में 25-30 परिवारों का सम्मेलन होना चाहिए, अधिक नहीं। हमारे पास केवल विद्यालय के अभिभावक ही नहीं है बल्कि प्रबन्ध समितियों के परिवार, आचार्यों के परिवार, संस्कार केन्द्र के छात्रों के परिवार, पूर्व विद्यार्थी परिवार आदि के बारे में सोचते हुए इन सब के प्रबोधन हेतु कार्यकर्ताओं को योजना बनानी चाहिये। प्रबंध समिति, पूर्व विद्यार्थी एवं पूर्व आचार्य आदि में से कार्यकर्ताओं का चयन कर उनका प्रबोधन कर कार्यकर्ता बनाने होंगे। माताओं के बीच व बच्चियों के लिए सेविका समिति, बच्चों के लिए संघ के कार्यकर्ता, बड़े बुजुर्गों के लिए साधु-संतों को बुलाकर कार्यक्रमों की योजना हो। इस विषय पर हमारे सभी प्रवासी कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण हो।

कुटुम्ब प्रबोधन के 5 विषयों (भोजन, भजन, भूषा, भवन व भ्रमण) पर प्रमुखता से विचार करें - प्रति दिन परिवारों में एक समय सामूहिक भोजन हो। सप्ताह में एक दिन घर में सब मिलकर भजन करें। घर में पारम्परिक वेशभूषा हो। घर में महापुरुषों के चित्र तथा ग्रन्थ हों। वर्ष में एक बार दर्शनीय व ऐतिहासिक स्थलों का भ्रमण हो। गाय को रोटी, पक्षियों को दाना देने आदि विषय हो सकते हैं। परिवार मे अपनी स्थानीय बोली का प्रचलन हो। अच्छी आदतों की जानकारी को व्यवहार में लाना। पारम्परिक खेल खेलने की व्यवस्था हो।

**सामाजिक समरसता**

इस दृष्टि से संत रविदास, अम्बेडकर व बिरसा मुण्डा जयन्ती, पोषक गाँवों में शोभायात्रा, भजन, भोजन आदि की योजना, प्रवास के समय संस्कार केन्द्रों तथा परिवारों में जाना चाहिए। समरसता का विषय कार्यक्रम तक सीमित न रहे, व्यवहार में आए।

**पर्यावरण**

प्रत्येक घर में तुलसी अभियान, हर विद्यालय में नवग्रह वाटिका बनाना, कचरा प्रबंधन, वर्षा के पानी का संग्रह, हवन, पेड़ों का जन्म दिन मनाना आदि। हरिद्वार में सम्पन्न कुम्भ मेले में मुक्त पॉलिथीन कुम्भ का अभियान लिया गया जिसमें प्लास्टिक को बोतलों में भरना व इको ब्रिक्स बनाकर उसका उपयोग करना। अपने जिले, प्रान्त क्षेत्र कार्यालयों में पर्यावरण के लिए हम क्या-कया कर सकते हैं?

- सत्साहित्य छपवाकर वितरण करवाएँगे
- प्राचीन परम्पराओं पर बल।
- कार्यालय में सौर ऊर्जा द्वारा बिजली, गर्म पानी के लिए सूर्य ऊर्जा (Solar Energy), का प्रयोग, परिसर में औषधीय पौधे लगाकर उसे हरा भरा करने का प्रयत्न।
- कार्यालयों में A.C. के पानी का पुनः उपयोग, कर्मचारियों द्वारा पानी आधा गिलास ही लाने की व्यवस्था विकसित करना, आर० ओ० के बचे हुए पानी का उपयोग करना आदि।

अपने 25 विषय हैं, सभी विषयों की अ.भा. स्तर की कार्यशालाएँ हो और वहाँ से विषय नीचे तक जाएँ, सेवा क्षेत्र एवं जनजाति क्षेत्र में चलने वाले संस्कार केन्द्र विद्यालय प्रारम्भ होने के साथ ही इस विषय को भी व्यवहार में आयें, बदले परिवेश में इसका प्रबन्धन व मूल्यांकन कैसे हो, इस पर भी विचार करना चाहिये।

# fl/kh lkfgR; e jkek;.k

*वाङ्मय*

*प्रो० रविप्रकाश टेकचन्दानी*
सिंधी भाषा विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
सुप्रसिद्ध सिंधी साहित्यकार व
आलोचक तथा पूर्व निदेशक,
केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय

*संपर्क*
मो. 9540079735

सिंधी भाषा में लिखित रूप में साहित्यक रचनाएँ सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में मिलती है। इससे पूर्व काल का जो साहित्य प्राप्त हुआ है, वह प्रायः मौखिक परम्परा में सुरक्षित रहा है और बहुत बाद में लिपिबद्ध हुआ है। पन्द्रहवीं और सोलहवीं ईस्वी में जब सम्पूर्ण उत्तर भारत निर्गुण व सगुण भक्ति के रंग में रंगा हुआ था तब सिंधी साहित्य में सूफी काव्यधारा (प्रेम प्रधान), ज्ञानमार्गी काव्य धारा(संत काव्यधारा), इस्लामी काव्यधारा व शृंगारी काव्यधारा प्रवाहित थी। राम और कृष्ण की सगुण भक्तिवाली धारा जो हमें मीराबाई, सूरदास, नरसी मेहता, तुलसीदास एवं चैतन्य महाप्रभु जैसे महान भक्तकवियों की रचनाओं में मिलती है उस का दर्शन तत्कालीन सिंधी साहित्य में लेशमात्र भी नहीं होता है। पद्म श्री डॉ. मोतीलाल जोतवाणी अपनी पुस्तिका 'सिंधी और हिन्दी आदान-प्रदान' में भारत के मध्यकाल में तसव्वुफ (सूफीवाद) की पुण्यभूमि सिंध प्रदेश में सगुण भक्ति के न पनपने का कारण बताते हैं कि सिंध का तसव्वुफ (सूफीवाद) नाम मात्र से इस्लामी था परन्तु उसका चरित्र इस्लामी नहीं था। यह पूरी तरह से वेदान्त से प्रभावित था और हिन्दू लोगों की आध्यात्मिक पिपासा मुसलमान सूफी कवियों द्वारा अद्वैतवाद या वहदत अलवजूद के आधार पर रचित सूफी काव्य से शान्त हो जाती थी।

शाह अब्दुल तलीफ (1686-1752) द्वारा रचित 'सुर रामकली' में और सचल सरमस्त के कलाम में राम का निर्गुण रूप का उल्लेख हुआ है। रामायण और महाभारत जैसे ऐतिहासिक ग्रंथों के चरित्रनायक अपने निर्गुण रूप में मध्यकालीन सिंधी सूफी कविता में विद्यमान हैं। सूफी धारा के अग्रणी कवि शाह अब्दुल लतीफ ने शाह जो रिसालो के सुर रामकली में राम तत्त्व का इस प्रकार निरुपण किया है।

वैराग्युनि वसे, राम सदाई रूह में।
अर्थात-राम सर्वदा वैरागी साधुओं के चित्त में ही बसते हैं।

*रूह में रहियुनि राम, बहरि बोलीनि कीवियों,*
*प्यालों पुरु करे, जोप पीताऊं जामुं,*
*तिहां पोई तमामु, तिनि तकिया ताके छडिया।*

अर्थात-सच्चे योगी बाहर से भले ही कुछ भी कहते हों परन्तु उनके हृदय में तो केवल राम ही बसते हैं। योगियों ने भरे हुए प्रेम प्याले खूब पी लिया है। और तदन्तर उन्होंने समस्त अवलम्ब और सहारे त्याग दिए हैं।

*हर-हर कनि हरिनामु, धुवनि डिहाणी धोतिया,*
*जनि न रीझायो रामु, नाथु न नमे तिनि खे।*

अर्थात -बारंबार हरि नाम उच्चारित करने व प्रतिदिन लंगोटियां धोकर शुद्ध करने से प्रभु नहीं मिलते हैं जिन्होंने राम को नहीं रिझाया, उनकी ओर नाथ द्रवित नहीं होते हैं।

सूफी धारा के दूसरे धुरंधर कवि सचल सरमस्त (1739-1826) का काव्य भी सांकेतिक रूप से, रामतत्व के भावों को अभिव्यक्त करता है।

*राम रहीम हिको हिकु समझो, मौज मुहब्बत माणी।*

अर्थात -राम व रहीम को एक तत्व समझकर, प्रेम का आनन्द लूटो।

*कडहिं तूं रामु ऐं सीता*
*कडहिं लछिमणु लखाईं थो*
*कडहिं हनुमान कोठाई।*

अर्थात-मेरे प्रियतम ! कभी तो तुम राम और सीता लखाते हो और कभी लछिमन तो कभी हनुमान कहलाते हो।

*सचू साईं हेकिड़ो, नाहे शकु गुमानु,*
*पहिंजो तमाशो, पाण डिसे थो, सूरत मंझि सुल्तानु,*
*काथे ईसा, काथे अहमद, काथे हनुमानु,*
*हैरत में हैरानु, पहिजों विधाई पाण खे।*

अर्थात - इसमें संशय नहीं है कि प्रभू एक है। कही ईसा, कहीं, अहमद, कहीं हनुमान। प्रभु ने स्वयं की विभिन्न सुरतें बनाकर हैरत

में डाल रखा है।

वेदांत मूलक संत काव्य का मुख्य विषय भारतीय दर्शन, साधना तथा भक्ति मार्ग का प्रतिपादन करना था किन्तु भिन्न परम्पराओं के बावजूद सूफी काव्य धारा व ज्ञानमार्गी काव्यधारा का मूल आध्यात्मिक सदेंश एक ही रहा।

मध्यकाल के अंत में चैनराई बचोमल दत्तारामाणी सामी (1743-1850) निर्गुण भक्ति धारा के प्रसिद्ध सिंधी हिन्दू संत कवि हुए हैं। ये शाह अब्दुल लतीफ व सचल सरमस्त की भांति कभी भी खुलकर सामने नहीं आए, इनका काव्य 'सामीअ जा सलोक' इनकी मृत्यु के कई वर्षों बाद प्रकाशित हुआ। उनके श्लोकों में राम तत्व का प्रतिपादन इस प्रकार हुआ है :

*आहिनि अगम अपार, राहां राम मिलण जूँ।*
*तिनि सभिनी में हिकड़ी, साधु संगति निज सार।।*

अर्थात -राम-मिलन के अनगिनत मार्ग हैं, इन सबमें संत संगति सर्वोपरि और सार रूप है।

*अंदर बाहिरि रामु सामी जहिं सही कयो,*
*मिटी तंहिंजे मन मों, बी सभि खुदी खाम।*

अर्थात -जिसने अपने भीतर तथा बाहर राम को पहचाना उनके मन का अहं सर्वथा समाप्त हो जाता है।

जहाँ मध्यकाल (सन् 1500-1843 ई.) के सिंधी साहित्य में राम निर्गुण ब्रह्म के रूप में प्रस्तुत हुए वही सन् 1843 ई. में अंग्रेजों का शासन स्थापित होते ही राम की सगुणोपासना से पूर्ण काव्य कृतियों की लहर आई।

सन् 1843 ई. में सिंध में अंग्रेजों के राज्य की स्थापना के साथ-साथ सिंधी साहित्य में आधुनिक काल आरम्भ हुआ। पद्य के साथ गद्य की विभिन्न विधाओं का विकास प्रारम्भ हुआ। यातायात की सुविध ााएँ होने के बाद राम की लीलाओं को रंगमंच पर प्रस्तुत करने के लिए अन्य प्रांतों से मंडलियाँ सिंध में आने लगीं। उनसे प्रेरित होकर संस्कृत तथा हिन्दी में उपलब्ध रामकथाओं के आधार पर सिंधी भाषा में नाटक लिखकर रंगमंच प्रस्तुत करने की पम्परा का आरम्भ हुआ। पिछली सदी के अंतिम दशक में सिंध के प्रसिद्ध लेखक लीलाराम वतनमल लालवाण ाी (सन् 1867-1941 तक) ने 'रामायण' नामक नाटक लिखा। उसका प्रेरणा स्रोत वाल्मीकि रामायण के साथ-साथ तुलसीकृत रामचरित मानस भी था। यह नाटक सन् 1868 ई. में मंच पर सफलता से खेला गया। उस काल के अन्य प्रसिद्ध नाटककार डेऊमल गागनमल ने भी 'राम वनवास' नाम से सिंधी में नाटक लिखा। इसकी प्रेरणा गोस्वामी तुलसीदास की कृति है।

गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस रामाश्रयी सगुण भक्ति की काव्य धारा का अनुपम ग्रंथ है। बीसवीं सदी के प्रथम दशक में, महाराज तेजूराम शर्मा द्वारा सन् 1902 के आसपास कराची में स्थापित सनातन धर्म प्रचार सभा ने 'तुलसीकृत रामायण' नाम से सिंधी गद्य में मानस का प्रथम अनुवाद प्रकाशित किया। आजकल यह ग्रंथ उपलब्ध नहीं है।

सन् 1947 ई. में देश की स्वतंत्रता के पूर्व लोकूराम पेसूमल डोडेजा ने सन् 1946 ई. में वाल्मीकि कृत रामायण का सिंधी में अनुवाद किया था परन्तु इसकी तुलना में तुलसी की कृति का सिंध में अधिक प्रचार देखकर उन्होंने सन् 1947 ई. में 'तुलसी रामायण' नाम से मानस का गद्यानुवाद प्रकाशित किया। यह इतना लोकप्रिय सिद्ध हुआ कि भारत में आकर महाराष्ट्र के पुणे नगर में निवास करने के बाद लोकूराम ने इसके सात संस्करण प्रकाशित किए।

श्री तुलसीकृत रामायण बालकाण्ड नाम से मानस के प्रथम काण्ड का अनुवाद गोविन्दराम केवलराम थधाणी ने किया। यह ग्रंथ सन् 1947 ई. में कराची से प्रकाशित हुआ है। जिसमें मानस की मूल चौपाई और दोहे देवनागरी लिपि में छापकर उनके नीचे सरल सिंधी भाषा में उनका अनुवाद किया गया है।

इस युग में दो और भी सिंधी अनुवाद दिखाई देते हैं, जो संक्षिप्त है। मेलाराम मंगतराम वारवाणी ने बच्चों लिए 'बाल रामायण' नाम से एक सचित्र पुस्तक सन् 1930 ई. के आसपास प्रकाशित की। सन् 1922 ई. में चैनराई बूलचन्द आडवाणी ने 'रामगीता' नामक पद्यानुवाद प्रकाशित किया है। इसमें संक्षिप्त रूप में तुलसी के रामचरित मानस के आधार पर राम कथा का सिंधी कविता में वर्णन किया गया है।

स्वतंत्रता के पश्चात् विभाजन की त्रासदी का शिकार बने सिंधी हिन्दुओं को अपनी जन्मभूमि 'सिंध' को छोड़ना पड़ा परन्तु धर्म निष्ठा, परम्पराएँ व रामायण संस्कृति की धरोहर वे अपने साथ लाए। सन् १९४७ ई. के बाद भारत में रामायण की कथा को सिंधी भाषा में प्रस्तुत करने वाली अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुईं हैं। लेखकों ने वाल्मीकि तथा तुलसीदास की कृतियों को आधार बनाकर, रामकथा प्रस्तुत की है। इस प्रकार की पुस्तकों में संत रामदास सोभासिंह जुड़िया सिंधाणी की पद्य में कृति 'रामकथा' (1954) मौलिक है। अतः विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त तुलसीकृत रामायण नाम जोधपुर निवासी उत्तमचंद शास्त्री ने एक ग्रंथ लिखा जिसे उल्हासनगर महाराष्ट्र के एल. किशनचंद ने प्रकाशित किया है। इसी प्रकाशक ने बच्चों के लिए बाल रामायण भी चित्रों सहित प्रकाशित किया है। इसी प्रकार ग्वालियर, मध्य प्रदेश के हेमनदास बुक सेलर ने तुलसीकृत रामायण नाम से सिंधी गद्य में देवनागरी लिपि में एक ग्रंथ प्रकाशित किया है।

भारत में रामचरित मानस का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सिंधी अनुवाद तुलसी तलरेजा ने सन् 1968 ई. में किया है। कुल 964 पृष्ठों का यह सम्पूर्ण ग्रंथ पद्य में है। इसका नाम गोस्वामी तुलसीदास कृत रामायण ा। अनुवादक ने छंद के बंधन की अपेक्षा संगीत के स्वर, ताल और

लय तथा गेयता को अधिक महत्त्व दिया है। यह भावानुवाद है। जिसमें प्रबंधात्मकता का विशेष ध्यान रखा गया है। भाषा सरल होते हुए भी प्रभावपूर्ण है। प्रत्येक पद्य के नीचे गद्य में उसका अर्थ भी स्पष्ट किया गया है।

उदाहरणार्थ -

*सोहत जनु जुग जलज सनाला, ससिहि सभीत देत जयमाला।*
*गावहिं छवि अवलोकि सहेली, सिय जयमाल रामउर मेली।*

सिंधी अनुवाद :

*गुल डांडीय ब कमल जिएं, डिजी पाइनि चंडमाला तिएं ।*
*गीत सहेलियुनि मधुर पुणि गाए, जयमाला सीय राम पहराए।*

मूल :

*श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मन मुकुरु सुधारि ।*
*वरनउं रघुवर विमल जसु, जो दायक फल चारि ।।*

सिंधी अनुवाद -

*रज चरन मस्तक धरे, दरसनी मन निहारि ।*
*वारिण्यां रघुवर विमल जसु, जो दायक फल चारि ।।*

भारत में प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच सिंधी भाषा में सिंधी सन्तों, साधुओं, लेखकों, कवियों ने रामायण साहित्य पर कार्य किया है। प्रसिद्ध संत साधु टी.एल. वासवानी द्वारा लिखित 'राम रोशनी', 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम', 'राम किथे,' रघुपति राघव राजा राम आदि पुस्तकें सिंधी समाज को रामभक्ति हेतु प्रेरित करती रहती हैं। इतना ही नहीं वर्तमान में कैसेटों के माध्यम से भी रामायण की कथाएँ व चरित्र सिन्धी जनों के घर-घर पहुँच रहे हैं।

जब मैं अपने इतिहास पर दृष्टिपात करता हूँ तब मुझे प्रतीत होता है कि विश्वभर में ऐसा कोई देश नहीं है जिसका मानव-मन के उत्थान में इतना योगदान रहा हो। भारत ने पुरातन काल में ही सबसे पहले वैज्ञानिक चिकित्सक दिए। भारत ने नाना रसायनों की शोध करके आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में भी योगदान दिया है। गणित, बीज गणित, रेखा गणित, खगोलशास्त्र और आधुनिक विज्ञान मिश्रित गणित की प्रगति में तो बहुत कुछ ऐसा किया है। इन सबका आविष्कार भारत में ठीक वैसे ही हुआ जैसे दस अंको का, जो वर्तमान सभ्यता के समस्त अनुसंधानों की आधारशिला है। इन अंकों का अन्वेषण भारत में हुआ जो वस्तुतः संस्कृत शब्दावली में है।

***- स्वामी विवेकान्द***

नितांत मौन रहकर, अटल निष्ठा सहित, एकान्त चित्त से, सम्पूर्ण रूप से आत्मसमर्पण करो। तुम्हारी वर्तमान शिक्षा के उपर्युक्त भावों के प्रतिकूल होने के बावजूद इस संघर्ष में तुम्हारी दृढ़ता और भी द्विगुणीत होगी। यह विरोध ही तुम्हारी शिक्षा का कारण होगा। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे हृदय में भारतवर्ष का सहज गौरव स्वयं ही विराजमान है। जिसने इतने समय तक अनेक समस्याओं से तुम्हारी रक्षा की है एवम् अभी तक तुम्हारा परित्याग नहीं करेगा। अँग्रेजी शिक्षक गण तुम्हारे इस स्वाभाविक तेज को ग्लानकर अपनी ओर आकृष्ट करने की अनेक चेष्टाएँ करेंगे। इस प्रतिकूल प्रयास में तुम्हारा तेज और निखरकर तुम्हें इस दुरूह परीक्षा में उत्तीर्ण करे। भारत माँ का आशीर्वाद तुम्हारी रक्षा करे। दूसरे धर्म को ग्रहण करने की अपेक्षा अपने धर्म की रक्षा में मृत्यु वरण करना ही श्रेयस्कर है यह परम सत्य है। इसे अपने हृदय में बैठा लो।

यह भूमि जिसकी पूजा हमारे संत महात्माओं ने मातृभूमि, धर्मभूमि, कर्मभूमि एवं पुण्यभूमि के रूप में की है और यही वास्तव में देवभूमि और कर्मभूमि है। यही अनन्त काल से पावन भारत माता है। जिसका नाम मात्र ही हमारे हृदयों को शुद्ध, सात्विक भक्ति की लहरों से आपूर्ण कर देता है। अहो! यही तो हम सब की माँ है -हमारी तेजस्विनी मातृभूमि।

***माधवराव सदाशिवराव गोलवकलकर 'श्रीगुरु जी'***

# i;kZoj.k f'k{kk % jk"Vªh; f'k{kk uhfr&2020

## पर्यावरण

*श्री संजय स्वामी*
राष्ट्रीय संयोजक
पर्यावरण शिक्षा,
शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास

*संपर्क*
मो. 9871082500

34 वर्षों के लंबे अंतराल के बाद बहुप्रतीक्षित, जनापेक्षित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 जुलाई 29 को राष्ट्र पटल पर आ ही गई। जन-जन की अपेक्षाओं को समाहित करने के लिए लगभग साढ़े पाँच वर्ष चले मैराथन चिंतन-मंथन, दो लाख से अधिक सुझावों के बाद 'सर्वजनहिताय सर्वजन सुखाय' की लोक कल्याणकारी मंगल भावना को पूरा करने, शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन करने हेतु जन आकांक्षाओं की पूर्ति करने के लिए प्रतिबद्ध भारतीय ज्ञान परंपरा, भारतबोध तथा पूर्णतः भारतीयता से ओत-प्रोत शिक्षा नीति सम्मुख है।

शिक्षा नीति में शिक्षा क्षेत्र के सभी पहलुओं को उचित स्थान देने का विचार हुआ है। विश्व की वर्तमान समय की सबसे ज्वलंत समस्या पर्यावरण व प्रदूषण को भी इसमें रेखांकित किया गया है। पर्यावरण की जिन समस्याओं से वैश्विक समाज जूझ रहा है, उनके समाधान की ओर भी यह शिक्षा नीति में प्रयत्न दिखाई देता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रारूप में पर्यावरण से संबन्धित बिंदु इस प्रकार हैं –

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुच्छेद 4.23 में पर्यावरण संबंधी जागरूकरता, जिसमें जल और संसाधन संरक्षण, स्वच्छता और साफ-सफाई आदि को सम्मिलित किया गया है। समसामयिक विषयों और स्थानीय समुदायों, राज्यों, देश-दुनिया द्वारा जिन महत्त्वपूर्ण मुद्दों का सामना किया जा रहा है। उनका ज्ञान विद्यार्थियों को कराने की बात इसमें है।

अनुच्छेद 4.24 के अंतर्गत विद्यार्थियों के लिए समसामयिक विषयों जैसे 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस' के साथ-साथ 'होलिस्टिक हेल्थ', 'ऑर्गेनिक लिविंग', पर्यावरण शिक्षा, आदि विषयों की शुरुआत तथा प्रारंभिक स्तर पर छात्रों को विभिन्न कौशलों को विकसित करने हेतु समुचित शिक्षाक्रम और शिक्षण शास्त्रीय कदम उठाए जाने की बात कही गई है।

अनुच्छेद 4.26 में विद्यालय शिक्षा में कक्षा 6 से 8 के प्रत्येक विद्यार्थी को स्थानीय स्तर पर स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए आनंददायी पाठ्यक्रम राज्य तथा स्थानीय संस्थाओं, समुदायों द्वारा उपलब्ध कराया जाएगा जिसमें महत्त्वपूर्ण व्यावसायिक शिल्प, कौशल जैसे कि बढ़ईगिरी, बागवानी, मिट्टी के बर्तनों के निर्माण आदि का कार्य अर्थात् श्रम आधारित कार्य जिसके अंतर्गत खेल खेल में विद्यार्थी अपने हाथों से काम करने का अनुभव प्राप्त करेगा। आयु के तीसरे चरण में जीवन जी रहे शिक्षाविदों, शिक्षकों, अभिभावकों को अपने बचपन के दिन ध्यान होंगे जब वह तालाब किनारे गाँव के बाहर मिट्टी-रेत में मिट्टी के घरोंदे बनाते थे। गाँव के कुम्हार धनुआ काका से खूब ठिठोली करते थे। उसकी गीली-गुथी मिट्टी ले उसकी नकल करते, उस जैसे ही मिट्टी के खिलौने बनाने का प्रयास करते थे। इस नीति के अंतर्गत एनसीईआरटी द्वारा विद्यालय शिक्षा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा एनसीएफएस ई 2020-21 तैयार करते हुए एक अभ्यास आधारित पाठ्यक्रम उचित रूप से डिजाइन किया जाएगा। कक्षा छठी से आठवीं में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थियों को दस दिन के लिए विद्यालय में प्रशिक्षु के रूप में बस्ता रहित आनन्ददायी कोर्स सीखने समझने के अवसर उपलब्ध कराये जायेंगे। इसी प्रकार कक्षा 6 से 12 के विद्यार्थी को छुट्टियों के दौरान् विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक कोर्स उपलब्ध कराए जा सकेंगे। बस्ता रहित विभिन्न प्रकार की कलाएँ, क्विज, खेल, व्यावसायिक हस्तकलाओं को प्रोत्साहन दिया जाएगा। विद्यार्थियों को ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और पर्यटन महत्त्व के स्थानों, स्मारकों का भ्रमण कराया जाएगा। स्थानीय कलाकारों, शिल्पकारों से मिलने के लिए अपने गाँव/तहसील/जिला केन्द्र पर उच्चतर शैक्षणिक संस्थानों का दौरा करने के लिए अवसर उपलब्ध कराए जायेंगे।

अनुच्छेद 4.27 में ''भारत का ज्ञान'' के अंतर्गत वर्तमान चुनौतियों के समाधान के संदर्भ में प्राचीन भारत के ज्ञान और उसके योगदान को सीखने समझने का अवसर दिया जाएगा। शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण आदि के संबंध में भारत की भविष्य की आकांक्षाओं की स्पष्ट भावना सम्मिलित होगी। इन सभी तथ्यों को संपूर्ण विद्यालय पाठ्यक्रम में जहाँ भी प्रासंगिक हो वहाँ वैज्ञानिक तरीके से और सटीक रूप में सम्मिलित किया जाएगा। इसमें खगोल विज्ञान, योग, दर्शन, वास्तुकला, चिकित्सा, जैविक खेती, प्राकृतिक खेती, पारंपरिक खेती, कृषि इंजीनियरिंग, वन प्रबंधन, जनजातीय, एथनो-औषधीय प्रथाओं आदि के विशिष्ट पाठ्यक्रम उपलब्ध कराया जाएगा। आनंद और मस्ती के माहौल में स्वदेशी खेलों के माध्यम से विभिन्न जटिल विषयों को सीखने समझने के लिए विद्यालय में प्रतियोगिताएँ आयोजित की जा सकेंगी।

अनुच्छेद 5.24 में शिक्षक शिक्षा के अंतर्गत प्रशिक्षु अध्यापकों को पर्यावरण के प्रति जागरूक होने, उसके संरक्षण तथा सतत विकास के प्रति संवेदनशीलता सीखने का अवसर प्रदान किया जाएगा ताकि पर्यावरण शिक्षा स्कूल पाठ्यचर्या का एक अभिन्न अंग बन सके।

अनुच्छेद 11.8 में उच्च शिक्षा के अंतर्गत उच्च शिक्षा संस्थान के लचीले और नवीन पाठ्यक्रम में क्रेडिट आधारित शिक्षा पाठ्यक्रम और सामुदायिक जुड़ाव एवं सेवा जिसमें पर्यावरण शिक्षा एवं मूल्य आधारित शिक्षा के क्षेत्र सम्मिलित होंगे। पर्यावरण शिक्षा में जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, अपशिष्ट प्रबंधन, स्वच्छता, जैविक विविधता का संरक्षण, जैविक संसाधनों का प्रबंधन, जैव विविधता, वन और वन्य जीव संरक्षण और सतत विकास तथा रहने जैसे क्षेत्र शामिल होंगे।

अनुच्छेद 17.4 वर्तमान समय में भारत में सामाजिक चुनौतियों के समाधान स्थानीय स्तर पर ही खोजने की आवश्यकता है। इस अनुच्छेद में सभी नागरिकों के लिए पीने के पानी की स्वच्छता, स्वास्थ्य सेवा, बेहतर परिवहन, गुणवत्ता पूर्ण वायु, बिजली और बुनियादी चीजों की जरूरत को कहा गया है। जिसके लिए व्यापक समाधानात्मक दृष्टिकोण और क्रियान्वयन की आवश्यकता होगी, जो न केवल शीर्ष विज्ञान और प्रौद्यागिकी पर आधारित हो, अपितु सामाजिक विज्ञान, मानविकी तथा राष्ट्र के विभिन्न सामाजिक सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय आयामों की गहरी समझ पर भी आधारित हो। ऐसा उल्लेख किया गया है इन चुनौतियों का सामना करने, समाधान खोजने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान करने की स्वयं की क्षमता का होना महत्वपूर्ण होगा।

अनुच्छेद 20.3 कृषि शिक्षा और इससे संबंधित विषयों को पुनर्जीवित करने की बात कही गई है। नीति में लिखा है कि देश में कृषि विश्वविद्यालय 9 प्रतिशत हैं परन्तु विडम्बना कि कृषि और संबद्ध विज्ञान विषयों में नामांकन उच्चतर शिक्षा के कुल नामांकन के 1 प्रतिशत से भी कम है। विद्यार्थियों की घटती संख्या को देखते हुए कृषि शिक्षा की प्रक्रिया को ऐसे व्यावसायिक व्यक्तियों के विकास के लिए परिवर्तित किया जाएगा। जो स्थानीय ज्ञान पारंपरिक ज्ञान और उभरती हुई तकनीकों को समझ सकें। और उसका उपयोग कर सके इसके साथ ही महत्त्वपूर्ण मुद्दों जैसे कि भूमि की गिरती उत्पादन शक्ति, जलवायु परिवर्तन, हमारी बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए पर्याप्त भोजन की आवश्यकता आदि को लेकर जागरूक हो। कृषि शिक्षा प्रदान करने वाले संस्थानों से स्थानीय समुदाय सीधे-सीधे लाभान्वित हो इसका एक तरीका हो सकता है। कि कृषि प्रौद्योगिकी पार्क की स्थापना करना ताकि प्रौद्योगिकी 'इन्क्यूबेशन' और उसके प्रसार और टिकाऊ तरीकों को बढ़ावा मिल सके।

खेती किसानी का सीधे-सीधे पर्यावरण से संबंध है। आज मृदा अपरदन उपजाऊ भूमि का ऊसर होना, भूमिगत जल का स्तर धीरे-धीरे नीचे जाना, बेमौसम वर्षा अतिवृष्टि-अल्पवृष्टि आदि अनेक आपदाओं को किसान झेलता है। भारत में आज भी 65 से 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के ऊपर आश्रित है। छोटी जोत वाले किसान दरिद्रता से प्रभावित हैं, पीड़ित हैं। न उन्हें पर्यावरण का ज्ञान है और नही वे अपने सीमित साधनों में पर्यावरण संरक्षण प्रकृति संवर्धन की बात सोच सकते हैं। संसाधनों का सर्वथा अभाव तो भी हाड़तोड़ मेहनत में गुजर बसर कर रहे किसानों के लिए स्थानीय स्तर पर ही सहज सरल उपाय सुझाने होंगे। किसानों को जैविक कृषि, फसल-चक्र कीटनाशकों के अति प्रयोग से बचना, मिट्टी की उर्वरा शक्ति बनाए रखना आदि की जानकारी उनकी भाषा-बोली में देनी होगी। छोटी जोत के किसानों को बिना रसायनों के प्रयोग किए सब्जी, बागवानी, आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों की खेती की ओर प्रवृत्त करना होगा। इस सब के लिए कृषि क्षेत्र में पर्यावरण शिक्षा के व्यावहारिक पाठ्यक्रम को सम्मिलित किए जाने की नितांत आवश्यकता है। निश्चित रूप से नीतिकार समग्रता से विचार करेंगे।

# vfre d{kk

## धरोहर

## फ्रेंच कहानी

*श्री आल्फोंस दोदे*
सुप्रसिद्ध साहित्यकार

उस सुबह मुझे स्कूल जाने में बहुत देर हो गई थी और मुझे डर लग रहा था कि श्रीमान् हैमल मुझे डाँटेंगे क्योंकि उन्होंने कहा था कि वे हमसे कृदंत के बारे में पूछेंगे और मुझे कृदंत का भी पता नहीं था। एक क्षण के लिए मेरे मन में विचार आया कि आज स्कूल न जाऊँ और यहीं मैदान में खेलूँ। उस दिन मौसम बिल्कुल सुहावना और आसमान साफ था। मैं पेड़ों से आ रही पक्षियों की चहचहाने की आवाज को साफ-साफ सुन सकता था और मैंने आरा मशीन के पीछे रीर्प मैदान में प्रुसियन सेना को मार्च करते देखा। यह सब मुझे कृदंत के नियमों से बहुत अच्छा लग रहा था, पर मैं तेजी से स्कूल की तरफ दौड़ा। मैंने टाउनहॉल से गुजरते हुए देखा कि वहाँ के नोटिस बोर्ड के पास लोग इक्ट्ठे हैं। विगत दो वर्षों से, इस जगह से ही हमें सारे बुरे समाचार प्राप्त होते हैं; जैसे युद्ध में हार, अधिग्रहण, हेडक्वार्टर के आदेश और मैंने बिना रुके सोचा 'अब क्या हुआ?'

जब मैं दौड़ते हुए उधर से गुजर रहा था, तब वाचर लोहार ने जो अपने सहायक के साथ वहाँ पोस्टर पर लिखे को पढ़ रहा था, मेरी तरफ चिल्लाकर कहा, ''दौड़ो मत बच्चे, आज तुम्हे स्कूल पहुँचने में देर नहीं होगी। ' मुझे ऐसा लगा, जैसे वो मेरा मजाक उड़ा रहा हो और मैं हाँफते हुए श्रीमान् हैमल के अहाते में पहुँचा। . .मैं सोच रहा था कि कैसे बिना ध्यान में आए, अपनी बेंच पर बैठ जाऊँ, पर उस दिन वहाँ नीरव शांति पसरी थी, जैसे कोई रविवार का दिन हो। खुली खिड़की से मैंने देखा कि मेरे सभी सहपाठी अपनी जगह पर पहले ही बैठे हुए हैं और श्रीमान् हैमल लोहे की वही इंच लिए कक्षा में इधर से उधर चिंतामग्न टहल रहे हैं। इसी घनघोर शांति में मुझे दरवाजा खोलना और अंदर प्रवेश करना था। आप सोच सकते हैं कि मैं कितना लज्जित और डरा-सहमा होऊँगा। खैर कुछ नहीं हुआ। श्रीमान् हैमल ने मुझे बिना क्रोध के देखा और बड़ी धीरे से कहा, ''मेरे नन्हें फ्रांज, हम तुम्हारे बिना ही शुरू करने जा रहे थे।''

मैं अपनी बेंच की तरफ गया और धम्म से अपनी जगह पर बैठ गया। तब जाकर मैं अपने डर से उबरा और ध्यान दिया कि हमारे शिक्षक ने आज अपना खास हरे रंग का कोट, झालदार टाई और रेशमी काली टोपी पहनी है, जो वे स्कूल निरीक्षण के दौरान या फिर पुरस्कार वितरण के दिन पहना करते थे। इसके अलावा, पूरी कक्षा आज असाधारण रूप से शांत और गम्भीर थी। लेकिन सबसे आश्चर्यजनक मुझे यह देखकर लगा कि क्लास के पीछे के सीटें जो अक्सर खाली रहती थीं, वहाँ आज गाँव के लोग बैठे थे और वे सब भी हमारी तरह से शांत थे। त्रिकोण टोपी में वृद्ध हौसर, पूर्व मेयर डाकिया और फिर अनेक लोग मौजूद थे। सभी लोग दुखी दिख रहे थे और हौसर एक पुरानी कुतरी हुई ककहरा की किताब लाए हुए थे। यह सब देखकर मैं हैरत में था, तभी श्रीमान् हैसल अपने कुर्सी से उठे और उसी धीर-गम्भीर और शांत आवाज में सभी बच्चों को संबोधित किया ''मेरे बच्चों ! यह आखिरी पाठ है, जो मैं पढ़ा रहा हूँ। बर्लिन से आदेश आया है कि अब आलसास और लोरेन के स्कूलों में सिर्फ जर्मन भाषा पढ़ाई जाए। कल नए शिक्षक आ रहे हैं, आज यह फ्रेंच का अंतिम पाठ है।''

ये शब्द मुझे परेशान और दुखी कर रहे थे। आह! कितना मनहूस दिन था वह! अब मुझे समझ में आया कि यह वही आदेश था जो टाउनहॉल पर लगा हुआ था। मेरा फ्रेंच का अंतिम पाठ. .

और मैं बडी मुश्किल से लिख पाता था। अब क्या मैं कभी सीख पाऊँगा। इसलिए मेरा वहाँ ठहरना जरूरी था। अब मुझे अपना गुजरा हुआ वक्त वापस चाहिए था; जो मेरी कक्षाएँ, मेरी घोसलों के पीछे दौड़ने और सार नदी में तैरने के कारण छूट गईं थी, उन्हें मैं फिर से करना चाहता था। श्रीमान् हैमल भी मुझे अच्छे

लग रहे थे और उनके दंड एवं उनके इंच की मार मैं भूल चुका था, क्योंकि अब लग रहा था कि मैं उन्हें फिर कभी देख नहीं पाऊँगा।

बेचारे श्रीमान् हैमल बहुत अच्छे आदमी थे। अब जाकर मैं समझा कि आज ऐसा क्यों है, क्यों आज गाँव के बूढ़े लोग कक्ष में आकर पीछे बैठे हैं और क्यों रविवार की अच्छी आदतें आज दिखाई दे रही हैं। आज ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वृद्ध लोग पछतावा कर रहे हैं कि वे पहले प्रायः क्यों नहीं इस विश्वविद्यालय में आए। वह एक तरीका था, जिससे उस शिक्षक के प्रति कृतज्ञता व्यक्त हो, जिसने बड़ी लगन से अपने जीवन के बहुमूल्य चालीस वर्ष इस विद्यालय एवं गाँव की सेवा को समर्पित किए हों और दूसरा वह अपने देशप्रेम को प्रदर्शित करने का जरिया था। अभी मैं अपने विचारों में खोया था कि सुना कि मेरा नाम पुकारा जा रहा है। अब मेरे बोलने की बारी थी, मुझे कृदंत का लम्बा एवं प्रसिद्ध नियम ऊँची और स्पष्ट आवाज में बताना था और कोई गलती भी नहीं होनी चाहिए थी। पर मैं पहले शब्द ही लड़खड़ा गया; भारी मन से सिर झुकाए अपनी जगह पर खड़ा रहा। मैंने श्रीमान् हैमल को कहते सुना, ''मेरे प्यारे फ्रांज मैं अब तुम्हें नहीं डाटूँगा, पहले ही तुम बहुत डाँट खा चुके हो, तुम्हारे लिए उतना ही काफी है। रोज हम खुद से कहते हैं, वाह! अभी तो काफी समय है। मैं कल पढ़ लूँगा और अब तुम देख रहे हो क्या हुआ.. ओह! हमारे आलसास के लिए बहुत दुर्भाग्य है कि हम आज का काम कल पर टाल देते हैं। अब वे लोग अधिकार से कह सकते हैं कि कैसे फ्रांसीसी हो, अपने आप को फ्रांसीसी कहते हो और अपनी भाषा में न पढ़ना जानते हो और न ही लिखना। पर मेरे बदनसीब फ्रांज! इन सब में तुम्हारा कोई दोष नहीं है, जितना हम सबका है, हम सभी इसके लिए समान रूप से जिम्मेदार हैं। हम सभी को खुद से पूछना होगा कि हमने अपनी तरफ से क्या किया ?''

तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारी पढ़ाई पर उचित ध्यान नहीं दिया। वे तुम्हें कुछ चंद पैसों की खातिर खेतों में और मिल में काम करने के लिए भेजते रहे। खुद मैं भी कम दोषी नहीं हूँ। मैंने तुम्हें पढ़ने की बजाए बाग में पौधों को सींचने के लिए नहीं भेजा क्या ? और इस तरह से, बात करते-करते श्रीमान् हैमल ने फ्रेंच भाषा के बारे में बोलना शुरू किया। उन्होंने कहा कि फ्रेंच भाषा दुनिया की सबसे बेहतरीन भाषा है। हमें इसे अपने बीच जिंदा रखना होगा और इसे कभी भूलना नहीं होगा क्योंकि आदमी गुलाम होता है, तब उसकी गुलामी से आजादी की एक मात्र कुंजी उसकी अपनी जुबान है। फिर उन्होंने व्याकरण लिया और हमें एक पाठ पढ़ाया। मैं वह देखकर हतप्रभ रह गया था कि इतनी आसानी से मैं कैसे समझ गया। उन्होंने जो कुछ मुझसे कहा, मुझे बेहद सरल लगा। मुझे यह महसूस हुआ कि पहले कभी मैंने इतनी तन्मयता से उन्हें नहीं सुना और न ही उन्होंने पहले कभी इतने धैर्य के साथ समझाया। पाठ समाप्त होने पर हमने लिखने का काम शुरू किया। उस दिन के लिए श्रीमान् हैमल ने बिल्कुल नए शब्दों को तैयार किया था, उन्होंने बेहद सुन्दर अक्षरों में लिखा-फ्रांस, अलसास, ऐसा लग रहा था कि पूरे कक्ष में हमारे डेस्क के डंडे में वे शब्द के झंडे की तरह लहरा रहे हैं। हम पढ़ रहे थे और कक्षा-कक्ष में सन्नाटा पसरा था। तभी कुछ कोकचाफ कीड़े कक्षा में प्रवेश कर आए, पर उस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। यहाँतक की उन छोटे बच्चों ने भी ध्यान नहीं दिया, जो केवल लकीरे खींच रहे थे। वे इतनी तन्मयता और लगन से अपने काम में लगे थे कि जैसे लकीर भी फ्रेंच में खींच रहे हों। विद्यालय की छत पर बहुत हल्की आवाज में कबूतर गुटरगूँ कर रहे थे और उन्हें सुनकर मैंने खुद से पूछा, ''क्या इन्हें भी जर्मन में गाने के लिए मजबूर किया जाएगा?''

कभी-कभी, मैं अपनी कॉपी से नजर उठाता तो मुझे श्रीमान् हैमल अपनी कुर्सी में स्तब्ध-स्थिर नजर आते और उनकी नजरें आस-पास की चीजों को अपलक देखती दिखती; ऐसा प्रतीत होता मानो वे अपनी नजरों से स्कूल की हर चीज को कैद कर लेना चाहते हों। सोचिए। ...

पिछले चालीस साल से वे इसी जगह पर हैं, वहीं आहाता, वहीं कक्ष, सबकुछ उनकी आँखों के सामने बिलकुल उसी तरह से है। यह क्षण इस निस्सहाय आदमी के लिए कितना कष्टकर होगा, जो अपनी चीजें छोड़ कर जा रहा है।

फिर भी उनमें आखिरी क्षण में हमें पढ़ाने का साहस था। सुलेख की कक्षा के बाद, हमनें इतिहास का एक पाठ पढ़ा। उसके बाद छोटे बच्चों ने एक साथ कहकहरा का पाठ पढ़ा, बा, बे, बी, बो, ब्यू। उनकी आवाज भावुकता की वजह से लड़खड़ा रही थी। ओह! मुझे यह अंतिम कक्षा हमेशा याद रहेगी।

अचानक चर्च की घड़ी ने बारह बजाए और फिर आंजलेस की प्रार्थना का समय हो गया। ठीक उसी क्षण ड्रिल से वापस लौट रहे जर्मन सैनिकों के ट्रंपेट की आवाज खिड़की से आने लगी।..श्रीमान् हैमल अपनी कुर्सी से उठ खड़े हुए और उनका चेहरा एकदम पीला पड़ गया था। इतने बूढ़े आज तक वे मुझे पहले कभी नहीं लगे थे। उन्होंने कहा ''मेरे मित्रो, मेरे दोस्तो ! मैं . मैं '' पर उनका गला रूंध गया और वे कहते-कहते रूक गए। वे अपना वाक्य पूरा नहीं कर सके। फिर वे अचानक एक खड़िया लेकर ब्लैक बोर्ड की तरफ मुड़े और अपना साहस बटोर कर पूरी शक्ति के साथ, वे जितना बड़ा लिख सकते थे उतने बड़े अक्षरों में लिखा ''फ्रांस जिंदाबाद !''

फिर वे कुछ क्षण वहाँ ठहर कर रूके, अपना सिर दीवार पर टिकाए, बिना कुछ बोले उन्होंने अपने हाथ से इशारा किया ''बस आप लोग जाइए'' ।

साभार हिन्दी समय

# foKkue; Hkkjr&vrhr] orZeku vkj Hkfo";

## पुस्तक वीथि

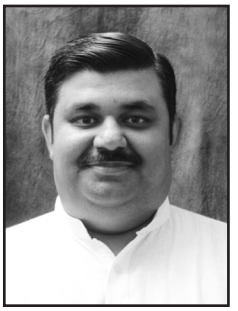

*श्री रवि कुमार*
संगठन मंत्री,
हिन्दू शिक्षा समिति हरियाणा
विज्ञान विषय पर अनेक लेखों
और पुस्तकों का प्रकाशन

समीक्षक
श्री कुलदीप मेंहदीरत्ता

*संपर्क*
मो. 9896982487

वेद विश्व को भारतीय संस्कृति की अनुपम देन है जिसने सारे विश्व को ज्ञान का आलोक दिया। महान सरस्वती नदी के तट पर ज्ञानी ऋषि-मुनियों की अनुपम साधना ने ज्ञान-विज्ञान के बल पर भारत को विश्वगुरु अथवा जगद्गुरु के पद पर प्रतिष्ठित किया। परन्तु काल के प्रवाह में पहले मुगल शासन और फिर अंग्रेजी काल में ज्ञान-विज्ञान की यह शृंखला बिखर गई। रही-सही कसर स्वतंत्रता के बाद पूरी हो गई, जब मैकाले वादी शिक्षा ने भारतीयों को हीनभावना से भर दिया। भारतीय यह विश्वास करने लगे कि विश्व में भारतीय ज्ञान-विज्ञान का पश्चिम के सामने अस्तित्व ही नहीं है। श्री रवि कुमार जी की पुस्तक ''विज्ञानमय भारत-अतीत, वर्तमान और भविष्य'' केवल भारत के पुराने गौरवशाली विज्ञान से ही हमारा परिचय ही नहीं करवाती बल्कि यह पुस्तक उस मैकालेवादी हीन मानसिकता से सीधी मुठभेड़ भी करती है। जिसके कारण भारतीय लम्बे समय तक मानसिक दासता की बेड़ियों में जकड़े रहे। यह पुस्तक न केवल भारत के अतीत में विज्ञान की रक्षा और दिशा की जानकारी नहीं देती अपितु वर्तमान 21 वीं सदी में भारत द्वारा विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति को प्रस्तुत करते हुए भविष्य के प्रति भारतीय विज्ञान की दृष्टि को भी परिलक्षित किया है।

लेखक ने भूमिका में पुस्तक के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए भारतीय विज्ञान परम्परा को अपेक्षित स्वीकार्यता मिलने के कारणों की विवेचना की है। लेखक ने भारतीय विज्ञान के पीछे निहित दर्शन को ऋषि-मुनियों द्वारा दिए गए कुछ भारतीय सूत्रों का उल्लेखित किया है। सार्वभौमिक उपस्थिति का अनुभव कराने वाले सूत्र ''सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया'' और ''आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः 'भारतीय ज्ञान विज्ञान की महानता का परिचय कराने के लिए पर्याप्त है।

पुस्तक के शीर्षक से स्पष्ट है कि पुस्तक 'भारतीय विज्ञान के अतीत, वर्तमान और भविष्य' भी हो सकता था लेकिन ''विज्ञानमय भारत अतीत, वर्तमान और भविष्य'' शीर्षक विज्ञान की भारत के शिक्षा तंत्र के साथ सामान्य जन व्याप्ति का परिचय देता है। जिन्हें हम सामान्यतः अंधविश्वास के दायरे में ले आते हैं जैसे-बिल्ली द्वारा रास्ता काट जाना। इन सबका हमारे समाज में प्रचलन है चाहे आज हम उसका वैज्ञानिक कारण भले ही न समझते हों।

पुस्तक को तीन भागों में विभक्त है। अतीत क्योंकि बीत चुका है और उसकी उपलब्धियाँ एक लम्बे कालखंड की हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से अतीत को पुस्तक में महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है। दूसरा अतीत में घट चुकी घटनाएँ या हो चुके ज्ञान सृजन का विश्लेषण-प्रशिक्षण आसान होता है। हम सब उसके सब पक्षों को पढ़-समझ सकते हैं। अतीत खंड को लेखक ने प्राचीन ज्ञान-विज्ञान नाम दिया है। इसमें दिए गए तीन उदाहरणों का उल्लेख भारतीय विज्ञान परम्परा का महत्त्व समझने के लिए आवश्यक है। विद्युत उत्पादन के बारे में 'डेनियल सेल' का वर्णन विश्व-विख्यात है। लेकिन महर्षि अगस्त्य द्वारा सैकड़ों वर्ष पूर्व दिया गया सूत्र भी विद्युत उत्पादन की समान प्रक्रिया के बारे में बताता है। इस पुस्तक में गुरुत्वाकर्षण का नियम, रसायन शास्त्र, वनस्पति शास्त्र आदि में भारत का योगदान परिलक्षित होता है। दूसरा विमान के निर्माण को राईट बंधुओं से जोड़ा जाता है परन्तु महर्षि भारद्वाज रचित ग्रंथ 'यंत्र सर्वस्व' का एक भाग विमान शास्त्र पर केंद्रित है। इसी प्रक्रम में नौका विज्ञान, खगोल विज्ञान, आयुर्वेद, बीजगणित, रेखागणित आदि का महत्त्व भी लेखक ने स्थापित करने का प्रयास किया है।

तीसरा उद्धरण वैदिक गणित पुरी के शंकराचार्य भारतीकृष्ण तीर्थ जी द्वारा दिया गया है। जिसके 16 मुख्य सूत्र तथा 13 उपसूत्र आज सम्पूर्ण विश्व में भारत की विद्वता का लोहा

मनवा रहे हैं। लेखक ने इसके लिए अतिरिक्त प्राचीन भारतीय स्थापत्य कला के अनुसार निर्मित मंदिर तथा भवनों की विशेषताओं को विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया है। प्राचीन भारत की तीन संस्थाओं तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशीला विश्वविद्यालयों ने सारे विश्व में विद्यार्थियों को ज्ञान प्राप्ति का अवसर दिया। लेखक ने भारत को विश्वगुरु बनने की प्रक्रिया में इन विश्वविद्यालयों की भूमिका बताई है। संस्कृत भाषा, श्रीमद्‌भागद्‌गीता और भारतीय साहित्य की विशेषताओं को अतीत खंड में उद्धृत किया है।

वर्तमान खंड ''गत 70 वर्षों की उपलब्धियाँ'' यह अपने आप में विषयवस्तु को स्पष्ट करता है। अन्तरिक्ष विज्ञान का ऐसा क्षेत्र है जिसमें भारत ने अमेरिका सहित विश्व की सभी विज्ञान शक्तियों को चुनौती दी है। लेखक ने यहां उपग्रह प्रक्षेपण, सेटेलाइट द्वारा दूरदर्शन प्रसारण एवं सूचना तकनीकी क्षेत्र में प्रगति को रेखांकित किया है। अणुशक्ति अध्याय में लेखक ने 1998 से पूर्व डॉ. होमी जहांगीर भाभा की भूमिका, भाभा अनुसंधान केन्द्र की स्थापना एवं अणुशक्ति विकास की भूमिका को स्पष्ट किया है। 1998 के पोखरण परीक्षण में अमेरिकी उपग्रहों की नज़र से बचने की कहानी का लेखक ने रोचक वर्णन किया है। प्रशिक्षण की तैयारियों के दौरान डॉ. काकोडकर के पिता का स्वर्गवास और एक दिन में उनका लौट आने का उल्लेख कर लेखक ने भारतीय वैज्ञानिकों के देशप्रेम और जीवन से पाठकों को परिचित कराता है।

सूचना प्रौद्योगिकी के बारे में बहुत से पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि माइक्रोसॉफ्ट का ''वान'' नामक पैकेज पुणे में विकसित हुआ है। लेखक ने आईटी के विकास को 1991 से पूर्व और 1991 के बाद दो हिस्सों में बाँटा है। अमेरिकन सिलिकॉन वैली भारतीयों के बिना असंभव थी। 1991 पूर्व के खंड में विप्रो व इनफोसिस की स्थापना का उल्लेख है। 1991 के पश्चात् इस खंड में अर्थव्यवस्था के उदारीकरण ने आई. टी. क्षेत्र के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्तमान में भारत 'सॉफ्टवेयर निर्माता' तथा आईटी हब के रूप में विश्वविख्यात है।

विज्ञान जैसे विषय में जहाँ कई बार एक्सीडेंट भी नए आविष्कार के कारण बनते हैं। वहाँ भविष्य की रूपरेखा निर्धारण का प्रयास हुआ है। तकनीकी तथा इंजीनियरिंग शिक्षा, गुणवत्ता सुधार परियोजना, टेकआइपी विश्व बैंक समर्थित परियोजना है। जिसमें लेखक भारत के लिए नई संभावनाओं को देखते हैं। जिसके माध्यम से विज्ञान द्वारा बढ़ने वाली शैक्षिक उत्कृष्टता से विज्ञान के नए सोपान प्राप्त होंगे। इसी तरह लेखक ने विदेशों में बढ़ती भारतीय उपस्थिति, प्रवासी भारतीयों की बढ़ती भूमिका, शिक्षा, स्वास्थ्य, तकनीक आदि की बढ़ती क्षमता का सुन्दर विश्लेषण किया है। पुस्तक के अंत में लेखक ने स्वामी विवेकानंद के माध्यम से उपसंहार में विज्ञान की भारतीय दृष्टि से विश्व कल्याण को व्याख्यायित करते हुए भारतीय युवाओं को भारत की विश्व में पुनः प्रतिष्ठा प्राप्ति आहवान किया है।

लेखक ने पूरी पुस्तक में समा सकने वाली व उपलब्ध हो सकने वाली अधिकतम सामग्री को समावेशित करने का प्रयास किया है। अनावश्यक विस्तार और व्याख्या की अपेक्षा उन्होंने अधिकतम आयामों को संक्षेप में प्रस्तुत किया है। अनावश्यक विस्तार न करने से पुस्तक अधिक उपयोगी है इस में ''गागर में सागर'' की अनुभूति हो रही है। भाषा के स्तर पर तत्सम निष्ठ हिन्दी इस पुस्तक के प्राकृतिक और सम्भावित पाठकों की दृष्टि में न्याय करती है। विषयवस्तु के संदर्भ में विस्तार कर एक बड़ी पुस्तक का निर्माण समय और ज्ञानेच्छुओं की अपेक्षा है।

## स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की भारतीय वैज्ञानिक उपलब्धियाँ

साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी का तीसरा सबसे बड़ा सुपर पॉवर भारत ही है। भारत ने खगोल विज्ञान से लेकर चिकित्सा विज्ञान और कम्प्यूटर के क्षेत्र में परम 1000 जैसे आधुनिक सुपर कम्प्यूटर बना लिए हैं। रक्षा के क्षेत्र में भारतीय मिसाइल और स्वदेशी हथियारों का भारत आज निर्यात करने की स्थिति में है।

वर्ष 2014 में पहले ही प्रयास में भारत का मंगल पर पहुँच जाना यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। मंगलयान को मंगल के कक्ष में पहले ही प्रयास में पहुँचने वाला पहला देश भारत ही है। इस कीर्तिमान का विश्व ने भारत की तकनीक का लोहा माना है।

भारत ने हाल ही के वर्षों में जीएसएलवी मार्क 2 और जीएसएलवी मार्क 3 एस्ट्रोनोट्स का सफलतापूर्वक परीक्षण किया है। इसमें उपयोग होने वाले क्रायोजेनिक इंजन भी भारत स्वयं बनाता है। इस तरह अपना देश अब उपग्रह बनाने और और उन्हें प्रक्षेपित करने में आत्मनिर्भर हो चुका है।

इन वर्षों की मुख्य वैज्ञानिक उपलब्धियों में व्हीट जीनोम सीक्वेंस समेत अन्य अनाजों की संकरण और उन्नत किस्मों को तैयार करने में भारत ने सफलता अर्जित की है। इससे न केवल भारत खाद्यान के मामले में आत्मनिर्भर है बल्कि निर्यातक भी बना है।

एक साथ सैकड़ों उपग्रहों का सफल प्रक्षेपण, चन्द्रयान 2 की सफलता, कोविड वैक्सीन और सुरक्षा के मामले में और आइएनएस विक्रांत और अरिहंत जैसे परमाणु हथियार बनाने में भी भारत ने सफलता पाई है। डीआरडीओ और इसरो ने हॉल ही वर्षों में कई महत्त्वपूर्ण खोजों और तकनीकों को बनाने में सफलता अर्जित की है।

# ,d lokn f[kyr Qyk ls

## पुस्तक वीथि

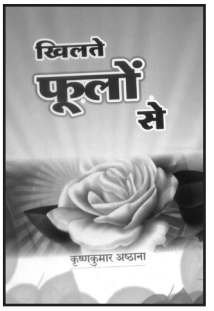

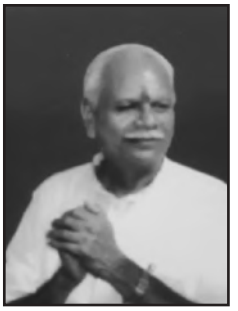






***श्री कृष्णकुमार अष्ठाना***

सुप्रसिद्ध वरिष्ठ पत्रकार, देवपुत्र के यशस्वी प्रधान सम्पादक, अनेक ग्रंथों के प्रणेता, आकाशवाणी पर अनेक वार्ताओं का प्रसारण, अनेक शैक्षणिक, सामाजिक सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्बद्ध अनेक सम्मानों से सम्मानित

समीक्षक

***डॉ. ऋतु***

मो. 7982126763

***संपर्क***

मो. 9425062115

श्री कृष्ण कुमार अष्ठाना जी के 'खिलते फूलों से' ग्रंथ में सुप्रसिद्ध बाल पत्रिका 'देवपुत्र' के उनके संपादकीयों का संकलन है। खिलते फूलों से उन्होंने इन संपादकीयों के माध्यम से संवाद किया है। इसमें इन्होंने छोटे-छोटे बालकों के योग्य आवश्यक अनेक बातों का उल्लेख प्रसंगवश नहीं, 'देवपुत्र बनो' की उनकी भूमिका तैयार के उद्देश्य से किया है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि किसी भी पीढ़ी की सफलता, असफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह देश, समाज के प्रति संवेदनशील, समर्थ पीढ़ी का निर्माण कर सकती है या नहीं। श्री अष्ठाना जी के पास वैसी दृष्टि है, इसके लिए उन्होंने अनथक प्रयास किंवा साधना जीवनभर की है।

उक्त पुस्तक में राष्ट्रचिंतन, प्रेरणा और संस्कार, महापुरुषों का जीवन, पर्व और उत्सव एवं विविध ये पाँच विभाग किए हैं। ये पाँचों ही विषय बाल-मन को श्रेष्ठ नागरिक बनने में अनिवार्यतः सहायक सिद्ध होते हैं। इनमें श्री अष्ठाना जी का चिंतक रूप, प्रांजल भाषा और सुष्ठु शैली में विषय का प्रतिपादन कर सकने की क्षमता का निदर्शन होता है। भारतीयता, संस्कार एव संस्कृति से ये संपादकीय आप्लावित है। राष्ट्र की प्रखर चेतना विविध रूपों में इनमें मुखरित हुईं हैं। इन सम्पादकीयों को लिखते समय अष्ठाना जी की एक विशेष दृष्टि है। प्रत्येक मास में पड़ने वाली जयंतियों, तिथियों और महत्त्वपूर्ण घटनाओं का सृजनात्मक उपयोग कर उसे और अधिक प्रभावशाली एवं प्रतीकात्मक बना दिया है।

इस ग्रंथ का मर्मवाक्य 'छूटे नहीं संवेदना, टूटे नहीं देश' ..... पहले ही लेख का शीर्षक है। मानवीय संवेदना सनातन है और उससे उद्भूत विचार सर्वे भवन्तु सुखिनः का उद्घोष चिर पुरातन और नित्य नवीन भी है। 'पीड़ित, सिसकती और कराहती मानवता पर हमें मरहम लगाना है' जैसे वाक्य की एकात्मता मनुष्य मात्र की एकात्मता का उद्घोष है। इतिहास को झरोखे से न केवल देखने वरन इतिहास रचने की प्रेरण ाा भी देती है। विभाजन की त्रासदी, स्वतंत्रता के मूल्य हमें समझा सके, इसके लिए अनेक कष्टों को सहने वाले क्रान्तिद्रष्टाओं, क्रान्तिकारियों का जीवन हमारे दृष्टिपथ पर निरंतर बना रहे 'राष्ट्र के सम्मान से बड़ी कोई वस्तु नहीं होती, कोई सुख, वैभव, धन और यश नहीं होता' इसका हम सतत ध्यान करें। भारत माता के लिए अनेकानेक कष्ट सहते हुए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देने वाले हुतात्माओं के नाम इन अग्रलेखों के माध्यम से नई पीढ़ी के स्मृतिपटल पर लिख देते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पचास वर्षों में पिछड़ते चले जाने का दंश उन्हें है तो सम्पूर्ण देश की एकात्मता और विजिगीषु वृत्ति उन्हें आनन्द से भर देती है। उत्कट देशभक्ति के वे पक्षधर हैं। 'पहरुये ! जागते रहो' उनका संदेश है। 'तेरा वैभव अमर रहे माँ' मंत्र का जाप उन्हें प्रिय है। राष्ट्रीय स्वाभिमान के वे पुरोधा हैं।

संकल्प के बिना सामर्थ्य अपने पौरुष को अभिव्यक्त कर नहीं पाता। राम सामर्थ्यवान् हैं लेकिन 'निसिचरहीन करौं महि भुज उठाय प्रण कीन्ह' घोषणा करके प्रण का धारण करने वाला सामर्थ्यशाली राम असुरनिकंदन हो जाता है। 'स्वयमेव मृगेन्द्रता' के सूत्र को जीवन में धारण कर राष्ट्राभिमान के सतत जागरण के महत् कार्य को जीवन व्यवहार यदि आज का बालक बनाता है तो उसके लिए संसार का कोई कार्य असम्भव नहीं। लक्ष्य सामने हो तो व्यक्ति अपने आप क्रियाशील हो उठता है।

अनेक अन्य विषय जो बालक में संकल्प का निर्माण करने वाले हैं, उन पर ही अष्ठाना जी ने अपनी लेखनी चलाई है। स्वप्न देखना और उसे पूरा करने के लिए तत्पर हो उठना। भाषा संस्कृति की वाहिका है। भारतीय संस्कृति का रक्षण अतएव संस्कृत के ज्ञान से ही संभव है। भारतीय संस्कृति के विभिन्न तत्त्वों और

विविध पक्षों की सरल, संक्षिप्त और सुष्ठु व्याख्या कर सकना, उन पर सार्थक टिप्पणी कर सकना संभवतः अष्ठाना जी जैसे संवेदनशीलता के साथ लंबी साधना कर सकने वाले व्यक्ति के लिए ही संभव है।

आसेतु हिमाचल, हिमालय से इंदु सरोवर तक व्याप्त यह भारतभूमि, भारतमाता वीर प्रसविनी है। उन वीर मनीषी पूर्वजों की स्मृति, उनके उदाहरणीय प्रेरक उत्तम चरित-कथाओं को बड़े ही मनोयोग से अष्ठाना जी ने कहा है, लिखा है।

भारतीय संस्कृति भी मानती है कि वह एक सबमें अपने आप को व्यक्त कर रहा है। यह भी कहा गया कि वह एक है, विद्वज्जन अनेक प्रकार से उसे कहते हैं, वर्णन करते हैं। एक संस्कृति कालभेद और स्थानभेद से विविध नाम और विविध रूप धर प्रकृति के साथ तालमेल करती अपने को व्यक्त करती है। भारत भर में मनाए जाने वाले इन पर्वों और त्योहारों को भी यथासमय, यथावसर अपने संपादकीयों की शृंखला में आपने गूँथा है।

बहुवर्णी भारत के संस्कारों लोक परंपराओं और मान्यताओं के पीछे के अर्थ, संदर्भ एवं मंतव्य को बहुत ही सुन्दर सहज और तार्किक ढंग से बालमन को समझाने का प्रयास किया है और उसमें अत्यंत सफल भी हुए हैं।

सारतः कहें तो मानवपुत्र को देवपुत्र बनने के लिए जिस मार्ग का अनुसरण करना चाहिए उस सरणि का, उस मार्ग का संकेत 'खिलते फूलों से' में मिलता है। यह पद्धति है जिसे अपनाकर, जिसपर चलकर, भारत के भविष्य का निर्माण यहाँ की संतति को करना है। इसका अनुसंधान हमारे यशस्वी पूर्वजों ने किया, इस पर चल सकने के लिए जिस सद्गुण समूह की आवश्यकता है, जिस प्रेरणा की आवश्यकता है, उसका आख्यान 'खिलते फूलों से' है।

## कौन सो काज कठिन जग मांही

हम अपने देवी - देवताओं को प्रायः अजन्मा मानते हैं और चिर-जीवी भी। किन्तु जब कोई प्रसंग या कोई उल्लेख हमें अपने श्रेष्ठ और प्राचीन ग्रंथों में उनके जन्म या माता-पिता के सम्बन्ध में मिल जाता है, तो उनके सहज अवतरित होने की बात भी माननी पड़ती है। और जब ऐसे प्रसंग आ जाएँ तो जो परस्पर विरोधी हों तब तो हमारी अकल चकराने ही लगती है। जैसे सामान्यतः हमें मालूम है कि गणेश जी भगवान शंकर और माता पार्वती के पुत्र थे। परन्तु अपने ही धर्मग्रंथों में हमें यह भी पता लगता है कि शंकर और पार्वती जी के विवाह पर भी गणेश पूजन हुआ था। अर्थात् उनका अस्तित्व उस समय भी था और वे गणिपति के रूप में प्रथम वंदनीय थे। जो भी हो किन्तु उनके सर्वकालिक होने में हम सबकी आस्था है।

महाबली हनुमान का उल्लेख हम अंजनि पुत्र और पवन सुत के रूप में पाते हैं या उनके बाल समय रवि भक्ष्य लियो का वर्णन जब हम पढ़ते हैं तब निश्चय ही हमें उनके शरीर धारण करने का विश्वास हो जाता है। किन्तु कैसा विलक्षण है यह शरीरधारी व्यक्तित्व । बाल्यकाल में यदि वह सूर्य को खिलौना मानकर मुँह में रख लेता है तो तरुणाई में समुद्र लाँघ जाता है। पर्वत उठा लाता है और वृद्धावस्था में वह अपनी पूंछ फैलाकर भीम के बल की परीक्षा करता है। आकाश में उड़ने की उसकी सामर्थ्य है तो समुद्र की थाह लेने में भी वह समर्थ है। शरीर का आकार अपनी इच्छानुसार कर लेने में उसे सिद्धता प्राप्त है। सुरसा का प्रसंग इस बात का साक्षी है।

किन्तु क्या आपने कभी यह सोचा है कि सामान्य शरीरधारी होने के बाद भी यह सब कैसे कर पाए ? गम्भीरता से देखेंगे तो ध्यान में तीन बातें आएँगीं -

उनके जीवन में संयम है। अनुशासन है और संकल्प भी है। यदि वे राम और लक्ष्मण को कंधे पर बैठाकर पर्वत पर चढ़ सकते थे। वैद्य सुषेण को लंका से घर समेत उठा कर ला सकते थे। पर्वत को उखाड़ सकते थे। माता सीता को लंका से लाकर राम को सौंप देने का कार्य भी उनके लिए न तो कठिन था और न नही असंभव । किन्तु संयम और अनुशासन का पूर्णतः निर्वाह करते हुए 'राम काज कीन्हें बिना मोहि कहाँ विश्राम' का संकल्प भी उन्होंने पूरा किया । श्रेष्ठजनों का अनुसरण हमारे जीवन को श्रेष्ठता देता है। यह हम जानते ही हैं। इसी भाव से हम स्मरण करें 'केसरी नन्दन' का 'पवन तनय' का और रामदुलारे का ।

***श्री कृष्ण कुमार अस्थाना जी के सम्पादकीयों के लेख रूप में पुस्तक 'खिलते फूलों' से प्रेरक प्रसंग***

# SAMSKRUTI FOUNDATION

## *DAKSHIN - PATH*

***Dr. UMAMAHESWARA RAO CHAMARTHY,***
***IAS (Retd.),***
Executive Director Central affairs, Special Secretary to Chief Minister, Govt. AP
Vice Chairman
Centre (CDS-APARD)
Member Telangana pay Revision Commission
President,
Dakshin madhya zone
Vidya Bharti

**Contact**
Mob. 9848012428

Sri Lalit Behari Goswami advised me to write articles about the cultural aspects of South India and other related topics of interest for 'Pradeepika'. I am neither a historian nor a philosopher. I am a 'Karyakartha' like lakhs who together become 'Vidyabharathi Kutumb'. The readers and other writers who contribute to this magazine may kindly pardon my inadequacy and incomplete knowledge when I write on the subject of culture. I am grateful to Sri Lalitji for giving me this honour. Having said that, I would like to introduce our readers to "Samskruti Foundation" (SF), a trust registered at Hyderabad to create awareness about our culture and other related aspects. Samskruti Foundation has a motto:

**"Our culture, our identity".**

2.0 The foundation has been conducting programmes linked to culture for more than ten years. In two major events organised by SF eminent personalities have provided a new direction and focus for its activities. The first event was held on 31st May, 2015 on "Cultural Nationalism" which was attended by more than 1000 senior persons both working and retired and representing legal, medical, administration, finance, military, academic, industrial and social service. Those who participated were both from government and private sector. The second event was held in 2018 with the title "Re-emergence of India that is Bharat: Role of Fifth Estate".

This event was also attended by senior persons exceeding 1200 from different walks of life narrated above. The fifth estate referred to is culture, the other four estates being legislature, judiciary, executive and media.

The "margadarshan" by the eminent speakers provided a framework to prepare a road map for Samskruti Foundation as it stands today.

3.0 Samskruti Foundation – Organisation:

For operational purpose, the Sanskruthi Foundation has:

(a) An Advisory Board;

(b) A Governing Council;

(c) An Executive Committee.

Distinguished persons from different walks of life are members of the these bodies who include Padma Awardees, working and retired civil servants. SF has the following operational divisions:

1. Samskruti Adhyana Kendra (SAK);
2. Nation Building;
3. Sanskruti Samrad;
4. Tejaswini.

The divisions at 2, 3 and 4 have culture as a focus for activities at different levels which provide visibility to culture based activities and promoting practice of cultural values. Further these activities promote, preserve and facilitate practice of culture in day to day life. For want of space, I will elaborate item one, i.e. Samskruti Adhyana Kendra which would be of interest to the readers of 'Pradeepika". SAK focuses on research oriented activity.

4.0 Prof. Lallanji Gopal of Benaras Hindu University says

"Culture has a nebulous existence. It is not easy to define and describe it. Culture is to be understood in juxtaposition with civilization. The usages of the two terms have been so many and so varied that it is difficult to present a comprehensive meaning which may pass for common acceptance. When the two have a common ground, they have the relationship of the inner and outer, the soul and the body. Civilization is the manifestation, the articulation of culture. Culture is the flame of the lamp, the fragrance of the flower. Civilization is that which we possess, culture is that which permeates us. Culture infuses civilization, and guides and shapes it. Culture is to be identified in terms of ideas, values and systems.

The ethical values are an essential and integral part of culture. They are of fundamental importance. They have a commonness, which cuts across the boundaries of time and space. The different communities, societies and religions have no ground for quarrel over ethical norms. Culture has a uniqueness, a distinctive character. The genius of any society, as determined by a complexity of factors, finds expression in its culture and cultural values."

5.0 The above understanding prompted the SF to organise the second seminar on "Re-emergence of India that is Bharat: Role of Fifth Estate". The meet was held at Marriot Hotel, Hyderabad on June 9th, 1918. The salient points that emerged from the event were:

(a) To study and re-establish social and scientific spirit of our centuries old customs and traditions of ancient times which continues to guide our evolving civilisation;

(b) To understand and enumerate time tested practices adopted by our age old civilisation in areas such as Environment, Agriculture, Local Governance, Public Administration, Economics, Management, etc.;

(c) To review and research good practices adopted by ancient dynasties in successfully running their vast kingdoms based on Dharmic principles laid out in many a scripture by our sages;

(d) To enrich the existing policy frameworks for good governance in different areas with infusion of cultural values in alignment with changing times;

(e) To establish a centre which can provide a platform for domain experts to discuss, deliberate and prepare policy documents in their respective areas in order to enrich the present day governance at various levels that can bridge the gap between rulers and the ruled.

6.0 The mission of the Samskruti Foundation is to engage all sections of the society in aid of the body politic, to reframe, reformulate and reorient where necessary, the governance and administrative systems in all aspects of the society's life so as to reduce, if not remove completely, the mismatch between the people's expectations and the current delivery standards, based on the cultural and civilizational ethos of this great land of ours.

7.0 The Samskruti Foundation has made an incipient effort to identify strands of our national culture and history that can potentially influence public policy frameworks in the country with reference to the following areas of Panchayat Raj, Education, Corporate Affairs and Agriculture. These are illustrative of the thinking and approach....

7.1 Panchayat Raj

- The history of Panchayat Raj starts from the self-sufficient and self-governing village communities from the time of the Rig-Veda (1700 BC).
- Evidence suggests that self-governing village bodies called "Sabhas' existed then and with the passage of time, these bodies became Panchayats (council of five persons).
- Panchayats were functional institutions of grassroots governance in almost every village of ancient India enduring the rise and fall of mighty empires.
- The functioning of the Panchayats was premised on the principles of 'Dharma' – righteous conduct' rather than parties, power and pelf.
- Understanding how the Sabha, Samiti, Vidhata and Gana functioned in the early Vedic period may provide deeper insights in to modern structure of our Panchayat Raj system.

7.2 Education

- Ancient India gave birth to a system of creating and transferring knowledge and skills from one generation to another based on the Guru-Shisya Parampara.
- The purpose of education is to spread happiness as comprehensively articulated in shikshavalli in Taittiriyopanishad. Happiness demands that the youth in the society should be of good character, learned, resolute and

strong (morally and physically).

- Studying the method of research adopted in Charuvaka, Nyaya and Vaiseshika may help deepen our search for options to foster excellence in higher education.
- Our ancient 'Samskaras' mapped out the academic environment in terms of how the students would come and greet the teacher; how they would sit; how should they respond if they understand or how, when they need further elaboration from the teacher.

7.3 Corporate Affairs

- What is being touted today as corporate social responsibility has ancient origins. The Vishnu Sahasranaama that appears in the Mahabharata and Srimad Bhagavatam both deal with the concept of (business) and responsibility towards society.
- There are copious references in the Mahabharata to Rajadharma - many sound principles of corporate governance and administration are enunciated in them.
- The Manusmriti comprises numerous eternal points in law and justice. It is a code comprising innumerable principles to govern conduct of trade and commerce. Similarly, the Thirukural contains several principles of governance and socially responsible business.
- Kautilya's Arthashastra is of course a primer on all economic, fiscal and business related matters and is ever relevant.
- Various Upanishads (Taittiriya and Brihadaranyaka in particular) prescribe rules of right conduct – same may be relevant for business activities.

7.4 Agriculture

- There are references in our ancient scriptures to farmers as 'Anna Daata', seasons, seed preservation and soil preparation that are suitable for various crops and animal husbandry.
- Mention of organic and natural manures, panchagavya, pesticides and biological pest control measures are a part of our farming heritage with Integrated Farming System (IFS) models involving livestock, agriculture horticulture, etc. in rain fed and irrigated areas.
- Systems of canal, tank and well irrigation with 'aahar' and 'pine' models of water management have supported crop and livestock production for centuries which may continue to guide our micro and medium irrigation systems without large scale displacement of communities.
- Today's talk of value chain based agriculture has been integral to our culture of making economic use of every part of the plant. Hand based processing and preservation of vegetables and fruits in to pickles, papads and food supplements lay at the roots of our food and nutrition security in ancient times.
- Ceremonies and ritualistic practices to please elements and forces of nature reflected a deep sense of worshipful reverence among communities for environment, water and forests.

In Book entiled 'Sanskriti, Bhasha aur Rastra' Ramdhari Singh Dinkar has contemplated on the mutual relation between language, culture and nation. In this book he said the culture races become extinct when they begin to follow other cultures, ignoring their own. He further said that when a human race adopts alien language abanding its own, it inplies shameful cultural slavery. Its natuaral consequence is that the concern race loses its distinct personality and its self respect gradually dies out. In due course, his feeling of patriotism also starts waning.

Thus it can be safely asserted that Dinkar ji was not only a Rastrakavi but also a herald of Bharatiya Culture by virtue of his musing on Bharatiya Culture. To conclude the opinion of Dr. Harivansh Rai Bachan is worth consideration Dinkar ji

led a rigorous life. His pursuit of literature was unparalleded. Some time back , a gentle man of kolkata wrote to me as how appropriate it was to confer gyanpeeth award on him? In my reply I wrote he would have been duly honoured if he were awarded four gyanpith separately for prose, poetry, lecture and promotion of Hindi Laguaage.

# HYBRID LEARNING – SCHOOLS REOPENING DURING POST PANDEMIC PERIOD

## CONTEMP0RARY

***Shri D. Ramakrishna Rao***
President, Vidya Bharati
Akhil Bhartiya Sikhsha Sansthan
Education Administrator,
Thinker & Writer
Rtd. Principal & Director
Vijana Vihara Residential School
Gudilova A.P.

**Contact**
Mob. 8008015950

The global health pandemic has brought many challenges and vulnerabilities to the fore. Out of all the chief and major one is education in which more than 1.5 billion students got affected due to sudden school closures. But in India during the pandemic, human resourcefulness and adaptability with a huge potential was quite seen even in remote, sensitive and far-flung areas. Everybody realized that decisions made today will have long term consequences on future education even after this crucial post pandemic world. Academia, policy makers, the teachers - the front line educators, administrators, parents and alumni had started making high stake choices for the betterment of the society with a humanistic vision.

**Teachers Technology Upgradation:**

Right from the beginning of this century, all our teachers are being advised to be developing scientific temper with all 21st century skills without ignoring technology. But this process was delayed and our Indian teachers did not take it very serious and remained as tech-lovers but not tech-savvy. Suddenly this pandemic has forced them to search for open ended solutions to undertake effective quality online classes for reaching urban and semi urban students in a big way. The whole adaptation took only one and half months to our surprise among our Vidya Bharathi teachers. Teachers collaborated well to hold meetings for evolving off line techniques for reaching students. Accordingly hybrid learning and blended teaching methods were planned with an effective follow up.

**Vidya Bharathi's engagement with students across:**

Vidya Bharati with its 13K big formal schools and 12K informal institutions, could reach all the stake holders during the Pandemic. Teachers and management network took benefits of technological boom and online reach was possible. Offline methods to engage in learning experiences by students with digital content was handed over in person with the help of stake holders. This network was built by Vidya Bharathi with the help of 1.5L teachers, 4.5L Alumni, 1.5L Management members and around 5L mothers in entire India. I shall list out some of the methods followed.

a) Reaching students with recorded lessons and forming a group to engage in learning which was well received in tribal areas with enthusiasm.

b) Organizing weekly tuition centres in rural areas with a follow up action. This was very popular in Andhra Pradesh.

c) Encouraging Mohalla Vidyalas in all the colonies, where our teachers reached and held regular classes both off-line and on-line. This is a popular mode in U.P, Uttarakhand, Rajasthan, M.P, Chhattisgarh and Bihar.

d) Training mothers in the school and on line to conduct primary classes in their localities. This was well received in Orissa.

e) Home-a-school – Ghar hi Vidyalay was a necessity with a little on line training during lock-down period and direct contact classes with necessary inputs after unlocking was declared. Home schooling went on well in Karnataka, Gujarat, Orissa, Assam, M.P, etc.

f) Red letter days, National heroes Birthday celebrations and environment protection related activities were conducted as usual during Covid-Pandemic.

g) Online training for all the concerned including teachers was conducted to upgrade, upskill and empower them.

Through all these activities our live contact was maintained which was the need of the hour and this hand holding process was well received and appreciated.

**New added social responsibility:**

Now that in NEP-20, the concept of school complexes was again discussed with more a socio-centric approach. Moreover UNESCO appointed International commission report on futures of education in a post-Covid world & nine ideas for public action was released in which social orientation was the thrust by promoting students and youth participation in the co-construction of desirable change in the society. These are all in support of 2030 agenda for sustainable development. All these ideas invite debate, engagement and action by educational professionals and other stakeholders, where in hybrid learning becomes crucial. Apart from this, learning has become any time, any place activity with multi disciplinary approach and multi dimensional demands by students.

**Hydbrid Learning – A Necessary Initiative :**

All the above added social responsibilities force us to go for Hybrid learning where traditional class room experiences, experiential learning, competency based learning and digital course delivery to need-specific learners is stressed upon.

**Teachers Upskilling:**

This requires a training and tips for teachers who prepare themselves and get ready with a learning management system and backup plan. We should never forget that teachers are front line warriors in bringing any change in processes and practices at the ground level. Without changing the mindset, approach and necessary motivation no transformation in the education system is possible. Let our teachers be empowered and updated to become more futuristic.

## Humble Homage

**Sri. T. Chakaravarthy**
President – Vidya Bharati – Dakshin Kshethra
Vice-President – Vivekananda Educational Society
Secretary – Vivekananda Vidya Kala Ashram Trust.

Sri. T. Chakaravarthy born on 17th January 1946, hails from a small village in the delta district of Tamil Nadu.

After graduation he joined a popular rubber manufacturing company Dunlop and his tireless work and skill made him raise to the highest position.

He was inspired by RSS in his early youth which made him immerse in the ideology and practices due to which he dedicated himself for social work which was the motivation for others to get inspired to take up the service activities in the field of Education.

His initiative, passion in the field of Education manifested in his holding offices in Vivekananda Educational Society, as a correspondent, Joint Secretary, Secretary and Vice-President. He not only managed school but also developed the Infrastructure and the Man power.

He associated himself with the All India Oraganisation, Vidya Bharathi in the field of Education and served the organisation as a Secretary in Tamil Nadu and later as its President of southern zone consisting of Tamil Nadu and Kerala. During the time he strengthened the Academic Council by including the Heads of the like minded organiations in Tamilnadu.

He was inspired by the works of Saint Ramanujachariyar, Swami Vivekananda and Maharishi Aurobindo. He played an active role in celebrating the 150th Birth Anniversary of Swami Vivekananda in Tamil Nadu and initiated Rath Yathra with the portrait of Swamiji. This practice is continuing for several years now, inculcating nationalism, spirituality and social service among students.

Sri.T.Chakaravarthy was also nominated to organize the celebrations of 1000th Birth anniversary of Sri.Ramanujachariyar in Tamil Nadu and he invited and involved several personalities and organisations who were inspired by the intellectual acumen of Sri. Ramanujachariyar. His contribution in the (HSSF) Hindu spiritual and service fair is exemplary. He is also an active office bearer of (IMCTF) Initiative for Moral and Cultural Training Foundation. He was instrumental in the great task of bringing all great religious leaders in one platform.

Sri.T.Chakarvarthy loved fellowmen and developed cordial and sustaining relationship .A down to the earth person who made an impact on all who came across and changed their attitude to look upon life differently.

***"He could talk with crowds make them virtuous walk with kings and keep the common touch"***

# WHY SKILLS

## KAUSHAL

***Dr Madhu ved***
Educationist
Ex. Principal
Senior Secondary School

Delhi skill and entrepreneurship university will host the first ever state level skill competition in Delhi .It will identify and prepare candidates for global skill oriented competitions. Only a few of us realise that success at college requires a level of skill we have not yet acquired through school studies.

Just ponder upon the word Skill, NOT BRAINS OR INTELLIGENCE. Efforts alone are not enough. It is all about working smarter than working harder.Enrolled in a best college certainly speaks of your basic intelligence but you lack the set of skills necessary to put that intelligence to study at college n later on in life skills.

At schools HOW TO STUDY bit is invariably ignored.And just like swimming or bicycling kind of skills don't come naturally(some may learn through trial and error though).

Good study skills and habits are not just relevant to schools and colleges,they are transferable to our jobs and most other aspects of our lives.Quick learnability is what most employers look for when hiring new employees in today'sever changing world.

The ability to self learn ,think and effectively apply that learning to new tasks and situations is a valuable transferable which you will acquire gradually as you study practical subjects.Economics is a fascinating subject but you will discover its beauty when you join job and start thinking in terms of financial literacy.You may not end up as an economist but definitely no body can befool you.

Develop a keen and extensive reading habit.Reading is to mind what exercises are to body.Apart from being a pleasure ,it broadens our vision,enhances our imagination,and makes us judicious in our thinking.In Fact, education is most PORTABLE asset you will acquire.You don't have to spend a single penny extra. While pursuing a degree from university via distance learning or via non- collegiate college,you can join some vocational training like fashion designing,beauty care ,hair styling etc ,that will offer the chance for creative hand on work,as well as financial stability and flexibility in a profession.

When we talk about skills in youth let's take one example of COSMETOLOGY INDUSTRY.It has expanded tremendously over the past decades.There are countless hair,skin and nail related services that a professional can provide including styling and make up for different occasions. Moreover there are boundless opportunities for those who have business mindset.No

Skill is good or bad ,only your passion works.Nails salons, hair spas,eyebrows spas can be found even in small or big towns,India or abroad.Tailoring can be a fruitful skill too for those who love designing and trained in fashion designing,interior designing,gardening,cooking,baby sitting .

While web designing and other computer related skills are in MUST category to be acquired for providing financial help to family just after completing school n getting trained simultaneously in the skills your heart wants to pursue.

Some of the modern time skills are -3d digital game art,auto body repair,automobile technology ,bakery,car painting.carpentry. cloud computing,CNG milling,CNCturning. cyber security,electrical installation,fashion technology,health and social care,hotel

**Contact**
Mob. 9899211336

reception, IT network systems, IT soft ware solutions, Mobile robotics, painting and decorating, confectionary, plumbing and heating, refrigeration and air conditioning, restaurant services, visual merchandising, wall and floor tiling, web technologies, welding and mobile application development,(for details search skill university site .

To develop skills among youth many initiatives are planned at school and college level.Governing council of SCERT delhi has made the framework of "deshbhakti curriculum "in school education.Activity based curriculum will bridge the gap between values and actions and ensure that constitutional ideals of equality ,fraternity and justice are practiced by children in their everyday lives.

Discussions and reflections on real life situations and examples with which students can easily relate.

Method of instruction will be activities.

Teachers handbooks will be given but no extra burden of text books will be on students.

Curriculum will be in line with NEP {2020}

Students will be developed mentally,socially,intellectually by observing ,assessing,,developing values .

It will be mainly based on inspiring ideas and stories which can instill the value of patriotism among students.

Skits and street plays would be a part of the set of activities in the curriculum

Students will be more inclined towards our ancient wisdom rather than towards EUROPEAN designs of living.The feeling of deshbhakti need to be inculcated through activities rather than preaching only.

A list of some most important employability skills

Positive attitude

Self management

Thinking ,decision making,integrity,life long learning,

Meaningful Communication ,

Hard skills like technical skills,microsoft office skills,analytical and project management skills

Infact no end of list of skills…..

A WINNER IS SOMEONE WHO RECOGNISES HIS GOD GIVEN TALENT,KNOWS HOW TO WORK ON THEM AND USE THEM TO ACCOMPLISH HIS GOALS.

## 21st Century Skills

While the specific skills deemed to be "21st century skills" may be defined, categorized, and determined differently from person to person, place to place, or school to school, the term does reflect a general—if somewhat loose and shifting—consensus. The following list provides a brief illustrative overview of the knowledge, skills, work habits, and character traits commonly associated with 21st century skills:

- Critical thinking, problem solving, reasoning, analysis, interpretation, synthesizing information
- Research skills and practices, interrogative questioning
- Creativity, artistry, curiosity, imagination, innovation, personal expression
- Perseverance, self-direction, planning, self-discipline, adaptability, initiative
- Oral and written communication, public speaking and presenting, listening
- Leadership, teamwork, collaboration, cooperation, facility in using virtual workspaces
- Information and communication technology (ICT) literacy, media and internet literacy, data interpretation and analysis, computer programming
- Civic, ethical, and social-justice literacy
- Economic and financial literacy, entrepreneurialism
- Global awareness, multicultural literacy, humanitarianism
- Scientific literacy and reasoning, the scientific method

# There stands a Towering Tower !

## *POETRY*

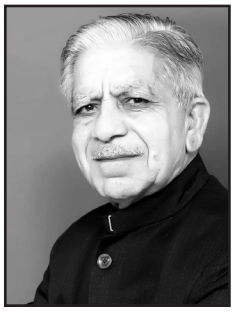



***Shri Ratanchand Sardana***
Retired Principal ,
Sanrakshak
Gramin Shiksha Vikas Samiti
Haryana
Written many books,
Articles etc.

**Contact**
Mob. 9416654970

It is not a tomb,
Nor a temple,
Neither a mosque nor a church,
Yet, who-so-ever is here
Bows his head in reverence,
To the power,
There stands a towering tower!

Then what is the power,
This is the power of sacrifice,
Pure as sancity
Running through the venis
Of the martyyrs
Like the current of electricity
Of the oceanic power
There stands a towering towers?

They were sixty six,
No ambiguity in counting,
They come chanting
The name of Almighty,
With wide open chest,
To face the guns fiercest.
They were all happy
They stood in a line
Smallest to the tallest
Wishing to be shot first.
And lo !
The guns did not go
It happened thrice so.
The brave did not budge,
Or move or go .

They were heroes!
They insisted on being sacrificed
They dare-devils of all times.
They had committed no crime
What they did.
It was with reason and rhyme.
They challenged the imperealistic
power .
It is a crime ?
If so, they would not bow
Life in years was not so dear,
Ideal of life to them was clear.
They did not die,
They inspire every minute and hour,
There stands a towering tower.

In the mornings
They are blessed by the sun,
In the late evenings ,
The moon bestows his
Nectareal rays over them.
At –Nights they shine as stars
They are their martyrs
Nature is their attire.
There stands a towering tower.

When we bow there
Our head is held high
Those sons of the land
Had created a history
There are the immortal pages
Of the history of Sacrifice.
From such martyrs
History gets power .
There stands a towering tower!

# HOW TO DEFEAT DRAGON

## OPINION

***Shri Rajendra Kumar Shastri***
Additional Session's Judge (Retd.)
Ex. CBI Judge
Thinker, Writer

On Oct 15, 2021, Newspapers in India reported China and Bhutan having signed an MoU called 'Three step Roadmap' for expediting boundary negotiations. Like most of neighbouring countries, China has boundary dispute with Bhutan also. Both of countries have held 24 rounds of border talks, since 1984.

Area called as 'Doklam' is part of Bhutan. It is very close to our Siliguri Corridor, famously known as 'chicken neck'. It is strategically very important for both, India as well as China. When China built road in Doklam region near Indian border, it threatened our security. India opposed construction of road, very close to our border, all this resulted in "long military stands of" with China. In 2012, India and China, had entered into a bilateral agreement. It provided that any dispute about tri-junction boundary points, with India and China involving any third country will be finalised in consultation with each other and that 3rd country.

China is very desperate in getting control of Doklam. In 1996, it offered to swap Bhutan's North- Central area with Doklam. Similar offer was reiterated in 2017, after military stand of with India. When Bhutan did not accede to China's demand, it laid its claim over Bhutan's Sakteng wildlife sanctuary, which borders our state Arunachal Pradesh.

China has adopted a tactic to claim territory of neighbouring country, where there is no official demarcation. It has already locked horn with at least 23 countries over border. Even according to China, same has boundary disputes with almost all of its neighbours. Be it Russia, Mongolia, Afghanistan, Tajikistan, Kazakhstan, Kyrgyzstan, North Korea, South Korea, Bhutan, Nepal and India, all neighbouring countries have boundary disputes with China.

China claims entire Island of Japan called Senkaku. It is claiming sovereignty over almost entire South China sea. China has eye on its wealth i.e. minerals and oil. To strengthen its claim, China has developed artificial Islands and stationed its military there.

China knows that Bhutan is no match of its might and will surrender to it, one day. It keeps on exherting pressure and does not leave any occasion to lay its claim, sometimes upon one area and sometimes on other more larger area. Similar happened in our case. Chinese troops keep on trespassing Indian Territory. Their soldiers intrude inside, put signboards, showing our land as Chinese land, they paint on stones writing in Mandarin language, only to create evidence. The troops use to recede, after taking photos, intending to use the same later on, to claim its sovereignty.

When heads of two countries are scheduled to meet, stronger one of them shows some generosity towards other country, by giving some leverage in rules but China goes other way. Whenever Chinese President or any other leader is scheduled to meet head of other country, their press, which is controlled by Chinese Communist Party, starts threatening by writing articles exherting mental pressure upon that country to settle dispute. Their media tries to convince that it will serve its interest to come to terms with China.

China has been playing this tactic with India also since long. Fear psychosis of Nehru let Tibet acceded to China. Similarly, China

**Contact**
Mob. 9910384740

snatched Aksai Chin area from India, without resistance. China kept on intruding and claiming more and more territory, which Indian Govt. in spite of effectively resisting, with the assistance of UNO or other friendly countries, tried to put curtain on it, so that opposition parties may not raise hue and cry. Now, situation has reached brink of war. China considers itself a superpower. Its press and leaders use to threaten India of war at large level, if India does not concede to it. All diplomatic efforts proved futile. Every military level talk is doomed to failure.

Such aggressive stance of China towards India, may create fear in the mind of tiny countries like Bhutan. The latter is no match to almighty China. Same may later or sooner secede Doklam, in lieu of peace on border. If it becomes true, which now appears almost certain, will endanger Indian security. Sacrifices of Indian Army in boldly opposing Chinese efforts in 2017, will go futile.

China is making all efforts to contain India, when found that we have started increasing infrastructure on border with Tibet. It is high time for us, to confront China leaving aside all political differences Mr. J. J. Singh in his recently published book 'The McMohan Line – A Century of Discord" has written clearly that "India needs to enhance its deterrence to a level that any possibility of war becomes prohibitive in the political, economic, diplomatic and military dimension."

True, we can not afford to spend too much to counter China militarily, without throttling social needs. Circumstances have brought some other powerful countries, like USA, Japan, and Australia near us. China is our common enemy now. Self interest remains always a guiding principle in carving foreign policy. In era of cold war, India found USSR nearer to USA. It was former, and than Russia, (after disintegration of USSR) which defended India at world stage, particularly in Security Council. Time is changing its side now. India could not muster, unequivocal support from Russia, against China, when war had almost erupted with it. On the other hand, USA is blaming China since beginning, for waging war against India. It happily provided all support to us. We should not shy away from accepting American help.

During World War- II, it was USA, which dropped nuclear bombs over Japan and destroyed two big cities. Japan befriended USA, and allowed the latter to have military base on its territory. Finding its borders secured, Japan could spend its little resources on its economic upliftment. Japan has become an economic giant now. It is smaller than most of our states and has very less natural resources. We can learn lesson from Japan. Fear of loosing old friend i.e. Russia, has no logic. Rising power of China is danger for Russia also. China has already laid its claim over Vladivostok. It is area which was ceded by China to Russia as a result of Treaty of Aigun of 1858 as well as Treaty of Peking of 1860. Russia cannot go with China without endangering its own integrity. Moreover, modern Russia cares for its economic interest more that old friendship. Even otherwise, coming closure to USA, never means enmity to Russia. We can maintain business relations with latter also.

It is high time for India to give clear direction to its foreign policy. In our effort to ride two boats simultaneously, we may not loose both. It is time to think as how we can secure our boundaries, with the use of minimum resources so that pace of economic growth be also not slowed down.

It is evident from past that India always remained defensive against both of our inimical nations. It encouraged slow aggression on their part . Our enemies take it granted that India will not start any aggressive act. This policy has harmed us a lot. Time is ripe now that we should convey to China that we do not accept Tibet as an integral part of China. Tibet always remained an independent country. Similarly, India can give signal to establish business relationship with Taiwan. All this will be deterrent for China in furtherance of its inimical acts against India.

**Relationship with China & India**

China–India relations, also called Sino-Indian relations or Indo–Chinese relations, refers to the bilateral relationship between China and India. China and India had historically peaceful relations for thousands of years of recorded history. But the tone of the relationship has varied in modern time, especially after the rule of Communist Party in China; the two nations have sought economic cooperation with each other, while frequent border disputes and economic nationalism in both countries are a major point of contention. The modern relationship began in 1950 when India was among the first countries to end formal ties with the Republic of China (Taiwan) and recognise the People's Republic of China as the legitimate government of Mainland China. China and India are two of the major regional powers in Asia, and are the two most populous countries and among the fastest growing major economies in the world. Growth in diplomatic and economic influence has increased the significance of their bilateral relationship.

# Our Ancient Medical System

Our medical works were in ancient era be carefully preserved and trained competent physicians. Both Charaka and Susruta stresss on the characteristics of a good physician, the marks of a quack , the service the former can render to the society and the disaster the latter may bring about. Susruta defines a physician as one who is well versed in the Science of medicine and has attended to the demonstrations of surgery and medicine and who himself practices the healing art and is clean, courageous, light-handed, fully equipped with supplies of medicine, surgical instruments and appliances and who commands a decent practice and is endowed with all moral virtues. Charaka makes a similar qualifications of a good physician. Such a physician must be well acquainted with the anatomy and physiology of the entire body, manifestation and growth of the body and origin and evolution of the universe. He must understand the eight sections of the Ayurveda and apply the knowledge so acquired for the treatment of diseases. A bad physician or a quack, on the other hand has qualities quite the opposite of those given above. Instead of curing diseases he may cause death and torture people like thorns. Quacks are traitors moving about in the guise of physicians when administrative vigilance is lacking. Susruta is equally furious with them when he equates them with 'killers of men out of cupidity'.

Thus, the production of good physicians depends both on qualities and qualifications to the teachers as wells the pupils and therefore utmost care should be exercised in the selection of both the teachers and the taught. Let us first consider the selection of students. For learning medicine caste was no bar. Caraka opined that, in general, the science of life (Ayurveda) can be studied by all for the attainment of virtues, wealth and pleasure (samanayato va dharmarthakama parigrahartham sarviah)

Right to study medicine by any body regardless of caste has also been recognized by susruta with the subtle distinction that a Sudra student at the time of initiation should omit to recite the mantras required on such occasions. More important than caste are the faculties of body and mind –thin lips, teeth and tongue, straight nose, large, honest and intelligent eyes, a contented frame of mind, good character, pleasant speech and good dealing with others, a good retentive memory, clear comprehension and insight into the subject of study. A student deficient in these qualities of faculty and character may not be regarded suitable for admission to a medical course. About the initial education of the entrant, Visweswara Sastries says that a preliminary knowledge of Sad-darshana or at least of Samkhya and Nyayam Vaisesika was considered necessary. The normal age of entrance for medical studies appears to be sixteen by this age he is sufficiently grown up, educated and mature to decide whether he intends to be physician or not.

Just as the teacher should decide the efficiency of his students for a medical course, so the onus of selecting a proper teacher rests with the pupil. Charaka lays down the qualification of a good teacher of medicine as follow : 'An ideal preceptor is he who well grounded in scriptures ; equipped with the practical knowledge , wise, skillful, whose prescriptions are infallible, who is pious, who has all the necessary equipments for treatment, who is not deficient in respect of any of the sense organs, who is acquainted with human nature, and the rationale of treatment, who is free from vanity, envy and anger, who is hard working, who is affectionately disposed towards his disciples and is capable of expressing his view with clarity. A preceptor possessed of such qualities infuses medical knowledge to a good disciple, as the seasonal cloud helps bring about good crop in a fertile land.

After his selection that pupil is introduced to his studies by the usual consecreation ceremony. Here the advise and oath taking are very ellaborate as it involes medical ethics. This reminds us of the Hippocratic oath. The teacher intiates his pupil, by saying that he should observe Brahmacharya and truthfulness, and take vegetable diet to Sharpen his intellect; that he should obey the teacher's instruction, respect him and remain devoted and pleasant to him like his son, servant or supplicant; and that he should act without ego and jealous, but with care affection, modesty, vigilance and undisturbed mind. Then the teacher admonishes him with the following advice in order that he may achieve success in his medical profession eran wealth and fame and attain heaven after death.

You should in all circumstances pay for the well being of cows, brahmanas and all other living beings. Make every effort to cure the patient. You must never bear any ill will towards your patients even at the cost of your life. Do not think of committing adultery ,

nor aspire for any property belonging to others. You should look modest in your appearance and apparel . Do not take wine commit a sin nor help one commit it. In Speech you should be pleasant , poor, righteous, blissful, excellent, truthful, useful and moderate. You should behave according to time, place and your past experience, you should always strive to improve upon your knowledge and stoke of instruments (jnanotthanopaksarana-sampatsu nityam yatnavata ca) . Do not prescribe medicine for person despised by the king or noblemen. Never accept the case of those who are artificial in their behaviour, wicked, not yet absolved of allegation against them and to who are about to die. Do not undertake to treat women in absense of their husbands or guardians. Do not accept any gift from women without concurrence of her husband or guardian. In entering the house of a patient make sure that you are accompanied by a person who knows the house and has secured the permission to enter the premises. You should enter clad and with you head bent down. Then you should concentrate your memory, mind and thinkung, your speech, intellect and senses, soley on the patient and his welfare. You should treat as confidential all information about the patient and his family (nacaturakvalapravettayo bahirniscarayita-vyah). If you apprehended impending death of patient or to his relatives as it may cause a show. Though well grounded in (professional ) knowledge do not brag it to others, for people get irretated to hear self praise even from a saint. Moreever, it is not easy to master the entire science of life (na caiva hyasti sutaramayurvedasya param) Therefor , do not be elated and try all the time to learn something more of this science. One should learn something from every quarter without feeling jealously . For the wise the whole universe is the teacher, only the unwise regard it to be their enemy. A wise physician should therefore accept the advise even of an enemy and adopt the result of his discoveries and observations if they are acceptable to the people and calculated to promote his fame, longevity and prosperity.

The medical instruction and practice usually took six years. Accordingly to the original classification of the subject, as taught to Bharadvaja in vedic times, the course comprised the principles of health and ill health, the aetology, symptomatology and the treatment diseases. Later on Ayurveda was divided into eight angas or branches for the convenience of teaching. Susruta mentions these eight branches as follows : Salyatantra (surgery, general principles) , Salakya-tantra (surgery of regions above the clavicles) kaya-chikitsa(treatment of disease), bhuta-vidya (demoniacal disease) , Kaumara bhrtya (children diseases), agada-tantra(toxicology), rasayana-tantra (Science of rejuvenation), and vajikarana-tantra(Science of aphrodisiacs). In many texts, the subject matter was arranged not in accordance with the above eight angas, but into broad areas, e.g. sutrastana dealing with fundamental principles of ayurveda; saristana, discussing anatomy and physiology , including embryology; nidanasthana dealing with pathology, chikitsasthana, devoted to treatment of diseases etc.

In charaka's time several text books were available but all of them did not attain a good standard . We can infer this from his advise regarding the selection of a good text-book, essential for the successful mastery of the science. Charaka's criteria not only apply to medical texts but to all text books concerning science and technology and are, of general interest. A good text-book is one which is used by reputed physicians and teachers and is full of ideas calculated to contribute to the intellectual growth of the students. Such a book must be free from the faults of tautology and contradictions as also from vulgar, difficult and ambiguous expressions. A good book gives clear definitions (of aetiology, symptomatology and therapeutics) and illustrations and deals with ideas and concepts, which can be grasped quickly and without confusion. A good book of this prescription dispels ignorance like the bright sun dispelling darkness and illuminating everything (sastram hyevamvidhamala ivadityastamo- vidhuya prakasyati sarvam).

In the daily learning exercise, the teacher selected one full verse, or one half or one fourth of it, according to the capacity of the student, and recited, parapharased and explained the same to him. The student then repeated the whole process. The passage or verses were not to be recited too hastily nor in a timid or faltering voice, nor even with a nasal intonation. According to charaka the pupil should repeat his recitation with a view to removing his own deficiencies, and this practice should continue in the noon, in the afternoon and at night without any break. Memorization was clearly insited upon as the case of all sciences, but not learning by rote. Susruta strongly discouraged learning by rote, without understanding and stated that it was like the ass carrying a load of sandalwood. "As the ass which carries the load of sandalwood perceives the weight but not the fragrance of the sandal so the dunces who study numerous sastras without under –standing their meaning bear their weight only."

For a proper understanding of medical science, Charaka advised regular seminars and friendly discussions. The discussions will help the physicians develop their powers of application and clarity of knowledge . Only if the discussions are friendly and free from

hostility can they get the fullest benefit.

The emphasis on practical training is clearly underlined by susruta in his instructions on the development of surgical skills among pupils. A pupil who is well read in the text book and grounded in the principles of Ayurveda, but not initiated in surgical skills and practice of medicine is not competent to undertake either the medical or the surgical treatment of a disease. For the attainment of surgical skills the pupil must learn specific forms of incision by making cuts in the body of a fruit, gourd (alavu), watermelon, cucumber etc. The art of making incisions should be demonstrated by performing neat openings in the body of a full water bag or in the bladder of a dead animal or in the side of a leather pouch filled with smile or water. Scrapping should be practiced on a piece of skin from which hairs were not removed. The vein of a dead animal or stem of a lotus should be used for acquiring the skill of venesection (vedhya). Cauterization or application of alkaline preperations should be demonstrated on a piece of a soft flesh. There are several other surgical operations of which practical learning methods have been described. A physician who thus becomes well versed in the principles of surgery as well as experienced in the practice of medicine is alone capable of curring distempers; just as alone capable of curing distempers; just as a two wheeled cart is of service in a battle field so is such a physician expected to achieve victory in his fight against disease.

After having mastered the science of medicine, both theoretically and by practical experience of surgery and medicine, the young physician should now seek the permission of the king of the country, for commencing his medical and surgical practice. Susruta's clear statement in this regard shows that there was some thing like the licensing and registration of practioners in order to distinguish between licensed qualified practitioners and unlicensed quacks. In the same section susruta gives instructions on the dress and demeanour of the physician. The physician, he says should wear white garments, put on a pair of shoes, carry a stick and an umbrella in his hands, and walk about with a mild and benignant look as a friend of all created things ready to help all and frank and friendly in his talk and demeanour.

Both Charaka and Susruta laid emphasis on the need for nursing in the sucessful treatment of the patient. According to Charakas there are four aspects of treatment or therapeutics namely the physician, the medicament, the attendant (upasthata) and the patient himself. The good attendant's qualifications should be the knowledge of nurshing (upacarajnata) , dexterity (daksyam), affection(anuraga) and purity (saucam). Susruta holds the same opinion that the physician, the patient, the medicines and the attendants are the four essential factors in medical treatment. If the physician be qualified, the patient self controlled , medicines genuine and the attendant's intelligently watchful, then even a serious case is readily cured. About the attendant he further says that a person who is cool-headed and pleasant in demeanors does not speak ill of ohters, attends readily and willingly to the needs of the patient , and strictly follows the instruction of the physician alone is fit to attend the bed side of the a patient.

The Mahavagga prescribed a good nurse, should possess five qualities, that is (1) he should be capable of giving medicines (as directed by the physician), (2) he should know the patient the best suitable diet and serve with such diet. (3) he should wait upon the sick of love and not out of greed (4) he should not have unwillingness to remove the evacuation, saliva and vomitted matter and (5) he should be capable of teaching and gladdening the patient with religious discourses. The medical texts are silent on the question of training of nurses but the qualification detailed clearly envisage some from of training . Buddhist sourcess also provide some information about nurshing .

We also find intersesting statements about the duties and responsibilities of physician must be responsible for the protection of life the king and also of the royal army particularly during war. There were always the dangerous of secret poisoning when a king mobilized his armies to attack a neighboring ruler. In such cases the enemy usually had recourse to the common practice of poisoning road side wells, articles of good cattle fodder and shady resting places. The army physician marching with king must examine and purify all these things in accordance with the method discussed in chapter entitled kalpa sthanam . Moreover , the physician should live in a camp near the royal pavilion fully equipped with instruments and medicines. He must be ready to treat anybody in the army wounded by arrows or other projectiles or suffering from the efferts of imbibed poison.

# विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की अखिल भारतीय साधारण सभा जोधपुर में सम्पन्न

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की साधारण सभा बैठक हनुवन्त आदर्श विद्या मन्दिर, वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय जोधपुर (राजस्थान) में दिनांक 18-19 सितम्बर, 2021 संस्थान के अध्यक्ष डॉ. दूसी रामऔष्ण राव की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक के प्रारम्भ में मंचासीन अधिकारियों के परिचयोपरांत दिवंगत ज्येष्ठ-श्रेष्ठ कार्यकर्ताओं एवं राष्ट्र व समाजहित में कार्य करने वाले स्वर्गवासी हुए बन्धु-भगिनियों को श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

महामंत्री महोदय द्वारा संस्थान का गत सत्र का वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया, जिसमें कोरोना काल के अन्तर्गत लॉक-डाउन अवधि में क्षेत्रीय व प्रान्तीय समितियों द्वारा प्रतिकूल परिस्थितियों में ऑनलाइन शिक्षण, विभिन्न गतिविधियों का संचालन एवं समाज सेवा के कार्यों का उल्लेख किया गया।

अ.भा. सह संगठन मंत्री मा. यतीन्द्र शर्मा ने अपने प्रास्ताविक उद्‌बोधन में गत सत्र में किये गये कार्यों की समीक्षा एवं आगामी योजना पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि कोरोना महामारी के प्रोटोकॉल के कारण इस साधारण सभा में अनेक कार्यकर्ता आभासी रूप से भी जुड़े हैं। विद्यालय लम्बे समय के बाद खुल रहे हैं। महामारी की विकट परिस्थितियाँ अभी टली नहीं हैं, इसलिए हमें सजगता के साथ कार्य करना है। कोरोना काल में अनेक अच्छाइयाँ भी स्थापित हुई हैं, जैसे सादगी भरा जीवन, परिवार भाव की सुदृढ़ता, स्वदेशी भाव व सहयोग भाव का विकास, पौष्टिक आहार, स्वच्छता की चिंता करना आदि। इस काल में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रयोग हुए हैं, जैसे तकनीकी का उपयोग, ई पाठशाला, ग्राम पाठशाला, बस्ती पाठशाला। यह आगे भी बने रहना चाहिये। हमने उत्सव-त्योहार, जन्मदिन आदि विशिष्ट पद्धति से मनाने की परम्परा विकसित की है, इसी प्रकार आचार्य, दीदी भैया-बहिन जैसी शब्दावली भी विकसित हैं। इनका स्मरण कर इन शब्दों का प्रयोग करना चाहिये।

साधारण सभा द्वितीय सत्र में गत बैठक की कार्यवाही का वाचन किया गया। सभी सदस्यों ने ॐ की ध्वनि से इसे अनुमोदित किया। कोरोना कालीन सेवा कार्यों की गतिविधियों का वीडियो (Documentary), कोरोना सेवा कार्य-ई-पेपर, 'बाल क्रान्तिकारी' पुस्तक का विमोचन मंचासीन अधिकारियों द्वारा किया गया। मा. अवनीश भटनागर, अखिल भारतीय मंत्री द्वारा पुस्तक का संक्षिप्त परिचय कराया गया। उक्त सत्र में क्षेत्रीय बैठकों के पश्चात् अनुवर्ती प्रयास के अन्तर्गत वर्तमान आर्थिक स्थिति, वर्तमान कार्य विवरण, कार्य विस्तार हेतु योजना, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के क्रियान्वयन के लिए अनुवर्ती प्रयास व आचार्यों का प्रशिक्षण व विकास, हमारा संगठन समाजोन्मुखी हो इसके लिए क्रियान्वयन की योजना, अपने कार्य के छः आयाम यथा विद्वत् परिषद्, शोध, संस्कृति बोध परियोजना, पूर्व छात्र व सुदृढ़ वित्तीय स्थिति हेतु कुशलप्रबन्धन आदि विषयों पर विचार हुआ। 6-8 जुलाई 2021 तक दिल्ली में सम्पन्न शिक्षक-प्रशिक्षक कार्यशाला के पश्चात् विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण हेतु कार्यशालाओं की जानकारी ली गई।

तृतीय सत्र में संस्थान की उपाध्यक्ष डॉ. रमा मिश्रा ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि कोरोना की भयावह स्थिति के बाद प्रत्यक्ष उपस्थिति को देखकर आनन्दित वातावरण की अनुभूति हो रही है। कोरोना काल में विद्या भारती के अलावा अन्य क्षेत्रों में भी आर्थिक स्थिति दयनीय बनी है, फिर भी ऐसी स्थिति में भी हमारा कार्य स्थापित है। वित्त को केवल आर्थिक स्थिति से ही न जोड़ें, यह व्यवस्था का भी हिस्सा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप व्यवस्थाएँ, मापक बिन्दुओं की पूर्ति पर विचार किया जाना चाहिये। मूल्यांकन की दृष्टि से SESQ के मापक बिन्दुओं के अतिरिक्त भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के लिए मूल्यांकन बिन्दु जुड़ेंगे। शोध कार्य एवं विद्वत् परिषद् का समन्वय रखते हुए कार्य की योजना बनावें। 360 डिग्री की मूल्यांकन प्रक्रिया में विद्यार्थी, आचार्य, अभिभावक अप्रत्यक्ष रूप से हमारे सामने हैं। हमने जो स्वप्न देखा इसके अनुरूप विद्यालय खड़े हों इसकी समीक्षा व तैयारी करनी है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के सन्दर्भ में संस्थान के सह संगठन मंत्री मा. गोविन्द जी महन्त ने बताया कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 29 जुलाई 2020 को लागू हुई, समयावधि भी तय हुई है। इस विषय के सन्दर्भ में शिक्षक प्रशिक्षण वर्ग केन्द्र से निचले स्तर तक आयोजित हो रहे हैं। उन्होंने बताया कि 25 एरिया पर कार्य होगा। ECCE में विद्या भारती के अनुरूप सामग्री आए, इसके लिए सामग्री निर्माण करके देना तथा सतत सम्पर्क रखना आवश्यक है।

चतुर्थ सत्र में अ.भा. संगठन मंत्री मा. काशीपति जी ने अपने सम्बोधन में कहा कि वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप हमारे अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार की गतिविधियों की क्रियान्विति हुई है। इस बदले हुए परिवेश में आधारभूत विषयों, जनजाति क्षेत्रों, बालिका शिक्षा,

ग्रामीण शिक्षा आदि के विषय में नए सिरे से चिंतन कर अद्यतन करना चाहिए। शारीरिक शिक्षा को लेकर हमारे द्वारा किये गए प्रयत्नों के अच्छे परिणाम मिलने प्रारम्भ हुए हैं। संघ में कुटुम्ब प्रबोधन, सामाजिक समरसता एवं पर्यावरण, ये तीन गतिविधियाँ है। विद्या भारती में भी इन गतिविधियों की क्रियान्विति कैसे होगी इसकी योजना बनानी चाहिए।

**द्वितीय दिन 19 सितम्बर 2021**

प्रचार विभाग की टोली के सदस्य श्री रवि कुमार जी ने बताया कि केन्द्रीय संवाद केन्द्र, दिल्ली द्वारा **'न्यूज माइनिंग'** का कार्य प्रारम्भ किया है। इस में पाँच चेप्टर के अन्तर्गत Digital Platform पर प्रकाशित समाचारों को खोजा जाता है -1. Vidya Bharati in News, 2. Educational News, 3. Mother Language News, 4. Sanskrit News , 5. National Education Policy News. इसके बाद एक साप्ताहिक रिपोर्ट, जिसमें अनुमानित 50 से 60 पृष्ठ होते हैं, बनाकर प्रान्त स्तर तक के कार्यकर्ता को भेजी जाती है। इस रिपोर्ट से content निर्माण भी किया जाता है।

**अ.भा महामंत्री मा. श्रीराम आरावकर** ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि एक लम्बे अन्तराल के बाद कुछ प्रान्तों में विद्यालयों में कक्षा प्रथम से एवं अधिकांश में कक्षा 6 से छात्रों को विद्यालय आने की स्वीकृति मिली है। प्रारम्भिक ज्ञान, पारम्परिक खेल एवं आधारभूत ज्ञान को लेकर ब्रिजकोर्स तैयार किया है। विशेष वर्ग लगाने एवं अवधारणा स्पष्ट करने की योजना है। ई पाठशाला के माध्यम से 10 दिन से 15 दिन तक के वर्ग लगाकर अवधारणा स्पष्ट करने का प्रयत्न है। ऑनलाइन व बस्ती विद्यालय चल रहे है, शिशुओं के लिए अभिभावकों द्वारा 'कैसे पढ़ाना' से सम्बन्धित विडियो बनाकर भेजे जा रहे है। अवधारणा स्पष्ट करने के लिए आचार्य प्रशिक्षण की योजना है। हमारे आचार्य कण्टेंट बनाते है व छात्रो को भेजते है। अपना घर अपना विद्यालय योजना में बड़े बच्चे छोटो को पढ़ाते है। पुरे पाठ्यक्रम के विडियो बनाए है। गृह पाठशालाएँ चल रही हैं, सप्ताह में एक बार नोट बुक जाँच करते है। पाठ्यक्रम की आधारभूत बातें विद्यार्थी को समझ में आना अधिक महत्वपूर्ण है। तत्पश्चात् सभी प्रान्तों से सत्र 2019-20 के उपरान्त छात्रसंख्या वृद्धि की जानकारी प्राप्त हुई।

अ.भा. कोषाध्यक्ष श्री जैनपाल जी जैन द्वारा अंकेक्षण प्रतिवेदन एवं अर्थ संकल्प अनुमोदन हेतु प्रस्तुत किया गया। सामान्य विचार-विमर्श के उपरान्त सभी ने एक स्वर में ॐ का उच्चारण कर बजट का अनुमोदन किया।

**कौशल विकास के सन्दर्भ में मा. जैनपाल जैन ने बताया** कि दिल्ली प्रान्त में माह के अंतिम दिन Skill Day के रूप में रखकर बस्तारहित विद्यालय में Skill Activities कराई जाती हैं। सरकार की ओर से जन शिक्षण संस्थान खोलने की योजना है जिसमें विभिन्न प्रकार के कौशल विकास केन्द्र होते है। अभी विद्या भारती को चार स्थानों पर इन केन्द्रों को खोलने की स्वीकृति प्राप्त हुई है। कुछ प्रान्तों मे भी **'जन शिक्षण संस्थान'** खोलने की योजना बनानी है। 'जन शिक्षण संस्थान' NIOS (National Institute of Open Schooling) की परीक्षा आयोजित कराने के लिये अधिकृत होते हैं।

**राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह सरकार्यवाह मा. कृष्ण गोपाल जी** ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि विद्या भारती के विद्यालयों ने 60-70 वर्षों में समाज में धीरे-धीरे प्रतिष्ठा प्राप्त की है। इन विद्यालयों में निकले विद्यार्थी आज समाज में विभिन्न पदों पर पहुँचे है। उनके आचरण से अपनी प्रतिष्ठा बढ़ी है। राजनैतिक क्षेत्र के बहुत से दल विद्या भारती की व पूर्व विद्यार्थियों की मंच पर तो आलोचना करते है किन्तु अन्दर ही अन्दर प्रशंसा भी करते हैं। हमारे सभी आचार्यों ने इस संकट के काल में भी कम वेतन लेकर निरन्तर साधना के रूप में सहयोग किया है। समाज व अभिभावकों का भी सहयोग मिला। अब हमारी प्राथमिकताएँ बदल गई हैं। सारे देश में अंग्रेजी का वातावरण बना हुआ है ऐसी स्थिति में हमारी गुणवत्ता बनाए रखना भी एक चुनौती है। हमारी चुनौतियाँ भिन्न-भिन्न हो सकती है किन्तु उद्‌देश्य समान है - **'गुणवतापूर्ण बालक का निर्माण'**। हमारे विद्यार्थियों को जातिगत भेद प्रभावित नहीं करता, टैक्सी चालक को घर बुलाकर चाय पिलाने में कोई समस्या नहीं होती। विद्यालय की गुणवता के लिए इन चार आयमों पर विचार करना है। **इन्फ्रास्ट्रक्चर (संसाधन) :** भवन, लाईब्रेरी, लेब, मैदान, संगीत कक्ष आदि। **गुणवत्तापूर्ण आचार्य :** आधुनिक संसाधनों के साथ अच्छे से अच्छा पढ़ाने वाले आचार्य होने चाहिये, घोष के लिए, संगीत के लिए, अंग्रेजी के लिए अच्छे आचार्यों की नियुक्ति हो। हमारे विद्यालयों में अन्य विद्यालयों की अच्छाईयों को कैसे ला सकते है। हमारे अभिभावकों को हमारी शिक्षा में कैसे सहयोगी बनाएँ, हमारी मुख्य आत्मा संस्कार है इसे ध्यान में रखते हुए हम आगे बढ़ रहे है। हमारे विद्यालयों में 15-20 प्रकार के आधुनिक खेलों की व्यवस्था हो। हमारे विद्यालय में English Language की लेब है क्या? हमारे हॉल Sound Proof है क्या? हमारे विद्यालय का नक्शा हमारे अनुसार होना चाहिए। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की तरह हमारा विद्यालय भी अलग से दिखना चाहिए। अंग्रेजी माध्यम के हमारे विद्यालयों में भी हिन्दी को कोई महत्व नहीं देते ऐसा क्यों ? हमारे विद्यालय बहुआयामी होने चाहिए केवल पढ़ाई केन्द्रित नहीं। हमारे समिति के लोग समाज से माँगना भूल न जाए इस हेतु दिशा देनी है। फीस के पैसो से भवन खड़े नहीं करने हैं। हमारे आचार्यों की गुणवत्ता लगातार बढ़ती रहे। कितने विद्यालयों में खेलों के कोच है, कितनी जगह संगीत आचार्य है ? हमारे समिति के सदस्य भीक्षावृति में माहिर होने चाहिए।।

बच्चे पर जितना अर्थ का भार बढ़ेगा उतना संस्कार पक्ष कम होता जाएगा। अपने पूर्व विद्यार्थियों के साथ अच्छे संबंध रखे उनके मन में समाज ऋण का बोध जगाएँ। हमारे 8 लाख में से 5000 छात्रों को भी अपने कार्य में जोड़ दे तो हम सफल होंगे। बसंत पंचमी पर इनके समर्पण कार्यक्रम हो इसका प्रयत्न हो। हम समाज की सज्जन शक्ति का उपयोग कर, विद्यालय चयन कर अपने क्षेत्र के प्रथम विद्यालय बनाने के लिए प्रयत्न करें हर वर्ष मूल्यांकन करें।

**अष्टम् सत्र में अ.भा. मंत्री मा. शिवकुमार जी** ने विज्ञान विषय पर अपने उद्‌बोधन में बताया कि विज्ञान प्रसार द्वारा ऑनलाइन गतिविधि संचालित करने के लिये **''इण्डिया साइंस चैनल''** लांच किया है। इसके माध्यम से विज्ञान की गतिविधियाँ प्रारम्भ करना है। **इण्डिया साइंस चैनल** के माध्यम से प्रत्येक विद्यार्थी प्रतिभागी हो सकता है, उसको प्रतिभागिता का प्रमाणपत्र भी मिलेगा। इस चैनल पर आचार्य अपने विषय को अपलोड कर सकता है। विद्यालय को इमेंजिग साइंस चैनल पर जाकर आचार्य द्वारा उनके मोबाइल नम्बर के माध्यम से पंजीयन किया जाएगा। विद्यार्थी अपने आचार्य के माध्यम से इससे जुड़ सकेगा।

आजादी के अमृत महोत्सव को लेकर अपने प्रान्त में क्या-क्या गतिविधियाँ शुरू हो गई हैं ? इस विषय पर निम्नलिखित बातें प्रमुख रूप से उल्लिखित की गईं। 15 अगस्त 2021 आजादी महोत्सव के गीत का अभ्यास, विद्यालय स्तर पर प्रभावी कार्यक्रम करना। प्रश्नोत्तरी हेतु आचार्य, विद्यार्थी, अभिभावक के लिए योजना बनी। कक्षा शिक्षण में छोटे-छोटे प्रोजेक्ट बनाने की योजना बनी है। प्रतिदिन एक स्वतंत्रता सेनानी या महापुरूष का चित्र व जीवन परिचय लिखकर भेजना। स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु हमारे जिले में जो योगदान दिया गया, इसकी जानकारी तैयार करना। शिक्षा जगत् में सभी को जोड़ने के लिए बाल क्रान्तिकारी पुस्तक से सभी को अधिक से अधिक जोड़ना। शहीद परिवार के लोगों को संरक्षण की योजना बनी। भारतमाता पूजन करना। ढाई माह से प्रति दिन 5-5 प्रश्नों की प्रश्नोतरी व्हाट्सएप्प के माध्यम से भेज रहे है। प्रान्त स्तर पर निबंध प्रतियोगिता तय कर उसकी तैयारी भैया/बहिन कर रहें है।

समापन सत्र में सर्वप्रथम अ. भा. मंत्री डॉ. मधुश्री संजीव सावजी द्वारा वर्तमान साधारण सभा बैठक का संक्षिप्त प्रतिवेदन सदन के समक्ष रखा गया। इसके उपरान्त संस्थान के अखिल भारतीय महामंत्री श्रीराम आरावकर जी के द्वारा सभा में उपस्थिति प्रतिनिधियों के लिए आभार व्यक्त किया गया और सुन्दर व सुव्यवस्थित व्यवस्था हेतु धन्यवाद ज्ञापित किया गया। विद्या भारती के आगामी कार्यक्रमों की जानकारी से सभा को अवगत कराया गया।

**अखिल भारतीय अध्यक्ष मा. डी. रामकृष्ण राव जी** ने अपने **अध्यक्षीय उद्‌बोधन** में कहा कि कोरोना महामारी के कारण गत डेढ़ वर्ष का समय शिक्षा में आपात्काल जैसा था। लॉकडाउन की उस अवधि में भी हमारे विद्यालयों में उपक्रम चलते रहे। प्रवास व सेवा कार्य भी चलाए गए। शिक्षा जारी रखने हेतु हम सभी प्रयोगशील रहे और विद्यालयों में वर्चुअल कक्षाएँ संचालित कर विद्यार्थियों के शिक्षण की व्यवस्था बनाने का प्रयास किया। शिक्षण के अन्तर्गत बेसिक नॉलेज रखना तथा प्रारम्भिक ज्ञान पर विशेष जोर देना आवश्यक है। शिक्षण के साथ Basic Learning Activities करना चाहिये। आचार्य विकास योजना राष्ट्रीय शिक्षा नीति के आधार पर बनाकर क्रियान्वित करना। आचार्यों के वर्ग आयोजित कर उन्हें नई तकनीकी से अपडेट करना आवश्यक है। आचार्यों को राष्ट्रीय शिक्षा नीति व अन्य महत्वपूर्ण साहित्य का अध्ययन करना अति आवश्यक है। आचार्य प्रशिक्षण विद्या मंदिर व सरकारी तंत्र से तालमेल कर आयोजित होंगे। कम्प्यूटर, मल्टीमीडिया की जानकारी, हम सब को होनी चाहिए। आचार्यों के साथ-साथ समिति कार्यकर्ताओं को भी प्रशिक्षित करना आवश्यक है। प्रांत स्तर पर प्रशिक्षण का केन्द्र स्थापित करना आवश्यक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में प्रारम्भ में बहुत मेहनत करना आवश्यक है। विद्वत् परिषद् को मजबूत करना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के नियमावली, शब्दावली का अध्ययन बार-बार करना है। क्रियान्वयन योजना पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

**अध्यक्षीय उद्‌बोधन के पश्चात् राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह सरकार्यवाह डॉ. कृष्णगोपाल जी** का समापन सत्र में पाथेय प्राप्त हुआ। अंत 'वन्दे मातरम्' गायन के साथ साधारण सभा सम्पन्न हुई।

# गतिविधि

## भारतीय संस्कृति के भाव को विद्या भारती तेजी से आगे बढ़ा रही है।

**– अर्जुनराम मेघवाल**

विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान की योजना के अनुसार अखिल भारतीय संस्कृति महोत्सव 2021 का आयोजन विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान के तत्वावधान में 19-20 नवम्बर 2021 को आयोजित किया गया। महोत्सव का आयोजन आभासी माध्यम से हुआ जिसमें सम्पूर्ण भारत से छात्र भैया-बहिनों, आचार्यों ने कथा-कथन तात्कालिक भाषण, आचार्य पत्र वाचन प्रतियोगिताओं में प्रतिभागिता की अखिल भारतीय संस्कृति महोत्सव का शुभारम्भ 19 नवम्बर 2021 को हुआ, जिसमें मा. श्री अर्जुनराम मेघवाल संसदीय कार्य व संस्कृति राज्य मंत्री आभासी माध्यम से मुख्य अतिथि थे। उन्होंने समारोह में देशभर से जुड़े छात्रों, आचार्यों एवं समाज के अन्य वर्गों को संबोधित करते हुए कहा कि वर्तमान सरकार भारतीय संस्कृति को प्रसारित करने और संरक्षित करने के लिए प्रतिबद्ध है। हमारी संस्कृति संरक्षित भी हो, हम उसे विकसित भी करें और भारतीय संस्कृति का देश विदेश में मान-सम्मान भी बढ़े, यह सरकार का प्रमुख लक्ष्य है।

उन्होंने आभासी रूप से आयोजित किए जा रहे अ. भा. संस्कृति महोत्सव को उद्धृत करते हुए कहा कि कोरोना काल में भी भारतीय संस्कृति उजागर हुई है। ऐसा आपदा को अवसर मानकर देखा जा सकता है। हमारे परिवार में क्या भावनाएँ होनी चाहिए, यह भाव आगे बढ़ा। हमारी दादी, नानी, माँ, पिता जी से ज्ञान भी मिल सकता है, यह भाव आगे बढ़ा। इसमें भारतीय संस्कृति को महत्वपूर्ण स्थान मिलता है। उन्होंने कहा कि भारतीय संस्कृति के भाव को विद्या भारती तेजी से आगे बढ़ा रही है। हम तेजी से आगे बढ़ सकते हैं और भारतीय संस्कृति विश्व में महान बन सकती है ऐसी मेरी कल्पना ही नहीं मैं इसे साकार होते हुए देख रहा हूँ।

19 नवम्बर को उद्घाटन समारोहपरांत कथा-कथन के शिशु वर्ग एवं अपराह्न बाल वर्ग की प्रतियोगिताएँ हुईं। जिनमें छात्र भैया-बहनों ने प्रेरक ऐतिहासिक, पौराणिक आख्यान एवं प्रेरक लोककथा पर आधारित अपनी कथा प्रस्तुत की। सायंकालीन सत्र में आचार्य पत्र-वाचन हुए। जिनमें आचार्यों ने भारतीय संस्कृति के विभिन्न विषयों पर अपने पत्र पढ़े। 20 नवम्बर को किशोर एवं तरुण वर्ग की तात्कालिक भाषण की प्रतियोगिताएँ हुई। इनमें प्रतिभागिता कर रहे छात्रों को समसामयिक विषयों पर उसी समय एक विषय दिया गया जिस पर उन्होंने अपना भाषण प्रस्तुत किया। इस महोत्सव में प्रत्येक सत्र के तीन निर्णायक रहे। 20 नवम्बर को अपराह्न समापन समारोह का आयोजन रहा जिसमें मुख्य अतिथि विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान के महामंत्री श्री राम आरावकर जी थे। समापन अवसर पर संस्कृति महोत्सव का वृत्त के बाद अतिथि उद्बोधन एवं शिशु, बाल, किशोर व तरुण वर्ग के परिणामों की घोषणा की गई। आचार्य पत्र वाचन में सभी को प्रोत्साहित किया गया। ओवरऑल चैम्पियनशिप विद्या भारती पूर्वी प्रदेश क्षेत्र को प्रदान किया गया।

प्रस्तुति – श्री रामेन्द्र सिंह, निदेशक, विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान

## विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान की द्विदिवसीय कार्यशाला सम्पन्न

विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान के दायित्ववान् कार्यकर्ताओं की द्विदिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला दिनांक 11 एवं 12 सितम्बर 2021 को राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान नोएडा के सभागार में सम्पन्न हुई। इस कार्यशाला में उच्च शिक्षा से सम्बन्धित विषयों यथा समृद्ध राष्ट्र एवं व्यक्ति निर्माण, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की भूमिका, इंटीग्रेटेड टीचर्स एजुकेशन प्रोग्राम, विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान के वैचारिक अधिष्ठान, प्रांतों में उच्च शिक्षा संस्थानों के साथ विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान का नेटवर्क खड़ा करने, संस्थागत पंजीयन के माध्यम से शासकीय एवं निजी संस्थाओं को विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान से जोड़ने, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी के विषयों पर कार्य करने हेतु शोध संस्थान स्थापित करने, अकादमिक कौंसिल की संरचना एवं उसके कार्य जो संस्थाएँ विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान के साथ कार्य करने हेतु पंजीयन व उनके लिए न्यूनतम साझा कार्यक्रम, प्रशिक्षण कार्यक्रम, शोध एवं प्रकाशन आदि विषयों पर अलग-अलग सत्र लिए गए।

कार्यशाला के उद्घाटन सत्र में केन्द्रीय शिक्षा राज्यमंत्री श्री सुभाष सरकार एआईसीटीई के चेयरमैन प्रो. अनिल सहस्रबुद्धे, विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रो. कैलाशचन्द्र शर्मा, राष्ट्रीय मंत्री प्रो. नरेन्द्र कुमार तनेजा व एन. आई. ओ. एस. के अध्यक्ष प्रो. सरोज शर्मा मंचासीन थे। कार्यशाला में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सहकार्यवाह डॉ. कृष्णगोपाल जी का मार्गदर्शन, श्री के. एल. रघुनंदन जी, श्री नागराज रेड्डी जी का सानिध्य प्राप्त हुआ।

विद्या भारती के अखिल भारतीय संगठन मंत्री व अखिल भारतीय कोषाध्यक्ष तथा ब्रज प्रांत के पदाधिकारी पूर्व छात्रों (सी.ए.विभाग) के साथ

विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान द्वारा आयोजित अखिल भारतीय संस्कृति महोत्सव २०२१ के अवसर मंचस्थ पदाधिकारी वृन्द

विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान की कार्यशाला (दिनांक 11-12 सितम्बर 2021) में माननीय डॉ.कृष्णगोपाल जी का अभिनंदन

ISSN 2395 - 6267  RNI NO. 37111/1981

# अरुण यह मधुमय देश हमारा ।

अरुण यह मधुमय देश हमारा ।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा ।।
सरस तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरुशिखा मनोहर ।
छिटका जीवन हरियाली पर - मंगल कुंकुम सारा ।।
लघु सुरधनु से पंख पसारे - शीतल मलय समीर सहारे ।
उड़ते खग जिस ओर मुँह किए - समझ नीड़ निज प्यारा ।।
बरसाती आँखों के बादल - बनते जहाँ भरे करुणा जल ।
लहरें टकरातीं अनन्त की - पाकर जहाँ किनारा ।।
हेम-कुम्भ ले उषा सबेरे - भरती ढुलकाती सुख मेरे ।
मंदिर ऊँघते रहते जब - जगकर रजनी भर तारा ।।
अरुण यह मधुमय देश हमारा ।

- जयशंकर प्रसाद

i|dk’kd ,o end % श्रीराम आरावकर के द्वारा विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान (स्वामी) के लिए जेनिसिस प्रिंटर, सी 74, ओखला इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली–110020 (प्रेस) से मुद्रित एवं प्रज्ञा सदन, जी. एल. टी. सरस्वती बाल मंदिर परिसर, नेहरू नगर, नई दिल्ली–110065 (प्रकाशन स्थल) से प्रकाशित।
lEikn d–डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी